Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

॥ आ३म् ॥

जन ज्ञान

बोध-रात्रि

-महाकाव्य-

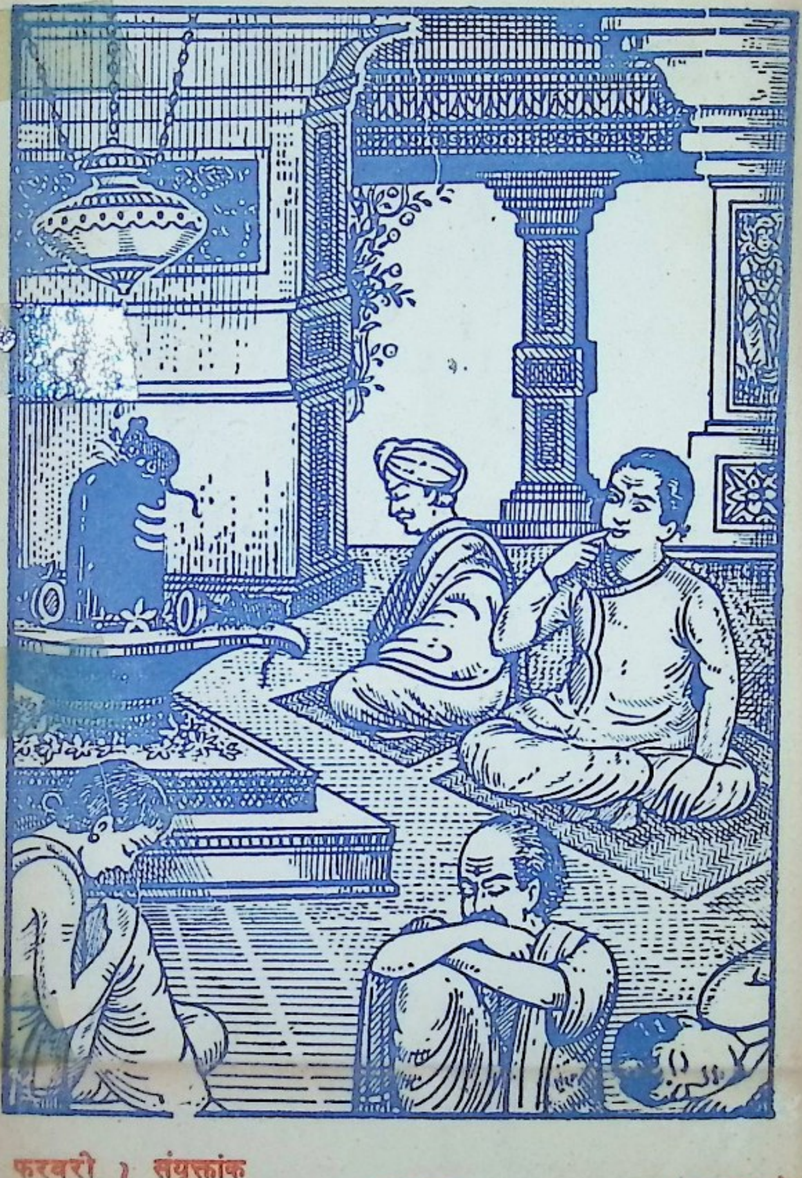

फरवरी } संयुक्तांक
मार्च } १९७२

मूल्य ३)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

[illegible]

का महान् कार्य

सफलता के लिए

आप का सहयोग

चाहता है—

●

शिवरात्रि के दिन

व्रत रख कर भी

वेद-प्रचार के लिए

अपनी आहुति भेजिए—

प्रकाशक—

दयानन्द संस्थान

नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पंजीकृत ट्रस्ट

दयानन्द संस्थान

नई दिल्ली का प्रकाशन

जन-ज्ञान

(मासिक)

सम्पादक

—राकेश रानी

दूरभाष: ५६६६३९

पता—

१५६७ हरध्यानसिंह मार्ग

निकट ३१-नाईवाला

करौल बाग, नई दिल्ली

वार्षिक मूल्य १२)

विदेश में—एक पौंड

आजीवन—२०१)

वर्ष ५ : अंक ८-९

फरवरी-मार्च १९७३

कैसा जीवन ?

किसे पता है, जीवन पथ का
अंत कहाँ, कब होगा ?
कौन जानता है, मंजिल का,
लक्ष्य कहाँ पर होगा ?

चलते जाना ही जीवन है,
रुक जाना है मृत्यु विराम !
कहां मिलेगा, कौन जानता,
जीवन-रथ को कब विश्राम !

बढ़ते जाते चरण हमारे,
निशि वासर प्रहरों में प्राण !
प्राण हीन कब होगा पंछी,
अन्त हीन होगा अभियान !

जो भी हो, चलना है हम को,
बढ़ना ही सपनों का गीत !
प्यार शान्ति से, प्यार शून्य से,
हार नहीं सकता है मीत !

मेरे साथ चलो तुम साथी,
आने दो बाधा तूफान !
मृत्यु वरण तक चरण हमारे,
रोक नहीं सकता भगवान् !

प्रभु के पथ पर बढ़ना जीवन,
प्रभु के रथ पर चढ़ना जीवन ?
जीवन के हित लड़ना जीवन,
आओ देखें अपना जीवन,
कैसा जीवन ?

—भारतेन्द्र नाथ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

केवल ११) में

स्वामी वेदानन्द जी वाला बड़ा मोटे अक्षरों वाला सत्यार्थ प्रकाश "जन-ज्ञान" के सदस्य मंगा सकते हैं। अधिक से अधिक ५ प्रतियां भेजी जाएंगी।

चारों मूल वेद सजिल्द

आप को १२) में मिल सकते हैं। डाक व्यय पृथक होगा। घर-घर में वेद पहुँचाइए।

सत्यार्थ प्रकाश (राज-संस्करण)

अब अधिक से अधिक मंगाइए और प्रचार कीजिए २२५) सैकड़ा

संपादक—श्री अमर स्वामी जी व अन्य प्रतिष्ठित आर्य विद्वान्

देरी न करें आज ही अपना आदेश भेज
वेद-प्रचार में लगें

जन - ज्ञान - प्रकाशन

१५९७, हरध्यानसिंह मार्ग नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

संपादकीय

शहनाइयाँ बजाओगे
या
मातमी धुन ?

बोध रात्रि के पर्व पर, मूलशंकर के जागरण की वेला में, एक प्रश्न चिन्ह······उन सभी से, जो अपने को ऋषि दयानन्द का अनुयायी कहते हैं—

मरना चाहते हो या जीना ?
अमरता चाहते हो या सर्वनाश,
निर्माण चाहते हो या ध्वंस ?

प्रश्नों को आप के सम्मुख रखकर हम आप से इन का उत्तर चाहते हैं। यह जानते हुए भी कि ठीक उत्तर देने का साहस और सामर्थ्य आप खो चुके हैं।

आर्यसमाजों के अधिकारी जिस कुम्भकरणी नींद में सोए हैं वह टूट सके, इसका उपाय हमारी समझ में नहीं आता। "ऋषि दयानन्द की जय" शब्दों में बोलने वाले जिस निर्भयता से दयानन्द की हत्या कर रहे हैं वह इतिहास का अत्यन्त कलंकित अध्याय है। विशाल भवनों में बैठे आर्यसमाज के चन्द सदस्य गद्दियों से चिपके रहने के अतिरिक्त और क्या कर रहे हैं ?

आर्यसमाजों के पास अपार सम्पत्ति है पर उस का उपयोग वेद–प्रचार के लिए नहीं होता। लकीर पीटना, गद्दियों से चिपके रहना और सिद्धान्त शून्य राजनैतिक भाषणों द्वारा उत्सव मात्र कर लेना हमारा परम धर्म बन चुका है।

संध्या, ईश्वर विश्वास, वेद पाठ और वेद प्रचार के लिए किसी के पास न समय है न धन। क्रान्ति की ज्योतित दीप शिखा आज मंदिर की दीवारों में कैद की जा चुकी है। संसार का सब से महान् व्यक्तित्व हमारी अकर्मण्यता और पद लिप्सा से आज विस्मृत हो रहा है।

तड़प और मन की ललक, प्रचार की उमंग कहां गयी ? मन्दिर, मस्जिद, गिरजाघर पर 'ओ३म्' पताका लहराने का लक्ष्य कहां गया ? वेदों का डंका आलम में बजाने के गीत का स्वर कहां खो गया ? लेखराम और श्रद्धानन्द का बहा हुआ रक्त धरती पर गिर क्यों व्यर्थ हुआ ?

हमारा मन आपके मन में यज्ञाग्नि प्रज्वलित करना चाहता है। प्रत्येक आर्यसमाज के सदस्य को हम ऋषि दयानन्द का बहादुर सैनिक बनाना चाहते हैं। आर्यसमाज की सारी शक्ति हम ऋषि दयानन्द की विचार धारा के प्रचार में लगाना चाहते हैं ! कोई बताए तो सही कि क्या हमारी इच्छा अनुचित है ?

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दयानन्द के वीर सैनिको !

सोने का समय नहीं, छोड़ दो आलस्य और विजय की शहनाइयां बजाने की तैयारी करो ! उठो तूफ़ान की तरह, एक हाथ में ज्ञान की ज्योति और दूसरे में पाखंड खण्डिनी पताका लेकर आगे बढ़ो, मिटा दो अज्ञान, अन्धविश्वास, पाखंड और मतवादों का ज़हर.........१९७५ आ रहा है, **आर्य समाज की स्थापना का सौवां वर्ष ! इस वर्ष का स्वागत प्रत्येक आर्य १०० सत्यार्थप्रकाश, १०० ऋषि जीवन और १० वेद भाष्य प्रचारित कर मनाए !**

आर्यो ! अपने क्षेत्र में कोई घर ऐसा न रहने दो जहां प्रकाश न पहुँचे! घर-घर में सत्यार्थ प्रकाश और ऋषि जीवन पहुँचाने में लग जाओ ।

हम जानते हैं कि दुनिया हमें मिटाना चाहती है । पर हमें यह भी मालूम है कि दयानन्द के सैनिक अगर जाग जाएं तो पाप-पाखंड को मिटना होगा, जीतहमारी होगी।

लेकिन यह भी सच है कि अगर आर्य समाजों के अधिकारी, इसी तरह सोते रहे तो हमारा अस्तित्व भी ख़तरे में पड़ जाएगा । धर्म के नाम पर अधर्म फैल रहा है। राजनीति पर पाप की छाया छा चुकी है । देश की उलझनें बढ़ रही हैं । नारों से सब उलट रहा है । इसलिए अगर आज हम जागे नहीं तो मातम की धुनें हमारे चारों ओर बजेंगी ।

प्रश्न है आप से, सब से, अर्थी उठाना चाहते हो या शहनाई बजाना ? जिस ढंग में आज चल रहे हो वह मौत का रास्ता है, वह दयानन्द का दिखाया मार्ग नहीं है ।

हम आप की सेवा में यह प्रार्थना लेकर उपस्थित हैं कि रास्ता बदलो !

ऋषि दयानन्द की राह पर चलो !
शहनाइयां—विजय के गीत गुंजाने की तैयारी करो !
वेद पताका भूमंडल पर फहराओ जागो, मेरे भाई, जागो !

—राकेश रानी

समाचार पत्र **जन ज्ञान** (**मासिक**) के स्वामित्व आदि से सम्बन्धित विवरण :

१. प्रकाशन स्थान—नई दिल्ली ।
२. प्रकाशन अवधि—मासिक ।
३. मुद्रक, प्रकाशक, संपादक का नाम—राकेश रानी ।
४. (क्या भारत का नागरिक है ?)—हाँ ।
५. पता—१५९७, हरध्यानसिंह मार्ग
नई दिल्ली-५
६. उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार-पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों । **दयानन्द संस्थान (पंजीकृत न्यास)**

मैं राकेश रानी, एतद्द्वारा घोषित करती हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य हैं । **राकेश रानी**

मुद्रक एवं प्रकाशक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

२२-२३ मई १९७३ को
दयानन्द संसद् के प्रथम अधिवेशन में

आर्य जनता सादर आमन्त्रित

●●●

आर्य समाज स्थापना शताब्दी आ रही है। समय बहुत थोड़ा है। किन्तु इस विषय में जागरण का शंखनाद, जिस उमंग भाव से गूंजना चाहिए था, वह अभी तक नहीं गूंज रहा।

आर्य समाज के सर्वोच्च संगठन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने स्थापना शताब्दी मनाने के लिए आर्य जगत् का आवाहन किया है। आगे बढ़ने का यह निमंत्रण वैदिक विचारधारा का साम्राज्य स्थापित करने का यह स्वर्णिम अवसर ऋषि दयानन्द के प्रति श्रद्धा सुमन अर्पित करने की यह पावन वेला, निर्णायक है धरती के भाग्य की !

क्या यह अवसर हम खो देंगे ! क्या आर्य जनता गहरी नींद में इसी तरह सोती रहेगी ? क्या आर्य मंदिरों में इसी तरह ताले बन्द रहेंगे ? क्या पदों के लिए आपसी संघर्ष जारी रहेगा ?

कोई नहीं जानता कि इन उलझनों का हल क्या है ? किसी को नहीं पता कि निराशा में आशा के गीत कैसे गुंजाए जाएं ? क्या किया जाए कि प्रत्येक आर्य ऋषि दयानन्द का वीर सैनिक बन कर कहे—

दयानन्द का काम पूरा करेंगे।
उसी के लिए हम जिएँगे मरेंगे ॥

इन प्रश्नों पर विचार के लिए हमने भारत के सभी ऋषि भक्तों की एक आवश्यक बैठक २२–२३ मई १९७३ को ग़ाज़ियाबाद में बुलाने का निश्चय किया है।

"दयानन्द–संसद्" की यह प्रथम बैठक धरती पर वैदिक विचार धारा प्रसार के रचनात्मक उपायों पर विचार के लिए आमंत्रित की जा रही है। इसमें किसी भी विवादास्पद विषय पर विचार न होकर केवल यह निश्चय क्रिया जाएगा कि—

१. आर्यसमाज स्थापना शताब्दी कैसे मनायी जाए ?
२. अगले २ वर्षों में वैदिक विचारधारा को कैसे अधिक से अधिक व्यक्तियों तक पहुंचाया जाए ?
३. प्रत्येक आर्यसमाज अपने-अपने क्षेत्र में अगले २ वर्षों में क्याकरे ?

ऋषि दयानन्द के वीर सैनिको

वैदिक विद्वान और मान्य सन्यासी गण !

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उत्साह, उमंग और साहस से धरती को वेदमय करने के लिए—"दयानन्द-संसद्" के प्रथम अधिवेशन में भाग लेने का निश्चय कीजिए।

"दयानन्द-संसद्" में आर्य समाज की उन्नति-प्रसार और ऋषि दयानन्द की लक्ष्य की पूर्ति के लिए आप के विचार ऋषि दयानन्द के महान् लक्ष्य की पूर्ति का कारण बनेंगे।

दयानन्द संसद् का अधिवेशन गाजियाबाद में होगा। इस अधिवेशन में दर्शक भाग न ले सकेंगे। केवल चुने हुए प्रतिनिधि, आमंत्रित मान्य महानुभाव ही भाग ले सकेंगे। प्रतिनिधि शुल्क १२ रु० भेज कर आप अपने आने की सूचना दें। प्रवेश पत्र सदस्यों की सेवा में भेज दिया जाएगा।

निवास और भोजन की व्यवस्था गाजियाबाद के आर्य वन्धुओं की ओर से होगी। अधिवेशन की चार बैठक होंगी।

२२ व २३ मई प्रातः— ८ से १२ तक
मध्यान्ह—३ से ६ तक

१—आर्य समाजों के प्रतिनिधि
२—उपदेशक और संन्यासी
३—जन-ज्ञान के सदस्य
४—दयानन्द संस्थान के सदस्य
५—प्रान्तीय सभाओं के अधिकारी और अंतरंग सदस्य
६—आर्य समाज की शिक्षण संस्थाओं के प्रवंधक व आचार्य
७—विशेष रूप से आमंत्रित व्यक्ति संसद् के अधिवेशन में भाग लेंगे।

सभी शांति से, प्रेम से, गंभीरता से बैठकर अगले २ वर्ष का कार्य क्रम निश्चय कर आर्य समाज स्थापना शताब्दी तक सर्वत्र आर्य समाज की विजय पताका फहराने का संकल्प लेंगे।

—आगे बढ़ने के लिए
—वेद पताका फहराने के लिए
—ऋषि दयानन्द के महान्लक्ष्य को पूर्ण करने के लिए
२२—२३ मई को 'दयानन्द-संसद्' के अधिवेशन में भाग लीजिए
आप के पत्र की प्रतीक्षा में—

—भारतेन्द्रनाथ

कृपया २२ व २३ मई १९७३ को "दयानन्द-संसद्" के अधिवेशन में भाग लेने गाजियाबाद पहुंचिए

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मैं हृदय मन्दिर से लिख रहा हूँ ~ भारतेन्द्र नाथ

✱

'वेद' के प्रति क्या आप के हृदय में श्रद्धा है ?

ऋषि दयानन्द ने वेद प्रचार के लिए आर्यसमाज संगठन बनाया था। इस संगठन ने सब कुछ किया पर दुर्भाग्य से 'वेद' को भुला दिया गया। जो प्रथम लक्ष्य था वह गौण हो गया। और वेद-प्रचार के नाम पर भाषण, कथाएँ और उत्सव ही हम करते रहे। उनमें मनचाहे भाषण दिला कर वेद प्रचार का लक्ष्य पूर्ण समझते रहे। किन्तु मूल वेद और ऋषि शैली पर वेद के भाष्य का जन-जन में प्रसार आर्य समाज न कर सका।

आर्य समाज स्थापना शताब्दी पर दयानन्द संस्थान ने साधन न होते हुए भी वेद भाष्य को भारत के घर घर में पहुँचाने का शंख नाद किया। प्रभु विश्वास की पूंजी से भारत की धर्म प्राण जनता को 'वेद' को परिवारों में प्रतिष्ठित करने का निमंत्रण दिया। देश के सभी प्रमुख समाचार पत्रों में प्रथम पृष्ठ पर 'वेद' के प्रचार का निमंत्रण छपाया गया और परिणाम की प्रतीक्षा हृदय थाम कर हम करने लगे।

आश्चर्य और परमाश्चर्य हुआ कि जिन्हें हम आज तक पौराणिक कहकर अपने से दूर समझ रहे थे उन्होंने श्रद्धा और आदर से 'वेद' प्रचार के निमंत्रण को स्वीकार किया। भारत के कोने-कोने में 'वेद' को घर में प्रतिष्ठित करने की होड़ लग गयी। इतिहास के सारे अध्यायों को नया मोड़ देते हुए हमने देखा कि सारा देश यदिकिसी एक धर्म ग्रन्थ के प्रति श्रद्धा नत हो सकता है तो वह है 'वेद'। ऋषि दयानन्द ने अपनी अपूर्व प्रतिभा और दूर दृष्टि से इस तथ्य को समझ लिया था कि बिखरी आर्य जाति को संगठित करने का एक मात्र उपाय 'वेद' प्रचार है।

ऋषि की इस दूरदर्शिता को यदि आर्य समाज के कर्णधारों ने समझा होता, भवन बनाने के स्थान पर यदि उन्होंने घर-घर में वेद की प्रतिष्ठा की होती, वेद-प्रचार के नाम पर सचमुच वेद का प्रचार किया होता तो आज भारत में आर्य राज्य होता।

किन्तु जो बीत गया सो बीत गया, उस की चिन्ता से कुछ लाभ नहीं। प्रश्न तो आज का है, कल का है..............

हम ऋषि दयानन्द के अनुयायी 'वेद' का प्रचार करना चाहते हैं या नहीं ? भारत के हर हिन्दू के घर में वेद को पहुँचाने का व्रत लेने के लिए वे तैयार हैं या केवल वेद के नाम पर लकीर पीटना ही उनका इष्ट है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्यो ! दयानन्द के अनुयायियो ! सोचो, समझो, और अपना कर्तव्य निश्चय करो ! क्या चाहते हैं आप लोग—

दयानन्द संस्थान ने वेद-प्रचार का जो पहला प्रयत्न किया है उसमें उसे अभूत पूर्व सफलता मिली है। १२,५०० वेद भाष्य का प्रकाशन और प्रसार आज के युग की एक ऐसी घटना है जिस पर आश्चर्य किया जा सकता है, गर्व किया जा सकता है, अभिमान किया जा सकता है। गुरुदेव दयानन्द का वेद भाष्य १२५०० घरों में प्रतिष्ठित करने का सौभाग्य आर्य समाज स्थापना शताब्दी पर आर्य समाज को प्राप्त होगा। किन्तु इस पवित्र कार्य की सफलता के लिए क्या आप का कुछ भी कर्तव्य नहीं है ?

इस समय स्थिति यह है कि चौथायी वेद भाष्य लगभग छप कर तैयार है। पहली जिल्द हम अप्रैल में प्रसारित करनी आरम्भ कर देंगे। किन्तु अभी तीन जिल्दें और छापनी हैं। और संपूर्ण कार्य की सफलता के लिए हमें कम से कम **तीन लाख रु० तुरन्त चाहिएं**। यह धन वेद के प्रचार का दायित्व संभालने वाले नहीं देंगे तो कौन देगा ? वेद भाष्य प्रकाशन का यज्ञ पूर्ण करने के लिए आहुति ऋषि भक्त नहीं देंगे तो कौन देगा ?

हमारे सामने इस समय सबसे बड़ी समस्या यह है कि वेद-प्रचार के लिए आरम्भ हुयी यह प्रथम योजना कैसे पूरी हो। इस के पूर्ण होने पर हम क्या करेंगे, यह घोषणा करना हमारा स्वभाव नहीं, किन्तु हम इतना ही कहना चाहते हैं भारत के हर घर को वेद मंदिर बनाने के हमारे संकल्प का "वेद भाष्य प्रकाशन" प्रथम चरण है।

इस प्रथम चरण की सफलता के लिए, १२५०० वेद भाष्य के प्रकाशन के लिए बताओ हम किसके द्वार जाएँ ? किसके आगे झोली फैलाएँ ? किससे कहें कि ऋषि दयानन्द के आदेश की पूर्ति के लिए अपनी पवित्र कमायी से आहुति दो। आहुति दो, इसलिए कि ज्ञान का प्रकाश अन्धकार को दूर कर सके !

हमारी पुकार आर्य जनता के हृदय मंदिर तक पहुंच सके इसलिए हम पर-पिता परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि वह आर्य जनों को यह प्रेरणा करे कि वे "वेद" प्रचार के इस यज्ञ का महत्व समझें और इस की सफलता के लिये उदारता पूर्वक सहयोग प्रदान करें।

संकटों और तूफ़ानों से डरना हमारा स्वभाव नहीं, हमने यह महान् कार्य प्रभु विश्वास पर आरम्भ किया था और आज भी हम प्रभु के भरोसे ही कार्य की सफलता के लिए बढ़ते जा रहे हैं।

हम सहयोग के लिए इन पंक्तियों द्वारा उन्हें पुकारते हैं जो 'वेद' को अपना धर्म ग्रन्थ और ऋषि दयानन्द को अपना नेता, गुरू स्वीकार करते हैं।

भाइयो ! और बहनो !

यदि आप की दृष्टि में वेद-भाष्य को घर-घर पहुँचाने का प्रयत्न अपराध या पाप नहीं है तो इस पवित्र यज्ञ में सहयोग दीजिए, ताकि हम तेजी से आगे बढ़ सकें और जिस पवित्र उद्देश्य के लिए ऋषि दयानन्द ने अपने जीवन के पल-पल की आहुति दी थी, लेखराम ने जिस लक्ष्य के लिए छुरा खाया था, श्रद्धानन्द के सीने पर लगी गोलियों से गिरा रक्त जिस लक्ष्य का स्मरण कराता है उस लक्ष्य की पूर्ति का आज समय आ गया है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

संसार को वेद-मय बनाने का अभियान आरम्भ किया जा चुका है, सत्यार्थ प्रकाश के एक वर्ष में चार संस्करण छप चुके हैं। ऋषि दयानन्द का जीवन चरित्र भी भारी संख्या में निरंतर छप रहा है। अंग्रेजी में भी जन-ज्ञान (मासिक) का प्रकाशन आरम्भ किया जा चुका है। जिस के प्रकाशन में भी भारी घाटा संस्थान को उठाना पड़ रहा है। बढ़ते चरण तेजी से बढ़ रहे हैं, यह सफलता पूर्वक बढ़ते रहें इसके लिए हम सभी प्रभु भक्तों और ऋषि दयानन्द के अनुयायियों का आशीर्वाद चाहते हैं।

हमें विश्वास है कि अभी वेद भक्त धरती पर जीवित हैं। ऋषि दयानन्द के सच्चे अनुयायियों की कमी नहीं है। वे हमारी पुकार सुनेंगे और संपूर्ण कार्य की सफलता के लिए हमें सभी का पूर्ण सहयोग मिलेगा।

वेद भाष्य छप रहा है, वह छपता रहे, शीघ्र से शीघ्र पूरा हो, इस के लिए शिवरात्रि पर अधिक से अधिक धन भेजिए ! इस प्रार्थना के साथ इन पंक्तियों द्वारा आप के द्वार पर उपस्थित हूँ—

क्या आप हमें खाली हाथ लौटा सकेंगे—

सफलता के लिए आप के सहयोग की प्रतीक्षा कर रहा हूँ—

तमाशा या आन्दोलन

हम प्रति दिन देश में नए-नए आन्दोलन देखते हैं। धरना, जलूस, सत्याग्रह और भी पता नहीं क्या यह नेतागण करते रहते हैं। किन्तु इन सबको आन्दोलन कहना आन्दोलन शब्द का ही अपमान है।

वस्तुतः यह सब कुछ तमाशा है, जो अपनी कलाएं दिखाने के लिए ये नेता रूपी बाजीगर करते हैं। कभी हिन्दी के नाम पर, कभी गो रक्षा के नाम पर, कभी किसी और नाम पर तमाशे जुटाना आज की नेतागिरी का आवश्यक अंग बन चुका है।

किन्तु आन्दोलन तमाशा नहीं होता। उसमें प्रदर्शन नहीं बलिदान होते हैं। लक्ष्य पूरा हुए बिना वह समाप्त नहीं होता। उसमें चित्र-वक्तव्य छपाने की इच्छा नहीं होती आन्दोलन तब तक चलता है जब तक परिणाम न निकल आए। दूध के उबाल की तरह वह बैठ नहीं जाता।

तमाशा दिखाने वालों के तमाशों ने राष्ट्र को अन्धकार में ढकेलने का प्रयास किया है। सस्ती नेतागिरी की भूख ने राष्ट्र हित को पीछे छोड़ दिया है। कोई नहीं जानता कि जो हम कर रहे हैं उसका परिणाम क्या होगा ?

बाजीगरों के तमाशे बन्द हों और समस्या से जूझने के लिए सर पर कफ़न बांध वीर बलिदानी आगे आएं तो कौन सा पर्वत है जिसे झुकने के लिए मजबूर न होना पड़ेगा ?

धर्म के भी और राजनीति के भी नेतागण, क्या अपने तमाशे बन्द कर सच्ची सेवा की राह पर चलेंगे ?

गरीबी न पाप है न अपराध

तो फिर क्या अपराध है, अमीरी। नहीं वह भी नहीं, अपराध है अपनी आवश्यकताएं बढ़ाते जाना। कौन ग़रीब है और कौन अमीर इसकी परिभाषा करनी कठिन है। इस नए नारे को जन्म दिया है वर्ग संघर्ष के कर्णधारों ने।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आवश्यकताओं या वासनाओं की पूर्ति कर कौन, कब तृप्ति अनुभव कर सका है ? कुबेर का धन होने पर किसने अपनी भूख को शांत समझा है। इसलिए गरीबी हटाने का नारा राम बाण नहीं, विष बाण है।

ग़रीब वह है जिसमें असंतोष है। संतुष्ट रहने की आदत होने से ग़रीब ही अमीर हो जाता है। और असंतुष्ट रहने से अमीर ग़रीब।

आवश्यकता है अभाव मिटाने की। आर्य समाज अभाव को संसार से समाप्त करना चाहता है, और यह अभाव मिट सकता है धर्म से। मनुष्य के भीतर यदि धर्म भावना हो तो वह किसी को भी भूखे मरते नहीं देख सकता। किसी ठिठुरते बच्चे की ठिठुरन धर्म भाव से अपनी व्यथा बन जाती है।

अभाव कहीं न रहे। यह कर्तव्य राज्य का भी है और व्यक्ति का भी। हम खूब धन कमाएं किन्तु धन का उद्देश्य संग्रह मात्र न होकर अभाव की समाप्ति हो।

अन्न, वस्त्र और मकान की अनिवार्य आवश्यकताएं पूरी करना कठिन नहीं है। किन्तु आवश्यकताएं वह जिनसे शरीर स्वस्थ रहे। रोग पास ना फटकें।

सार यह कि—

१. आवश्यकताएं कम करो २. अभाव कहीं भी न रहने दो।

३. धन का उद्देश्य अभावों की समाप्ति समझो !

व्यवहार—चिन्तन में यदि हम इन तीन सूत्रों पर अर्थ नीति निर्धारित करें तो ग़रीबी अमीरी की संघर्ष भरी उलझन सुलझ सकती है और अभाव भी मिट सकते हैं।

शिवरात्रि : बोधरात्रि मनाएं

सत्य को जान असत्य को भगाना 'शिवरात्रि' का संदेश है। यह रात्रि सचमुच ही भारत के लिए अत्यन्त कल्याणकारिणी सिद्ध हुई। इस रात्रि में एक बालक मूल शंकर को सत्य का बोध हुआ और उसने देश का ही नहीं समूचे विश्व के भाग्योदय का मार्ग दर्शन दिया।

वही रात्रि प्रतिवर्ष आती है, पर किसी को बोध नहीं होता। ऋषि अनुयायियों को भी नहीं होता। असत्य की मोह माया में ग्रस्त हम सत्य से दूर भटक रहे हैं। कर्तव्य कर्म सब भ्रमित हैं।

देश में अन्धकार छाया है। धरती पर अज्ञान के बादल मंडरा रहे हैं। विनाश और मृत्यु का दर्शन जीवन पर अधिकार कर बैठा है। दूर-दूर तक फैले ग्रामों में रहने वाली अशिक्षित धर्म पिपासु जनता धर्म संदेश सुनने को तरस रही है। पर उस तरस पर बरसने को कोई तैयार नहीं।

शिव मंदिर में सभी आज भी तन्द्रा ग्रस्त हैं। भाग्य अस्त है, प्रतीक्षा है जागरण की, शंखनाद व्यर्थ हो रहा है। नींद कैसे टूटे, इस प्रश्न का उत्तर हमारे पास भी नहीं है।

दयानन्द अनुयायियों की टोलियाँ धर्म प्रचार के लिए कब निकलेंगी ? भाषण और प्रचार में अन्तर हम कब समझेंगे ? नेता कब नेता बन "वेद-ज्योति" हाथ में ले कर्तव्य पथ पर चलेंगे। कब जलेगी आग हृदयों में कुछ करने की, आगे बढ़ने की, कर्तव्य पथ पर मरने की।

ईश्वर को भूल सब भटक रहे हैं, धर्म को भूल अधर्म को धर्म समझ चुके हैं। स्थिति बदलनी है, अंधकार मिटाना है तो शिवरात्रि पर जागना होगा—घर-घर सत्य

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

का प्रकाश—"सत्यार्थ प्रकाश" पहुँचाना होगा।

जीवन सदा नहीं रहेगा, दिन रात के श्रम से संचित भौतिक पदार्थ भी तुम्हारा साथ नहीं देंगे, फिर क्यों कर्तव्य की पुकार नहीं सुनते ! व्यामोह छोड़ जागो, मेरे आर्य बन्धुओ ! नींद खोल रास्ता बदलो ! पूरी शक्ति से तूफान बन कर उठो। ऐसे यज्ञ आरम्भ करो कि उसमें अज्ञान जल जाए और ज्ञान सर्वत्र फैलता जाए।

आप क्या संकल्प लेते हैं,—ले सकते हैं, निर्णय कीजिए और सफलता से बोध रात्रि मनाइए।

प्रत्येक आर्य बोध रात्रि मनाते हुए निश्चय करे कि १९७५ की बोधिरात्रि तक उसने क्या करना है—

१—कितने सत्यार्थप्रकाश बांटने हैं ?
२—कितने व्यक्तियों तक ऋषि गाथा पहुँचानी है ?
३—कितने घरों में वेद की प्रतिष्ठा करनी है ?

कंकर से शंकर तक

कंकर में भगवान के दर्शन की भावना भारत के बहुत बड़े जन समुदाय में व्याप्त है। कल्याण की खोज में भटकता मानव मार्ग न मिलने पर कंकर को शंकर मान उसी की पूजा में लीन होकर कर्तव्य की इति श्री समझ रहा है।

कंकर की पूजा से आरम्भ हुयी यात्रा पर मंजिल आज भी हमसे दूर है। कितने व्यक्ति हैं जो कंकर की पूजा से शंकर के द्वार पर पहुँच सकते हैं ? कितनों ने शंकर को देखा है ? शंकर मिला नहीं तो कंकर व्यर्थ है। प्रार्थना-पूजा तो शंकर की करनी है, वह कहाँ है, कैसे मिलेगा ? यह मूल प्रश्न सभी के मानस में अंकुरित है, पर उनको हल नहीं मिल पा रहा।

आज की आवश्यकता है कि जिनकी मंजिल कंकर पूजा से आरम्भ हुई थी उन्हें मंजिल के दूसरे छोर शंकर के दर्शन तक पहुँचाया जाए। इन पंक्तियों द्वारा हम निमंत्रण देते हैं शंकर के दर्शन का, उन सभी को, जा कंकर को ही शंकर मान बैठे हैं

शंकर है तो उससे मिलने चलो ! चलो उस राह पर कि कल्याणकारी प्रभु से तुम साक्षात्कार कर सको। उसके दर्शन से अपना जीवन मंत्र सफल बना तुम पा लो वह वरदान कि जीवन भी स्वर्ग बन जाए और मृत्यु भी आनन्ददायिनी हो।

कंकर से शंकर तक पहुँचने का रास्ता दिखाया था देव दूत ऋषि दयानन्द ने ! प्राचीन ऋषि परंपरा के अंतिम संदेश वाहक ऋषि दयानन्द का सारा जीवन कंकर से शंकर की प्राप्ति का मार्ग दर्शन है।

उनकी सारी शिक्षाओं का यह सार है कि "मिलो शंकर से भूलो कंकर को।"

कंकरों का अर्थ है भौतिक पदार्थों का मोह ! कंकर का अर्थ है भौतिक तत्वों का एक छोटा टुकड़ा। कोई छोटे कंकर की पूजा कर रहा है और कोई विशाल कंकर समूहों की, भवनों की। इस भूल भूलैया में शंकर खो गया।

शंकर को खोने का अर्थ है सर्वनाश। आत्म हनन। मनुष्य जीवन की व्यर्थता। इसलिए हमारा आग्रह है मेरे भाई कि कंकर में मत अटको, शंकर तक पहुँचो। रास्ता दिखा दिया है देव दयानन्द ने, उस राह पर चलो तुम्हें वह मिल जाएगा, उससे मिल कर फिर और क्या चाह शेष रह जाएगी ?

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अंग्रेजी जन-ज्ञान

अंग्रेजी भाषा में "जन-ज्ञान" का प्रकाशन आरम्भ करने पर हमें चहुँ ओर से साधुवाद सहयोग का जो वातावरण मिला उसे हम चमत्कार ही समझ रहे हैं। प्रतीत हो रहा है कि धर्म और प्रभु दर्शन की प्यासी धरती सत्य ज्ञान की बूँदों के लिए तरस रही है हम सभी सहयोगियों के प्रति आभारी हैं और विश्वास दिलाते हैं कि प्राणों की अन्तिम श्वांस तक हमारा शरीर ऋषि दयानन्द की ज्योति के प्रसार में लगा रहेगा। आर्य जनता का उत्साह ही हमारी प्रेरणा का स्रोत है।

प्रचार यात्राएँ

पिछले दिनों हम ने निश्चय किया था कि प्रति रविवार किसी न किसी समाज में बिना निमंत्रण पहुँचा जाए। इस तरह जहाँ हमें एक दिन दिल्ली से बाहर रह विश्राम मिलेगा वहाँ प्रत्यक्ष दर्शन द्वारा आर्य समाजों की गति विधि का भी ज्ञान होगा।

इस प्रचार में संस्थान के आजीवन सदस्य आचार्य जगदीश विद्यार्थी भी हमारे साथी बने। और हमने पानीपत, जीन्द, खुरजा, गुलावठी, मुजफ्फर नगर, रुड़की आदि स्थानों के साप्ताहिक सत्सगों में भाग लेकर अपने विचार दिये। प्रचार का यह ढंग आशा से अधिक सफल रहा। धन की याचना कहीं जाकर अभी तक न की न करनी पड़े यह इच्छा भी है, फिर भी प्रेरणा और गति की दृष्टि से यात्राएँ सफल रहीं। जन-मानस का प्रेम मुक्त भाव से हमें सदा ही मिलता रहा है और विश्वास है कि भविष्य में भी मिलता रहेगा। वही हमारी पूँजी है और उसे खोकर हम क्षण भर भी जीवित नहीं रहना चाहेंगे।

अगले दो वर्षों में हम दिल्ली की १५०–२०० मील की परिधि की सभी आर्यसमाजों में रविवार के दिन पहुँचना चाह रहे हैं। देखिये, प्रभु हमारी इच्छा पूरी करते हैं या नहीं—आरम्भ तो हमने कर ही दिया है—

दुर्घटना से रक्षा

इलाहाबाद वेद का टाइप लेने जाना पड़ा। आचार्य जगदीश विद्यार्थी और श्री चन्द्रमोहन शास्त्री भी साथ थे। मार्ग में ड्राइवर की असावधानी से कार गहरे गड्ढे में बिजली के तार से टकरा कर गिर पड़ी। सौभाग्य से किसी को भी विशेष चोट नहीं आयी।

इस यात्रा में हमने ग्रामों में पौराणिक वर्ग में असीम श्रद्धा और आतिथ्य भावना के दर्शन किये। नागौद के मन्दिर में बितायी रात्रि और वहाँ के प्रमुख नागरिकों का आतिथ्य जीवन भर स्मरण रखने की निधि है।

वाराणसी में आर्य वीर श्री राजेन्द्रप्रसाद सिंह और उनके अनन्य सहयोगी श्री हरेश प्रसाद सिंह की ऋषि भक्ति, अटूट श्रद्धा और प्रचार की लगन देखकर अनुभव हुआ कि आर्य वीरों में भी रक्त का प्रवाह विद्यमान है और वे जीना भी जानते हैं और मरना भी। वाराणसी में १ फरवरी को विचार गोष्ठी का भी आयोजन था जिसमें सभी के दर्शन कर हमें प्रसन्नता हुयी।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रचार यात्रा एक दिन से अधिक के लिए करने से केन्द्र दुर्बल पड़ जाता है, यह अनुभव हुआ और अधिक दिनों के लिए बाहर निकलना बन्द। बस रविवार के दिन प्रचार भी और छुट्टी भी—दोनों एक साथ।

मन तो सारे देश-देशान्तरों पर दयानन्द का संदेश बरसाने के लिए मचल रहा है। इसी जीवन में या अगले में पता नहीं कब प्रभु मन को चाह पूरी करेंगे—

—भारतेन्द्र नाथ

अंग्रेजी भाषियों में प्रचार के लिए

हमने एक महत्वपूर्ण वैज्ञानिक ढंग से लिखी पुस्तक Man and his religion नामक स्वामी सत्य प्रकाश जी लिखित प्रकाशित की है। पुस्तक अपने ढंग की अनुपम है और वैज्ञानिक पद्धति से लिखी गयी है। धर्म की जीवन में क्या आवश्यकता है और वह क्या है यह मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

हम संसार के प्रत्येक व्यक्ति तक इसे पहुँचाना चाहते हैं। मूल्य १ रु० प्रचार के लिए ७५ रु० सकैड़ा। अधिक से अधिक मंगा कर बाँटिए।

इनके अतिरिक्त अंग्रेजी में स्वामी जी का चरित्र और Teachings of Swami Dayanand Sarswati भी प्रचार के लिए तैयार हैं। मूल्य केवल १ रु० और ७५ रु० सैकड़ा। what is yoga भी तैयार मूल्य है। मूल्य १० रु० सैकड़ा है।

पुरोहित चाहिए

महर्षि दयानन्द द्वारा वेदार्थ में आस्थावान् नैष्ठि प्रचारक की जोपौरोहित्य कर्म में भी दक्ष हो। आवश्यकता है।

योग्यता: १—गुरू कुल का स्नातक। २—संगीत अथवा व्यायाम शिक्षा हस्तकला उद्योग में से किसी एक अथवा अंग में दक्षता प्राप्त।

३—आयु २१ से ४० वर्ष के मध्य। विशेष अवस्था में आयु सीमा शिथिल हो सकती है। वेतन श्रृंखला। ३००–२०–५००।

स्थान स्थायी। एक वर्ष का परीक्षण काल।

आवेदन पत्र हेतु अपना पता एवं डाक टिकट सहित लिफाफा मंत्री, आर्य समाज रानानाड़ा, जोधपुर के पास भेजिये। आवेदन पत्र की अंतिम तारीख २८–२–१९७३ है। साक्षात्कार के लिये आंमत्रित व्यक्तियों को एक ओर का रेल मार्ग व्यय दिया जायगा।

नरेन्द्र नाथ मन्त्री

आर्य समाज रानानाड़ा जोधपुर

जन-ज्ञान का यह अंक फरवरी व मार्च का संयुक्तांक है।

अगला अंक अब २ अप्रैल १९७३ को भेजा जाएगा।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्य समाजों के अधिकारियों से.........

सभी को यह जान कर हर्ष होगा कि दयानन्द संस्थान द्वारा प्रकाशित

सत्यार्थ-प्रकाश

एक वर्ष में चौथी बार २० हजार अब छप कर लगभग तैयार है। हमारी इच्छा है कि १९७५ तक १ लाख सत्यार्थ प्रकाश छप जाए और जनता में फैल जाएं। किन्तु हम चाहते हैं कि आर्य समाजों के अधिकारी जागें और एक के स्थान पर दस लाख सत्यार्थ प्रकाश कम से कम देश में फैल जाएं।

इसके साथ ही **महर्षि दयानन्द का जीवन चरित्र** भी हम ५ लाख छापने के लिए कृत संकल्प हैं। एक वर्ष में लगभग ५० हजार निकल चुका है और अब चौथी बार प्रेस में दिया जा चुका है। १) में ऋषि जीवन चरित्र प्रसारित करने का साहस हमने किया है। क्या आप उसे भारत के घर-घर में पहुंचाने का व्रत धारण नहीं कर सकते ?

अंग्रेजी भाषा में भी ऋषि जीवन अब तैयार है और उसे भी हम केवल ७५) सैकड़ा में दे रहे हैं। इसका भी भारी संख्या में प्रचार करना प्रत्येक ऋषि भक्त का पुनीत कर्तव्य है।

सत्यार्थ प्रकाश

ऋषि जीवन

और

वेद भाष्य

के अधिक से अधिक प्रचार के लिए हम आर्य बन्धुओं, विशेषतया आर्य समाजों के अधिकारियों का आवाहन करते हैं। हम चाहते हैं कि आने वाले २५ मास के लिए प्रत्येक आर्य निश्चय करे, आर्य समाजें योजना बनाएं कि कितने सत्यार्थ प्रकाश, कितने ऋषि जीवन, कितने वेद भाष्य आपने अपने क्षेत्र में प्रसारित करने हैं।

समय की पुकार सुनो और
ऋषि दयानन्द का लक्ष्य
पूरा करने में लग जाओ.........

—भारतेन्द्र नाथ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

श्री राजेन्द्र प्रसाद सिंह : श्री हरेश कुमार सिंह

दहेज प्रथा के विरुद्ध तीव्र आन्दोलन करने के लिए कृत संकल्प : आर्यवीर

बनारस के इन दोनों वीर युवकों ने भारत से दहेज प्रथा उन्मूलन के लिए वातावरण बनाने का निश्चय किया है। इनका संकल्प है कि हम इस कुप्रथा को समूल नष्ट करेंगे। कार्य बहुत बड़ा है और साधन थोड़े, फिर भी जन-ज्ञान शुभ पथ पर चलने वाले युगल को आशीर्वाद देतां है।

—संपादक

तुक्तक

एक श्वान ने आत्म-हत्या कर ली,
कारण, उसको किसी ने "नेता" कह दिया था।
उसके गले में एक पर्ची भी लटकी मिली,
क्या मैं सचमुच इतना गिरा हुआ हूँ ?

●

क्या कहा, द्वैत को मानते हो,
तभी तो नेता व देश को अलग-अलग जानते हो।
और देश निराकार है, पर नेता साकार है।
पेट नेता का ज्यों-ज्यों बढ़ रहा है,
देश प्रगति की सीढ़ी चढ़ रहा है।

—बनारसीसिंह

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वेद भाष्य सम्बन्धी आवश्यक सूचनाएँ

ऋग्वेद के वेद भाष्य प्रकाशन का कार्य सफलतापूर्वक चल रहा है। इस समय तक **ऋग्वेद के चार मण्डलों का प्रकाशन** समाप्त हो चुका है।

वेद भाष्य के बहुत से पाठकों ने मांग की है कि उन्हें भाष्य ४ जिल्दों में दिया जाय। अतः इस मांग को ध्यान में रखते हुए हमने निर्णय किया है कि—

१—जो सज्जन वेद भाष्य की प्रतियाँ ४ जिल्दों में लेना चाह रहे हों वे अपनी इच्छा से हमें सूचित करें।

२—जो सज्जन ४ जिल्दों में लेंगे उन्हें ३ जिल्दों का वास्तविक व्यय देना होगा, जो लगभग ५ रुपये प्रति जिल्द होगा।

३—आप अपना रजिस्ट्रेशन नं० लिखकर केवल यह सूचित करें कि आप चार जिल्दों में लेना चाहते हैं। जो १ में ही लेना चाहें उन्हें पत्र लिखने की आवश्यकता नहीं।

४—जो ४ जिल्दों में लेना चाहेंगे उन्हे पहली जिल्द सम्भवतः अप्रैल १९७३ में दी जा सकेगी। इसमें महर्षि दयानन्द कृत सम्पूर्ण ऋग्वेद भाष्य आ जाएगा। और यह सदस्यों को जिल्द व्यय व प्रेषण व्यय लगाकर वी० पी० से भेज दिया जाएगा, जिनको अधिक प्रतियां हैं वह रेल से भेज दी जायेंगी।

५—जो सज्जन जिल्द पर प्लास्टिक कवर, या पढ़ने का लकड़ी का स्टैण्ड भी मांगना चाहेंगे वह भी वास्तविक मूल्य पर भेजा जा सकेगा।

६—महर्षि का यजुर्वेद भाष्य पुस्तक साइज में अभी ८) प्रति के हिसाब से देने की व्यवस्था भी संस्थान ने की है।

७—अब चारों वेदों का हिन्दी भाष्य संस्थान चार जिल्दों में ८०) में भेंट कर रहा है।

आवश्यक—

जो सज्जन पत्र में अपना रजिस्ट्रेशन नं० नहीं लिखेंगे, उनके पत्र पर कोई ध्यान नहीं दिया जाएगा।

—राकेशरानी
व्यवस्थापक
दयानन्द संस्थान

१५६७ हरध्यान सिंह मार्ग
नई दिल्ली—५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पं० बिहारीलाल जी शास्त्री शास्त्रार्थ महारथी का पत्र

प्रिय भारतेन्द्र नाथ जी, सप्रेम नमस्ते !

आप का सत्यार्थ प्रकाश मिला। छपाई, जिल्द सब ही कुछ अच्छा है। विषयों के शीर्षक देकर तो आपने पाठकों का बड़ा ही हित किया है।

बरेली — मेरी शुभकामनाएँ आप के साथ हैं

—बिहारीलाल शास्त्री

आदरणीय !

आप की अक्टूबर मास की "जनज्ञान"-पत्रिका पढ़ने को मिली जिसके ओजस्वी एवं प्रभावशाली लेख की प्रशंसा करना मुझ जैसे साधारण आदमी के वश की बात नहीं, कृपया भविष्य में भी ऐसे ही पथ-प्रदर्शन करें।

निजामाबाद — —डा० राजेन्द्रनाथ

माँ ! सादर नमस्ते

तेरे आशीर्वचनों से स्वस्थ एवं सानन्द रहकर स्वाध्याय की ओर उन्मुख हुआ हूँ, नये आह्लाद की अनुभूति ने मानस-पटल पर विचारों का तांता लगा दिया है। हृदयस्थ तेरी मूर्ति मुझे अवश्य समर्थ बनायेगी, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है।

सेवा में कुछ प्रयत्न प्रेषित हैं सुझाव देंगी, मार्ग-दर्शन करते हुए ! यदि 'जन-ज्ञान' के अमूल्य पृष्ठों के योग्य बन पड़ा हो तो स्थान देकर उत्साहित करेंगी।

परम पिता परमात्मा को कोटिशः धन्यवाद ! जिसने मुझे तुझ जैसी माँ की ओर उन्मुख किया।

चन्द्र की ज्योत्स्ना, दे रही मिसाल कबसे।
शीतलता दे-दे जग को, अग्नि-ज्वाल सबसे।।
शिव गरल पान किया, दधीचि अस्थि-दान दिया।
बीज ने वृक्ष बनकर, फल किये दान कबसे।।
इस जहाँ में जी के, क्या-क्या गुण तू ने सीखे।
दुष्ट गुण दूर करके, शुद्ध गुण दान कर दे।।
कुछ नहीं तेरा मेरा चन्द दिनों का बसेरा।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जर्रा-जर्रा परमेश्वर का, दे रहा है ध्यान कबसे ।।
यह न सोचो अकेला, कर सकेगा क्या भला ।
खोल कर देख पन्ने, साक्षी इतिहास कबसे ।।
आप भटके दुःखों में, देखने हेतु सुखों में ।
'आर्य प्रभु सन्तति को ऋषि दयानन्द जैसे ।।
अनेकशः ऐसे दीये, जल रहे तेरे लिए ।
रोशनी लेके इनकी, तर चलो पार भवसे ।।
चन्द्र की ज्योत्स्ना दे रही मिसाल कबसे ।।
जब तक दीपक एक जल रहा, दूर करेगा अंधियारा ।
जब तक बीज एक जीवित है तृप्त रहेगा जग सारा ।।
एक है चन्दा, एक है सूरज, चमके जो आकाश में ।।
कोटि करोड़ों टिम-टिम तारे, चमके जिनके पास में !
निज हित रोशनी किनकी श्रेष्ठ है, देख रहा है ध्रुवतारा ।।
रूप विलोक नहीं जो लेता, पड़ा वही है अब नीचे !
शेर पुत्र जिस भाँति खेलते, भेड़ संग आँखें मीचे !
ऐसे उदाहरण उनको कोसते, बैठ जो मन को हारा ।।
एक है सूई टुकड़े अनेकों, सब मिल जाते हैं क्षण में !
मार्ग दिखाने वाला कोई मिल जाये यदि जीवन में !
ऋषिवर ने दे दी है कसौटी, जान लो वेद ऋचा द्वारा ।।

—सत्यदेव आर्य 'भक्त'

नेमदार (गया) बिहार

सम्पादक महोदय,

सब कुछ निवेदन करने से पूर्व समाप्त होने जा रहे इस वर्ष में हुई गलतियों के लिए दयानन्द-संस्थान-परिवार से क्षमा माँगना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ साथ ही आने वाले नये वर्ष के लिए अपने आशीर्वादों से मार्ग दर्शित करते रहें। तथा ईश्वर से प्रार्थना करता हूं कि आने वाले नये वर्ष तथा आने वाले भावी भविष्य में दयानन्द संस्थान की प्रगति दिन दूनी, रात चौगुनी हो, महर्षि दयानन्द की मनो-कामना पूर्ण कर सकने में समर्थ हो। इस पावन भारतभूमि में ही नहीं विश्व के कोने-कोने में वैदिक धर्म की पताका लहराये, यही नये वर्ष के लिए शुभ-कामना करता हूँ !

चारों वेदों का भाष्य किया जा रहा है, इस बड़े भारी कार्य को आप अपने कंधों पर लिये हैं इसके लिए छोटे भाई का धन्यवाद स्वीकार करो, तथा आशा करता हूँ कि इस कर्म को ईश्वर पूरा करेंगे। आपने इनको चार जिल्दों में तथा प्लास्टिक कवर इन पर लगाने का निर्णय लिया जो बहुत ही अच्छा है।

इटावा (कोटा) अनुज भ्राता —नरेश विजयवर्गीय

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

एक प्रतिक्रिया,

परिवार नियोजन !

'अड़तालीस घण्टे' तक मुफ्त में रहना और खाना—
मुफ्त में ही सरकारी खर्च पर आना और जाना—
ऊपर से 'साठ रुपये' नगद प्रोत्साहन शुल्क पाना—
हमारे पुंस्त्व का इतना मूल्य कोई कम नहीं ?
अब हमें किसी भी मँहगाई का गम नहीं !
इस मँहगाई के युग में:—
हम जरूरतमन्दों का इतना ही प्रयोजन है कि,
एक दिन ही सही
बच्चों को मिल जाये भर पेट भोजन
जय हो परिवारनियोजन !

—निर्भय हाथरसी

हाथरस

सम्पादक जी,

'मोपला' कहानी के लिए लेखक वीर सावरकर को बहुत-बहुत धन्यवाद ! जिन्होंने एक सच्ची घटना से पाठकों को परिचित कराया ! वह तो सिर्फ एक ही घटना की लम्बी कहानी थी। लेकिन उससे मिलती-जुलती तथा भयंकर सहस्रों घटनाएँ कि जिनसे हमारा सारा इतिहास भरा पड़ा है पढ़ने को मिलती हैं।

मुसलमानों ने हिन्दुओं पर कभी न जाने कितने और कैसे अत्याचार किये थे इसका सहज ही अनुमान नहीं लगाया जा सकता।

हिन्दुस्तान सिर्फ हिन्दुओं का था। लेकिन न जाने क्यों धीरे-धीरे मुसलमान हिन्दुस्तान में आने लगे। और धीरे-धीरे हिन्दुओं पर अत्याचार करना शुरू कर दिया। और फिर बस करते ही चले गये। हमारा इतिहास उनके अत्याचारों से भरता गया !

हिन्दुओं को चाहिए था कि वे जम कर उनका सामना करते। लेकिन आपस में एकता न होने से हम उनके अत्याचारों को सहते गये !

और फिर, वक्त ने पल्टा खाया तो हम अपने ऊपर हुए अत्याचारों को भूल गये।

हम जागें और कहें— जो हमसें टकरायेगा चूर-चूर हो जायेगा

पूरनपुर —ल्यूसनडर्न

यशस्वी जर्नलिस्ट भाई भारतेन्द्रनाथ जी सादर नमस्ते।

आप जिस महान् कार्य—"एक जिल्द में सभाष्य सम्पूर्ण वेद निकालने में लगे हैं वह स्तुत्य है, बधाई के योग्य है।

आपका शुभाकांक्षी
—विन्ध्यवासिनी प्रसाद
अनुगामी,

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आदरणीय बहन,

जन-ज्ञान मेरी बहन का है तथा वह ऐसी प्रेरणाएं प्रदान करता है कि उसे मैं केवल अपना कहूँ तो सम्भवतः मैं अनधिकार चेष्टा करूंगा। प्रिय बहन जी, यह पत्र तो सब को मार्ग दिखाने वाला है। श्रद्धेय श्री भारतेन्द्रनाथ जी आप के साथ हैं। इस प्रकार का कर्मठ, विद्वान्, तपस्वी सहयोगी जिस के साथ हो उसे आशीर्वाद मांगने की आवश्यकता नहीं है, आशीर्वाद तो स्वयं उसके साथ आगे पीछे उसकी समस्त कामनाओं की पूर्ति के लिये रहेगा। फिर भी भाई अपनी बहिन के आदेश की अवहेलना नहीं कर सकता। भगवान आप की वाणी तथा लेखनी को इतना बल प्रदान करे कि आज का पथ-भ्रष्ट मानव अपना मार्ग खोज के पूर्ण आर्य बन सके तथा संसार में वेद ज्ञान के अभाव में जो मानव दानव तथा जो साक्षर राक्षस हो रहा है उसे वेद मार्ग पर लाकर सुख, शान्ति एवं आनन्द का मार्ग प्रशस्त कर सके।

आपका भाई

—महाराजकिशोर आर्य

लखनऊ

श्रद्धेय,

आपकी प्रचार-प्रणाली को देखकर मन में ऐसी हलचलें उठती हैं कि अब समय अधिक नहीं, ऋषि के कार्य पूरा होने में। "जन-ज्ञान" जैसी पत्रिका जन-मानस पर जो अपना प्रभाव छोड़ रही है, वह अवर्णनीय है। ईश्वर आपके इस कार्य को सफल बनावें। दिसम्बर अंक पढ़कर मन प्रसन्न हो उठा। स्वामी श्रद्धानन्द पर लिखे गए निबन्ध और अंग्रेजी में पं० वेदमित्र ठाकुर की रचनाएँ सुन्दर लगीं। भविष्य में ऐसे ही भगवत् कृपा से निकलती रहे, भगवान् आपके कार्यों को पूरा करें।

—भीम जी प्र० आर्य

हसनपुरा सीवान बिहार

सम्पादक जी !

"अति प्रसन्नता हुई जब यह सूचना पढ़ी कि आप चारों वेदों का हिन्दी भाष्य एक ही जिल्द में प्रकाशित कर रहे हैं। आपने वह कर दिखाया जो आर्यसमाज आज तक न कर सका। वास्तव में आर्यसमाज के इतिहास में प्रथम प्रयास आपने ही किया कि सर्व साधारण तक लागत से भी कम मूल्य में चारों वेदों को प्रस्तुत किया।" मैंने भी संकल्प किया है यदि इस कार्य के लिए मेरी आवश्यकता पड़े तो मैं सहयोग देने के लिए तैयार हूं। मुझ को कोई भी कार्य सौपेंगे, सहर्ष करूंगा।

एक सुझाव—जन ज्ञान में एक पृष्ठ स्वास्थ्य सम्बन्धी लेखों के लिए भी दे दें तो उत्तम होगा। इसका भार मैं उठाने के लिए तैयार हूँ।

—मोहरसिंह आर्य

रिवाड़ी—

आचार्य रजनीश के बारे में मेरे विचार

मैंने २-४ साल पहले बम्बई में आचार्य रजनीश के दो चार भाषण माटुंगा में सुने। वे बोलने में भी बड़े चतुर हैं। हजारों आदमियों की भीड़ में भी सब लोग चुप रहते हैं। नीमच में उनकी एकाध पुस्तकें पढ़ीं। जिनमें महात्मा गांधी जैसे महापुरुष की कड़ी आलोचना की है। उन्होंने गांधी जी के शब्द 'दरिद्रनारायण'

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

को ठीक नहीं बताया और अनेक चर्खा और तकली के काम की भी खिल्ली उड़ाई है। मुझे ऐसा लगा कि वे अपने ही पांव पुजवाना चाहते हैं। नीमच में उनके एक अन्धविश्वासी शिष्य हो गए हैं। जो कि कभी डाढ़ी रखते हैं तो कभी कटवा लेते हैं। उनकी उम्र करीब २५-३० साल की है और उनकी पत्नी की १८-२० साल की। दोनों ने अपने कपड़े भगवा रंग लिए है। कुछ महीने पहले नीमच में आचार्य रजनीश जी के कुछ शिष्य आए थे। जिन्होंने एक बंगले में बड़ा हल्ला गुल्ला मचाया। खुद भी बेहोश हुए और उनकी देखा देखी और दूसरे भी।

—एक पाठक

महोदय सादर नमस्ते !

'जन-ज्ञान' द्वारा तो आप के तथा सम्पादक जी के दर्शन होते रहते हैं। दर्शनों के साथ ही जो कार्य होना महात्माओं द्वारा ज्ञानोपदेश, जन सेवा उत्साह-वर्द्धक जीवन प्रद कार्य को देख कर कर्म योग की साधना, श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी की शैली की चाह ताजा हो जाती है, जो उनकी आर्य समाज में नवजीवन डाला करती थी। सहसा यह भाव होने लगता है कि आर्य समाज के दिन फिर बदलने वाले है। परमात्मा करे दुःखिया आर्य समाज के दिन प्रगति वाले बने। आप दोनों जुटे रहें, प्रभु आप की मदद करेंगे।

कनखल हरिद्वार —वेणीप्रसाद जिज्ञासु

परम स्नेहास्पंद महोदय !

१९६८ ई० से दृढ़ वैराग्य वश अपनी अल्पायु में ही कालेज की पढ़ाई छोड़ कर के संन्यासी वेश में परिभ्रमण कर रहा हूँ। आप के विश्व व्यापी मासिक पत्र "जनज्ञान" का विस्तार देख कर अति हर्ष हुआ, मैंने विचार किया कि आर्य समाजों के सर्व पत्र-पत्रिकाओं में यह आप का "जनज्ञान" विश्व के हितार्थ आदि उपयोगी सिद्ध हुआ और भविष्य में पूर्ण विश्व भर में प्रकाशित होगा, मानव समाज के प्रत्येक पहलू पर सर्वांगीण प्रकाश डालने वाला और प्रत्येक मानव मात्र का हित चिन्तन आप और आप के परिवार सहित यह "जनज्ञान" मासिक सहारनीय है, भारत माता को जिसमें आप जैसे परमार्थ पुरुष-पुङ्गव है, आज मानवता के कल्याणार्थ आप जैसे ही विद्वानों की आवश्यकता है, आप के इस महान् विश्वव्यापी पत्र (जनज्ञान) ने ऋषिवर दयानन्द महाराज का सन्देश प्रत्येक मानव तक पहुँचाने का महान् कार्य किया, इस अल्प समय में जो कार्य आप ने किया वह आज तक कोई भी नहीं कर पाया। आप के इन महान् कार्यों के लिए आप विश्व के इतिहास में अमर रहेंगे, मैंने भी यह संकल्प किया है कि आप के "जनज्ञान" मासिक पत्र का भारत वर्ष के विभिन्न क्षेत्रों में परिभ्रमण द्वारा प्रचार एवं प्रसार करूँगा, मेरा वर्तमान कार्य क्षेत्र वदायूँ में है वर्तमान में कुछ सदस्य वेदों के भी वनाये और अब केवल आप के पुण्य कृत्य देख कर के इसी के कार्य में लग गया हूँ।

आप का अपना हितैषि

—स्वा० ब्रह्मानन्द

गुन्नौर (वदायूं)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

विदेशों के लिए !

महोदय !

सादर नमस्ते !

अंग्रेजी में "जन ज्ञान" के प्रकाशन की सूचना मिली। बड़ी प्रसन्नता हुई। परमात्मा आपको सफलता प्रदान करे। कार्य अत्यावश्यक है और स्तुत्य भी। आर्य समाज और आर्य भाई ही इस महत्व पूर्ण कार्य को कर सकते हैं।

आपने १० ग्राहक बनाने की प्रेरणा की है। यह काम मैं कर दूंगी। हो सका इससे ज्यादा भी। परन्तु एक दो बातें पहले जानना चाहती थी तभी उसी प्रकार के ग्राहकों का चन्दा भेज सकूंगी।

आप का पत्र विदेशी जनता के लिए है या प्रवासी भारतीयों के लिए। साधारण जनता के लिए होगा या केवल उच्च कोटि के वेद के विद्वानों के लिए। मैं दोनों प्रकार के लोगों के विषय में कुछ लिखना चाहती हूँ।

(१) प्रवासी भारतीय अपने संस्कार बड़ी तेजी से भूल रहे हैं। और यूरोप में आकर तो चुन्धया गए हैं। उन्हें अपनी सभ्यता संस्कृति का ज्ञान बिलकुल नहीं अपने इतिहास के प्रति कोई अवस्था नहीं, कोई कुछ बताता ही नहीं। यहाँ हमें दीपावली तक का पता नहीं चलता कि कब है। पहली पीढ़ी को कुछ ज्ञान अवश्य है परन्तु दूसरी पीढ़ी आर्य तो क्या होगी हिन्दू भी नहीं। कृपा पूर्वक आप अपनी प्राचीन सभ्यता, उज्ज्वल इतिहास, अपने रस्म रिवाज के विषय में अवश्य लिखें। यदि आप प्रवासी भारतीयों को हिन्दू भी रख सकें तो आप ने बहुत बड़ा काम कर दिया। कृपा पूर्वक हर किसी को आप नए साल की जनवरी (जिसमें सब हिन्दू त्योहार का वर्णन हो अवश्य भेज दिया करें। क्योंकि समुद्री डाक से पत्र आने में तीन मास लग जाते हैं। खंडनात्मक नहीं—मंडनात्मक साहित्य की अधिक आवश्यकता है। कृपया जनसाधारण के लिए पत्र बनायें।

(२) विदेशी जनता को भी भारतीयता, भारतीय Mythology, धर्म, रस्म रिवाज योग के प्रति उत्सुकता है। वे न्याय संगत व्याख्या चाहते हैं। ऐसा पत्र बहुत लोक प्रिय हो सकता है। और हमारी प्रौढ़ (adult second generation) के लिए लाभ प्रद हो सकता है। यदि विदेशी भी हिन्दू धर्म में दीक्षा ले सकें तभी आप की सफलता है। अपने पत्र के साथ ही साथ कुछ भारत से संन्यासी भी भेजने की कृपा करें—ऐसे संन्यासी जो आ कर यहीं के हो जायें। ईसाई ऐसे ही करते हैं। बौद्धों ने भी ऐसे ही किया था। वे लोग यहाँ आ कर वैदिक धर्म का प्रचार करें—यहाँ रहें और यहाँ के जीवन में रहते हुए हमें कुछ बता सकें। यदि प्रवासी भारतीयों ने Uganda के लोगों को हिन्दू बनाया होता तो यह हालत न होती—वे वहाँ से निकाले न जाते। ऐसी ही स्थिति बाकी देशों की हैं। जैसे भी हो आप जानते ही होंगे। सारे Ireland में एक भी मन्दिर नहीं। England में भी २-३ ही मन्दिर हैं। सिक्खों के गुरुद्वारे हैं। परन्तु हिन्दुओं का कुछ भी नहीं। सम्भवतः आपकी लगन, निष्ठा तथा परिश्रम से हालत सुधर जाए। परमात्मा आपको सफलता दे।

आयरलैंड

भवदीया

—उषादेवी आर्या

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

एक सुझाव

श्री मन्नमस्ते,

आप के द्वारा प्रकाशित "वैदिक दैनन्दिनी" मिली। उसमें जो जो चीजों का संकलन आपने किया है। अत्यन्त उपयोगी है। आवरण इत्यादि बढ़ा ही आकर्षक है। आपके द्वारा ऐसी चीजों का प्रकाशन प्रशंसनीय है। अब और एक काम करें, वह यह है कि 'वैदिक सत्संग गुटका' सुन्दर अवश्य निकालें जिसमें पूरी विषय-वस्तु हो, आवरण, कागज तथा छपाई खूब अच्छी हो।

मेरा सुझाव निम्नलिखित है :—

(१) साइज—$4\frac{1}{2}'' \times 3\frac{1}{2}''$ (पाकेट साइज, जो आसानी से पॅकेट में रखा जा सके)—

(२) आवरण, कागज, छपाई इत्यादि सुन्दर-से-सुन्दर हैं।

(३) सार्वदेशिक धर्मार्य सभा (महर्षि दयानन्द भवन में जो स्थित है) से स्वीकृत पद्धति के आधार पर जो 'सत्संग गुटका' प्रकाशित हुआ है, उसी आधार पर होना चाहिए। किसी भी हालत में पद्धति में परिवर्तन नहीं होना चाहिए। जो मन-मानी पद्धति देकर छापते हैं, यह अनुचित है। मुसलमानों की नमाज एक पद्धति पर है मुसलमान जहाँ भी हैं, उसी पद्धति पर नमाज पढ़ता है। इसी तरह आर्यों को 'संध्या-हवन' की पद्धति एक है और उसके अनुसार ही चलना चाहिए।

(५) सन्ध्या, प्रार्थना (अर्थ संध्या), स्वस्तिवाचन, शान्ति-प्रकरण सामान्य है। सविधि विशेष है, सविधि, संगठन-सूक्त आर्य समाज के १० नियम एवं कुछ मनोहर भजन रहे।

मैंने अपना सुझाव दिया इसके अलावा आप जैसा समझें विषय वस्तुओं का सन्निवेश करें, किन्तु किसी भी हालत में अपनी पद्धति के बाहर कुछ न रहे।

ईसाईयों की पाकेट साइज की बाईबल जैसे हर एक ईसाई के हाथ में रहती है, वैसा मैं प्रत्येक आर्य तथा स्कूल के लड़कों के हाथों में 'सत्संग गुटका' रहना देखना चाहता हूँ।

गुटका सजिल्द हो और आवरण बहुत ही सुन्दर ही होना चाहिए। कागज छपाई सुन्दर।

आर्य जगत् में आप ने जैसा-जैसा प्रकाशन किया है, वह अत्यन्त सराहनीय है। सराहनीय है इस माने में कि आज तक आर्य जगत् में वैसा सुन्दर ढंग का प्रकाशन नहीं हुआ है। ईश्वर आप को धैर्य दें ताकि ऐसे काम में आप का हाथ और सुदृढ़ हो।

चारों वेदों का भाष्य एक जिल्द में छप रहे हैं, वह सुन्दर से सुन्दर हो। cover supper excellent हो। Binding **मजबूत अवश्य हो।**

—चन्द्रशेखर प्रधान
आर्य समाज

आसनसोल

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

महर्षि दयानन्द की दृष्टि में

धर्म क्या है ?

[श्री आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री]

धर्म क्या है और अधर्म क्या है ? यह एक विवेच्य विषय है। नीतिविदों का विचार यह है कि भक्षण और रक्षण आदि चेतनमात्र में स्वभावतः है और पशु एवं मानव इन विषयों में समान हैं। परन्तु रक्षण का विषय एक ऐसी विशेषता है जो मानव में ही पायी जाती है। मानव रक्षण करने में अपनी विशेषता रखता है। धर्म का मानव से सीधा सम्बन्ध है अतः इसका भी लक्षण करना उसके लिए अनिवार्य था। विविध लक्षण धर्म हमारे शास्त्रों में पाये जाते हैं। जो अपने अपने दृष्टि-कोणों में परिपूर्ण हैं। परन्तु जहाँ अन्य आचार्यों ने इस धर्म के विविध सुन्दर लक्षण किये है वहाँ भगवान् दयानन्द ने लक्षणों को स्वीकार करते हुये धर्म का सुधरा और निखरा हुआ स्वरूप रखा है। वे स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश में लिखते हैं—

"जो पक्षपात रहित न्यायाचरण सत्यभाषणादियुक्त ईश्वराज्ञा वेदों से अविरुद्ध है, उसको धर्म और जो पक्षपात सहित, अन्यायाचरण मिथ्याभाषणादि ईश्वराज्ञा भंग वेद-विरुद्ध है उसको अधर्म मानता हूं।"

इसके अतिरिक्त अपने ग्रन्थों में उन्होंने कई स्थलों पर ऐसी ही मिलती-जुलती बातें धर्म के सम्बन्ध में कही हैं। परन्तु यह उनका कथन उनके मन्तव्य में से उद्धृत किया जा रहा है। इसकी विशेषता पर कुछ विचार आगे की पंक्तियों में किया जाता है।

मानव धर्म शास्त्र के प्रवक्ता मनु ने प्रसंगतः धर्म के विषय में कई प्रकार से विचार प्रस्तुत किया है। वेद, स्मृति, सदाचार और आत्मप्रियता को धर्म का चार लक्षण उन्होंने एक स्थल पर स्वीकार किया है। दूसरे स्थल पर उन्होंने धर्म के दश लक्षण स्वीकार किये हैं। यह भी कहा गया है कि धारण करने के कारण यह धर्म कहा जाता है और यह प्रजा का धारक है। महाभारत आदि ग्रन्थों में इसी प्रकार के अन्य लक्षण भी किये गए हैं। इन सभी लक्षणों में धर्म के लक्षण कहे गए हैं वा धर्म के कुछ आवश्यक तत्त्व बताये गये हैं—यह प्रश्न उठता है। विचार करने पर पता चलेगा कि इनमें लक्षण और लक्ष्य दोनों का वर्णन है। वेद, स्मृति, सदाचार और आत्मा की प्रियता धर्म के परिचय के साधन हैं अतः लक्षण हैं। परन्तु धृति, क्षमा आदि १० धर्म के तत्त्व हैं—अतः ये धर्म के लक्षित तत्त्व हैं। जब मानव की प्रवृत्तिमात्र को कसौटी पर कसने का विचार उठेगा तब इन्हीं दो प्रकार की दृष्टियों पर कसा जा सकेगा।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
वैशेषिक दर्शन के कर्त्ता ने पदार्थ धर्म की दृष्टि से धर्म का लक्षण किया है। धर्म आत्मा का गुण है और आत्मा एवं मन के स्व व्यापार का प्रशस्त प्रकार भी है। वैशेषिककार धर्म का लक्षण करते हुए कहते हैं कि जिससे अभ्युदय और निःश्रेयस की सिद्धि हो उसका नाम "धर्म" है। इस धर्म के ज्ञान के लिए वेद आवश्यक है और वेद ईश्वर का ज्ञान होने से प्रमाण नहीं, परम प्रमाण है। वैशेषिक के इस लक्षण में पदार्थ धर्म की जहाँ दृष्टि है वहाँ कर्त्तव्याकर्त्तव्य रूप व्यापार का भी सन्निवेश है। परन्तु इस धर्म के ज्ञान के लिए वेद और ईश्वर दोनों की आवश्यकता है। तात्पर्य यह है कि धर्म आत्मा का गुण है जिस प्रकार रूप आदि अग्नि आदि के धर्म होने से गुण हैं। जब आत्मा इसे व्यापार में लाता है तब यह उसके और मन के सहयोग से सम्पन्न होता है। परन्तु आत्मा और मन का शरीरेन्द्रिय आदि से किया प्रत्येक व्यापार धर्म ही हो—ऐसा नहीं है। जो व्यापार वेद के अनुकूल और ईश्वर के नियम के अनुरूप होता है, वह धर्म है—तद्भिन्न धर्म नहीं।

मीमांसादर्शन में भी धर्म का लक्षण किया गया है। विधि और निषेध की प्रेरणा जिसमें पाई जावे वह धर्म है परन्तु मीमांसाकार ने इस धर्म की परीक्षा में वेद को परम प्रमाण माना है। उसका कारण यह भी प्रकट किया है कि वेद में सृष्टि के नियमों का प्रतिपादन जैसा किया गया है वे वस्तुतः संसार में उसी प्रकार से पाये जाते हैं और किसी प्रकार का वैतथ्य नहीं पाया जाता है। अतः वेद की धर्म के विषय में परम-प्रमाणता है। इसी प्रसंग में एक और भी तथ्य का उद्घाटन महर्षि जैमिनि ने किया है। वह यह है कि वेद के शब्दों के साथ उन्होंने सृष्टि के पदार्थों का औत्पत्तिक सम्बन्ध माना है। तात्पर्य यह है कि सृष्टि के पदार्थों की उत्पत्ति वेद शब्द पूर्वक है। व्यास इस सिद्धान्त के परमपोषक थे। वैशेषिकदर्शन में भी इसका मूल मिलता है। आचार्य जैमिनि के लक्षण में भी धर्म के साथ वेद का बहुत ही अटूट सम्बन्ध है।

वैशेषिकदर्शन पर उपस्कार लिखने वाले शंकर मिश्र ने धर्म को निवृत्ति लक्षण और विधि रूप माना है। सर्वदर्शन संग्रह कर्त्ता ने पुण्यात्मक प्रवृत्ति का नाम धर्म माना है। आचार्य जन धर्म को प्रत्यक्ष नहीं मानते। इसे अनुमानगम्य मानते हैं। इस प्रकार धर्म के विषय में विविध वर्णन मिलते हैं। परन्तु यह एक तथ्यभूत बात है कि वेद का और ईश्वर नियम का सम्बन्ध लगभग सभी में किसी न किसी रूप में पाया जाता है।

वेद के विरुद्ध न होना धर्म का लक्षण है परन्तु वेद का ज्ञान स्वयं ईश्वर की प्रेरणा का फल है। ईश्वर की आज्ञा वा ईश्वर का नियम सृष्टिगत नियम है। उससे भी धर्म की अविरुद्धता होनी चाहिए। वाक्, मन और शरीर से जो भी उत्तम प्रवृत्ति की जाती है वह धर्म है। सत्यभाषण, न्यायाचरण आदि इसी प्रकार की प्रवृत्तियाँ हैं। इन प्रवृत्तियों में न्याय्य वा अन्याय्य का निर्णय करना कठिन कार्य है। कौन-सी प्रवृत्ति वा कर्म न्याय्य है और कौन-सा अन्याय्य—इसका विचार करना सरल कार्य नहीं है। धृत्ति, क्षमा आदि धर्म युक्त कर्म हैं—यह तो ठीक ही है—परन्तु ये धर्म और न्याय्य कर्म की कसौटी नहीं हैं। अतः ये लक्ष्य हैं, लक्षण नहीं। हां! जब ये किसी के द्वारा पालन किये हुए होकर दूसरों के पथ-प्रदर्शक बनते हैं तब ये सदाचार के अन्तर्गत होने से लक्षण की संज्ञा प्राप्त कर लेते हैं। सत्यभाषण आदि से युक्त न्यायाचरण धर्म है परन्तु उसमें पक्षपात का अभाव होना चाहिए। पक्षपात एक प्रकार पूर्व निश्चित धारणा है। यह खोज और सत्यान्वेषण के मार्ग में बाधक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

है। पक्षपात न्याय का भी इसी प्रकार विरोधी है। जहाँ पक्षपात है वहाँ न्याय की सम्भावना नहीं हो सकती है।

अतः सत्यभाषणादि युक्त न्यायाचरण वह है जो पक्षपात से रहित होकर किया जावे। परन्तु फिर भी प्रश्न यह उठता है कि पक्षपात न होने पर भी न्याय और सत्य के निर्णय की कोई कसौटी बनानी ही पड़ेगी ? इसी का समाधान करने के लिए कहा गया है कि ईश्वरीय नियम की अनुकूलता और वेदों की अविरुद्धता आवश्यक है। ये दोनों ऐसी कसौटी हैं कि जिनके आधार पर न्यायाचरण को कस कर परखा जा सकता है और न्याय्यपने और अन्याय्यपने का निर्णय किया जा सकता है। जिन आचार्यों ने वेद को धर्म में परम प्रमाण माना है उनका भी आशय यही है। वे वेद को ईश्वर की आज्ञा व नियम मानकर ही ऐसा कह रहे हैं। उनकी दृष्टि में ईश्वराज्ञा और वेद में अन्तर नहीं है।

परन्तु भगवान् दयानन्द ने धर्म के लक्षण में दोनों को पृथक्-पृथक् रखकर लक्षण को और भी निर्दुष्ट कर दिया है। वेद को धर्म में परम प्रमाण मानने के भी अर्थ दूसरे हो सकते हैं। कोई यह कह सकता है कि वेद से जो प्रतिपादित हो वही धर्म है। परन्तु महर्षि की बात इसको स्पष्ट कर देता है कि जो ईश्वरीय नियम के अनुकूल हो और वेद के अविरुद्ध हो। कोई ऐसा भी मसला उठ सकता है जो वेद में प्रत्यक्षतः प्रतिपादित न दिखाई पड़े। ऐसी स्थिति में यह देखा जावेगा कि वह वेद के विरुद्ध तो नहीं है। वेद के अविरुद्ध होने से वह धर्म कहा जा सकेगा।

महर्षि दयानन्द के द्वारा दिखलाया गया धर्म का लक्षण सर्वथा ही परिमार्जित एवं पूर्ण है। इसमें सभी आचार्यों की दृष्टियाँ समाविष्ट हैं। महर्षि के धर्म मीमांसा का यही स्वरूप है। यहां पर संक्षेप में इसके ही सम्बन्ध में कुछ लिखा गया।

—:o:—

दूरं ऊनेन हीयते

बुरी संगत से मनुष्य अवनत होता है।

जुषस्वेन्द्र पुरुतमस्य कारोः।

हे मनुष्य श्रेष्ठ और कर्मयोगी पुरुष का संग कर।

जानता संगमेमहि।

हम विद्वानों की संगति करें।

ईजानाः स्वर्गं यान्ति लोकम्।

यज्ञ करने वाले सुख को प्राप्त होते हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ऋषि जीवन का एक विस्मृत पृष्ठ

—श्री मोहर सिंह आर्य—

महर्षि दयानन्द सरस्वती के जीवन पर गम्भीर दृष्टि डालिए तो आप जान सकेंगे कि एक परमतपस्वीं ने कुछ वर्षों में ही कितना महान् परिवर्तन कर दिखाया।

अठारह सौ सत्तावन की क्रान्ति के प्रचार में तत्कालीन साधु सन्यासियों का भी बहुत बड़ा योग था। नाना साहब पेशवा ने साधुओं के द्वारा ही अपनी योजना का सन्देश भारत के कोने-कोने में पहुंचाया था। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने भी १८५७ के स्वातन्त्र्य संग्राम में भाग लिया था ऐसी कुछ लेखकों की मान्यता है। सम्वत् १९१२ के कुम्भ के पश्चात् भारत के प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम में विभिन्न प्रदेशों के लोगों को देश की स्वतन्त्रता की प्रेरणा करते रहे। स्वामी जी के जीवन चरित्र के किसी भी लेखक ने सम्वत् १९१२ के अन्त से सं० १९१३ के मध्य तक की घटनाओं का कोई उल्लेख नहीं किया, यही समय १८५७ की क्रान्ति की तैयारी का समय था। इसके पश्चात् तीन वर्ष का समय मौन है। स्वामी जी की स्वलिखित जीवनी में इन वर्षों की घटनाओं का कुछ भी परिचय नहीं मिलता। 'हमारा राजस्थान' के लेखक ने लिखा है :—"उसकी जीवन घटनाओं के संक्षेप विवरण से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि क्रान्ति की तैयारी आदि से उन्हें निकट परिचय करने का अवसर अवश्य मिला। यह बात मान लेना आसान नहीं कि दयानन्द की तरह सहज भावना प्रवण और चेतनावान हृदय और मस्तिष्क का युवक उसके प्रभाव से अछूता बच रहा हो और इस युद्ध की सफलता विफलता की उस पर कोई प्रतिक्रिया न हो।"

'हमारा राजस्थान' के लेखक की पुष्टि में लिखना अप्रासंगिक न होगा। प्रथम स्वतन्त्रतासंग्राम का श्रीगणेश करने वाले हरयाणा के नरपुंगव राव कृष्ण गोपाल थे। जो उस समय मेरठ नगर के कोतवाल थे। राव कृष्ण गोपाल रेवाड़ी के ईस्तमरार राव तुलाराम के चचेरे भाई थे। राव तुलाराम की प्रेरणा से नवाब अब्दुररहमान झज्जर, राजा नाहरसिंह बल्लभगढ़ स्वतन्त्रता सग्राम में कूदे थे। राव तुलाराम को प्रेरणा देने वाले एक युवा संन्यासी थे। क्रान्ति का बिगुल भारत के साधु संन्यासी तथा फकीरों ने ही तो बजाया था। सम्वत् १९१३ के आरम्भ से लगभग सात आठ महीने तक स्वामी जी कानपुर तथा इलाहाबाद के मध्य घूमते रहे। यह भ्रमण यहीं तक सीमित नहीं रहा होगा अपितु हरयाणा पंजाब तथा राजस्थान तक अवश्य पधारे होंगे। ऐसे संकेत उस समय के लिखित साहित्य से मिले हैं।

क्रान्ति के समय राव तुलाराम ने जबकि रेवाड़ी में सेना तैयार कर शासन का प्रबन्ध सम्भाल लिया, उस समय राव मानसिंह, राव महोदय की सेना में बख्शी के पद पर काम करते थे। राव मानसिंह ने एक पुस्तक लिखी है, जिसमें १८५७ के

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हालात भी प्रसंगवशात् लिखे हैं, राव मानसिंह के परिवार वालों के पास एक हस्त-लिखित पुस्तिका भी है जिसके कागज गल सड़ गये, दीमक ने खा रखे हैं, उसमें लिखा था, "राव कृष्ण गोपाल का पत्र लेकर मेरठ से रेवाड़ी में राव तुलाराम के पास एक युवा संन्यासी आए थे।"

आप कह सकते हैं यहाँ ऋषि का तो नाम है नहीं, न जाने कितने युवा संन्यासी उस समय देश के लिए मारे-मारे फिर रहे थे। यह तो ठीक है परन्तु उसी पुस्तक "यादव आभीर कुल प्रदीप" में महर्षि दयानन्द सरस्वती की एक और महत्त्व पूर्ण घटना लिखी है। आज तक किसी भी लेखक ने इस घटना को स्वामी जी के जीवन चरित्र में स्थान नहीं दिया। श्री पं० हरिश्चन्द्र विद्यालंकार ने 'महर्षि दयानन्द सरस्वती' में थोड़ा-सा वर्णन इस प्रकार दिया है :—

"रिवाड़ी के प्रमुख जागीरदार राव युधिष्ठिर सिंह ने दिल्ली दरबार में महर्षि के दर्शन किये थे। उनके निमन्त्रण पर महर्षि जयपुर से २५ दिसम्बर को रिवाड़ी पधारे। राव महोदय की व्यवस्था से वहाँ महर्षि के ११ व्याख्यान हुए। राव महोदय और उनके भाई वैदिक धर्म के अनुयायी वन गये थे। शास्त्रार्थ की चर्चा चला कर भी पंडित महर्षि के स्थान पर नहीं आए।"

१८५७ के शहीद अमर हुतात्मा राव तुलाराम के सुपुत्र थे राव युधिष्ठिर सिंह जी। दिसम्बर १८७६ में महर्षि केसरी दरवार के अवसर पर दिल्ली पहुंचे। जिस स्थान पर महर्षि ठहरे थे, उनके निकट ही रिवाड़ी के रईस राव युधिष्ठिर सिंह जी भी ठहरे हुए थे। राव महोदय नित्य प्रति स्वामी जी के पास जाते थे और उनसे वार्तालाप करते थे। उसी समय राव ने स्वामी जी को रेवाड़ी पधारने का निमन्त्रण दिया था।

महर्षि जयपुर से २५ दिसम्बर १८७८ को रिवाड़ी पधारे। यहाँ तेज सागर पर महर्षि के ११ व्याख्यान हुए। अपने व्याख्यानों में महर्षि ने कृष्ण तथा गौ का महत्त्व बताया। जिससे राव महोदय अत्यन्त प्रभावित हुए। उसी समय इलाका के लोगों की एक विशाल सभा बुलाई। महर्षि ने इस सभा का नाम गौरक्षिणी सभा रखा। उस समय सभा के सदस्यों की संख्या ७० थी। राव युधिष्ठिर सिंह सभा के प्रधान बनाए गये। महर्षि ने सर्व प्रथम अपने कर कमलों से रेवाड़ी मे गौशाला स्थापित की। राव महोदय ने गौशाला के लिए पर्याप्त जमीन दे दी। महर्षि का लगाया हुआ पौधा आज भी रामपुरा रिवाड़ी की भगवत् भक्ति आश्रम में गौशाला के रूप में फल-फूल रहा है। यह स्थान दर्शनीय है। इस आश्रम में गौशाला, कन्या पाठशाला आदि हैं। यह राव वीरेन्द्रसिंह एम० पी० भूतपूर्व मुख्य मन्त्री हरयाणा के प्रबन्धमें है। राव वीरेन्द्र सिंह अनेकों शिक्षण संस्थाए चला रहे हैं। अमर हुतात्मा राव तुला राम तथा अन्य १८५७ के शहीदों की स्मृति में २३ सितम्बर को प्रतिवर्ष रिवाड़ी में शहीद मेला राव वीरेन्द्र सिंह के प्रबन्ध से लगता है। जिस में देश के वड़े-बड़े नेता, मन्त्री आदि शहीदों को श्रद्धान्जलि अर्पित करने आते हैं।

पत्र व्यवहार करते हुए कृपया अपना ग्राहक नंबर अवश्य लिखें।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अम्मी से ध्वनित होती है "ममी" और डैडी से "डैड" बाडी
क्या आप इन्हें छोड़ सकेंगे ?

अंग्रेजी का मोह ?

—प्रेमचन्द शास्त्री

अंग्रेजी भाषा का हम पर इतना प्रभाव पड़ता जा रहा है कि अनपढ़ अशिक्षित और अंग्रेजी का एक भी अक्षर न जानने वाला ग्रामीण भी अपनी साधारण बोलचाल में अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग करने लगा है। खान-पान और रहन-सहन एवं वेश-भूषा पर तो जो प्रभाव पड़ गया है उससे प्रभावित व्यक्ति कहते हैं कि जमाना उन्नति की ओर जा रहा है, और हमें भी अपना स्तर उच्च बनाना है।

हमारे रिश्तों पर अंग्रेजी शब्दों का इतना बुरा प्रभाव पड़ा है कि हम अपने पुराने रिश्तों को भूल ही गये हैं। पुराने रिश्तों के स्थान पर नये रिश्ते आकर खड़े हो गये हैं। इन रिश्तों का न कोई अर्थ है और न कोई भाव। यदि इनका अर्थ ढूंढने लगें तो बड़े-बड़े विचित्र अर्थ सामने आते हैं, जिन से हमारे मानवीय सम्बन्धों का अपमान ही होता है।

हमारा सबसे मुख्य और पहला रिश्ता है—पिता। जब हम पिता बोलते हैं तो इसके बोलते ही हमारे मन में रक्षा करने वाला यह भाव उत्पन्न हो जाता है और इस उत्तम रिश्ते का सम्मान करके हम 'पिता' को 'पिता जी' कहते हैं। सम्मान के लिए हमारे पुराने रिश्तों में 'जी' शब्द का प्रयोग किया जाता है जब कि नए अंग्रेजी रिश्तों में सम्मान सूचक कोई शब्द नहीं।

'पिता' का स्थान नये रिश्ते 'डैडी' ने ले लिया है। अंग्रेजी भाषा में 'डैडी' बोलने से ऐसा लगता है कि मानो हम पिता जी को 'डैड बौडी' (मृत शरीर) कह रहे हों।

इसी प्रकार पिता के पश्चात 'माता' का रिश्ता है। जब हम माता कहते हैं तो इस शब्द के उच्चारण करते ही हमारे मन में उसके प्रति आदर या सम्मान के भाव उत्पन्न हो जाते हैं कि यह हमारा संरक्षण, संवर्धन और निर्माण करने वाली है।

किन्तु 'माता' के स्थान पर अंग्रेजी भाषा के नये रिश्ते 'ममी' ने अपना आसन बिछाया है। आप ने इतिहास में पढ़ा है कि प्राचीन काल में जैसे आज कल मुर्दे को भूमि में दबा कर उसके ऊपर कबर बनाई जाती है, वैसे मिश्र में मुर्दे को भूमि में दबाकर उसके ऊपर ऊँचा सा पिरामिड (स्तूप जैसा) खड़ा कर दिया जाता था, उस पिरामिड के नीचे सुरक्षित मृत शरीर को 'ममी' कहा जाता था। क्या हम

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अपना संरक्षण और सम्वर्धन करने वाली पूजनीय माता का यह सम्मान करें उसे 'ममी' (मृत सुरक्षित शरीर) शब्द से सम्बोधित करें ?

इसी प्रकार हमारा अधिक निकट का पुराना रिश्ता भ्राता और भगिनी का है । अंग्रेजी में भ्राता को 'ब्रदर' और भगिनी को 'सिस्टर' कहते हैं । देखिये इन दोनों सम्मान-योग्य रिश्तों की भी अंग्रेजी भाषा में क्या मजाक की गई है । जब हम 'भ्राता' बोलते हैं तो हम समझते हैं कि हम अपना भरण-पोषण करने वाले बड़े भाई को सम्बोधित कर रहे हैं किन्तु जब 'ब्रदर' कहते हैं तो उसका स्वयं अपना तो कोई अर्थ ध्वनित नहीं होता, किन्तु 'ब्रदर' जैसे दो शब्द (बोथ और बोथेले) अंग्रेजी के कोष में मिलते हैं, इन्हीं से सम्भवत: 'ब्रदर' शब्द की भी उत्पत्ति हुई है । इन दोनों में से बोथ शब्द का अर्थ 'शोखा' है, और बोथेल शब्द का अर्थ है—वेश्यालय । इन दोनों शब्दों का हमारे भरण-पोषण करने वाले 'भ्राता' से क्या सम्बन्ध है ?

इसी प्रकार 'भगिनी' शब्द है । भगिनी बोलने से हम समझते हैं कि यह हमारी सेवा का पात्र है और हम उसके लिए कभी भी कुवाच्य शब्द का उच्चारण नहीं करते और सदा उसकी सेवा के लिये तत्पर रहते हैं । विवाह हो जाने पर भी जब भगिनी अपने से दूर चली जाती है तब भी हम उसकी सेवा करते हैं और जब वह अपने मातृ कुल में आती है तब सामर्थ्य के अनुसार उसे वस्त्राभूषण, धन तथा अन्य सामग्री भेंट की जाती है । किन्तु अंग्रेजी में 'सिस्टर' शब्द का ऐसा कोई भाव नहीं । आप हस्पताल में जायें तो वहां रोगियों की सेवा करने वाली लड़की को सिस्टर कहते हैं । हमारी 'भगिनी' का भाव लेकर ही हस्पताल की नर्स का नाम सिस्टर दिया गया है ।

अंग्रेजी भाषा में 'ब्रदर' और 'सिस्टर' की और भी दुर्दशा की गई है । अदालतों में कानूनों का प्रयोग किया जाता है, यहाँ हमारे प्राचीन रिश्तों भ्राता और भगिनी को भी कानून में बांधने से नहीं छोड़ा गया । अंग्रेजी में 'ब्रदर' से एक शब्द 'ब्रदर-इन-ला' बनाया गया । यह शब्द जहां हमारे बहनोई के लिए प्रयुक्त होता है, वहाँ हम साले को भी 'ब्रदर-इन-ला' ही कहते हैं । इस शब्द का उच्चारण करने से यह नहीं समझा जा सकता कि हम अपने बहनोई को सम्बोधित कर रहे हैं या साले को । इसी प्रकार सिस्टर के साथ भी कानून का सम्बन्ध स्थापित करके एक नया शब्द सिस्टर-इन-ला, घड़ा गया । ननद, साली और भौजाई आदि सबके लिए केवल यह एक ही शब्द है । इसके बोलने से यह नहीं पता चलता कि हम ननद, साली और भौजाई में से किसे बुला रहे हैं ।

अंग्रेजी में हमारे पुराने रिश्तों के लिये दो शब्द 'अंकल' और 'आण्टी' भी प्रचलित हैं । 'आण्टी' शब्द 'आंटे' से बना है । यदि हम अपने चाचा, ताऊ, मामा, फूफा या मौसा—किसी को भी सम्बोधित करना चाहें तो सबके लिए केवल एक ही शब्द—'अंकल' का प्रयोग करेंगे । कोई यह नहीं समझ पायेगा कि हम अपने किस रिश्तेदार को बुला रहे हैं—चाचा को, ताऊ, को, मामा को, फूफा को अथवा मौसा को ?

इसी प्रकार हमारे पुराने रिश्तों—चाची, ताई, मामी, बुआ या मौसी इन सबके लिये केवल एक शब्द 'आण्टी' बोला जाता है । यदि आप दिल्ली से मुरादाबाद जाना चाहते हैं और वहाँ आप की चाची जी भी रहती हैं और मौसी जी भी । चलते समय आप की माता जी ने कहा कि—'बेटा अपनी आण्टी से भी मिल कर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आना, माता जी का अभिप्राय अपनी बहन से था। आप मुरादाबाद पहुँच गये। आप को ध्यान आया कि माता जी ने आण्टी से मिल कर आने को कहा था। आपके पास समय कम था। आप अपनी केवल एक आण्टी (चाची) से मिलने चले गये। जब वापिस दिल्ली आये और माता जी ने पूछा कि तुम्हारी आण्टी का क्या हाल है। तो आप ने बताया कि वह बहुत बीमार है। तब आप की मां पर क्या बीतेगी —यह आप कल्पना कर सकते हैं।

इन रिश्तों को छोड़िये—आप के स्कूल में जो आप की अध्यापिका हैं, आप उसे भी 'आण्टी' कहते हैं और स्कूल में जो सेविका है उसे भी 'आण्टी' ही कहते हैं। आप के घर में छोटे बच्चों को देख-भाल के लिये जो सेविका रखी जाती है आप उसे भी आण्टी ही कह कर पुकारते हैं। बेचारी एक 'आन्टी' की कितनी मुसिबत।

हमारे प्राचीन रिश्तों में तो प्रत्येक छोटे-बड़े सभी रिश्तों के लिए अलग-अलग शब्द हैं और अंग्रेजी भाषा के शब्दों का भण्डार इतना खाली है कि उसमें प्रत्येक रिश्ते के लिए अलग-अलग शब्द नहीं मिलते। और इसलिए अनेक रिश्तों के लिए एक ही शब्द रख दिया गया है। इसलिये अपने सभी रिश्तों को ठीक-ठीक जानिये और अंग्रेजी भाषा का मोह छोड़ दीजिये।

अपने मन को फेर!

अपने मन को फेर, जगत् खुद ही फिर जाएगा।
मिट जाए अन्धेर, दीप जब जल जाएगा।
रोटी रोटी कहने से ना, पेट किसी का भरता है,
इसी तरह कोरी बातों से, कोई नहीं समझता है।
खुद आचरण कर देख, जगत फिर पीछे आएगा।
अपने मन को फेर..............................

दृढ़ता से सत् मार्ग पर, नित नित पाँव बढ़ता चल।
राह में कितने ही रोड़े हों, धीरज से उन्हें हटाता चल।
चलता रहे जो रुके न पल भी, मंजिल वो ही पायेगा।।
अपने मन को फेर..............................

दोष देखना छोड़ और के, अपने दोष निवारा कर।
निन्दा किसीकी कर न कभी, अपनी गलती सुधारा कर।
अधिकारी बन देख, अधिकार स्वयं घर आएगा।
अपने मन को फेर..............................

Dr Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रियायती रेटों पर : आकर्षक चित्र

अनेक साइजों में

चित्र जो सामने के पृष्ठ पर छपा है।

घर-घर में ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज के महापुरुषों के चित्र पहुंचाने की दृष्टि से हमने यह चित्र

लागत से अत्यन्त कम मूल्य पर देने का निश्चय किया है—

अब आप का कर्त्तव्य है कि अधिक से अधिक मंगाकर

इनका प्रचार करें—

११—२०×२० इन्च का अत्यन्त आकर्षक सुन्दर बढ़िया कागज पर चित्र जो सर्वत्र १॥) में बिक रहा है—बिल्कुल वही चित्र ५०) सैकड़ा

२—१०×१० इंच का यही चित्र—बढ़िया कागज पर—२५) सैकड़ा

३—१०×१० इंच का महर्षि दयानन्द का चित्र—२५) सैकड़ा

४—१५×२२ इंच का १० नेताओं का चित्र दोनों ओर पत्ती लगा हुआ—२५) सैकड़ा

ध्यान रहे कि स्टाक थोड़ा है। दुबारा छपने पर इस मूल्य पर नहीं मिलेगा—

मंगाइये—और घर-घर में ऋषि चित्र पहुंचाइए—

—सम्पादक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्यसमाज के प्रकाश स्तंभ

चित्र व कैलेण्डर

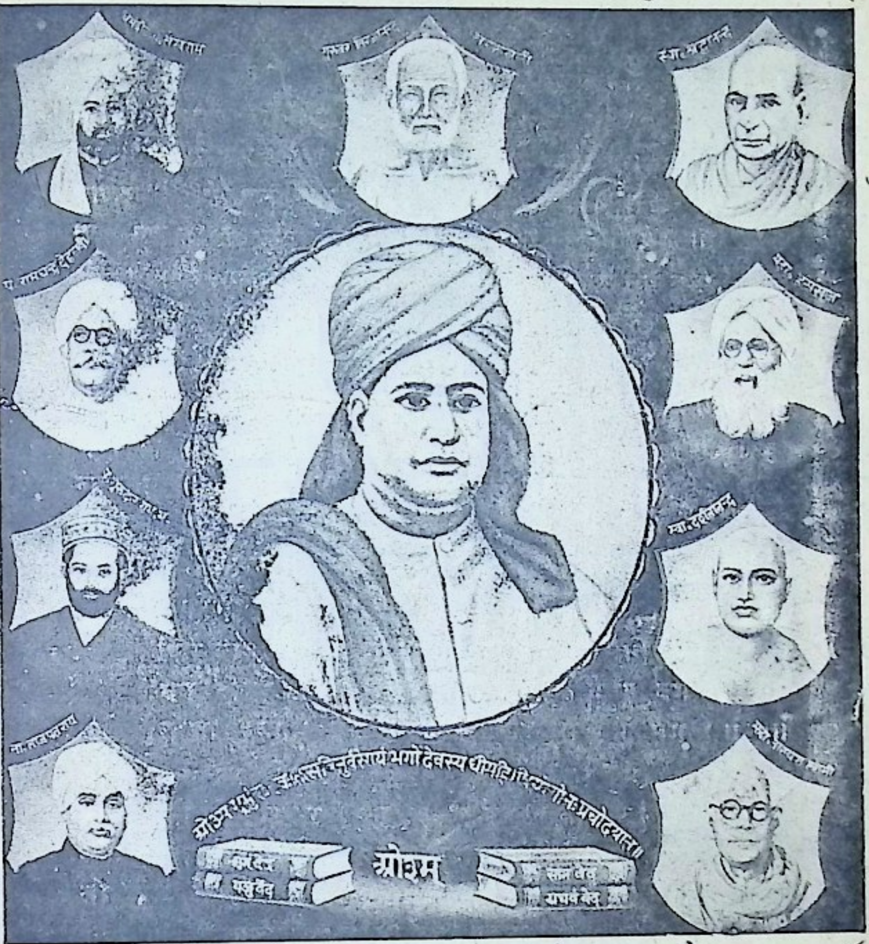

इस चित्र को घर-घर में पहुंचाने का

व्रत लीजिए

दयानन्द-संस्थान, १५६७, हरध्यानसिंह मार्ग, नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अधिक से अधिक सत्यार्थप्रकाश वितरण कर महर्षि का संदेश फैलाइए।

अपनी

आवश्यकताओं

वर-वधू

नौकरी आदि

के लिये

जनज्ञान

में

विज्ञापन दीजिए

———

धन भेजते समय अपना ग्राहक नम्बर अवश्य लिखें।
वी० पी० न मंगाएं।

—सम्पादक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

स्व० पं० चमूपति एम० ए०

क्या वृक्षों में आत्मा है ?

क्या वृक्षों में जोव है! यदि हां तो क्या वृक्ष काटने पर जीवहत्या के अपराधे होते हैं? देव दयानन्द की दृष्टि से प्रश्नों का विद्वत्तापूर्ण समाधान

अन्त्येष्टि के समय जीव को विविध गतियों पर विचार करने का स्वाभाविक, और अत एव सबसे उत्तम, अवसर होना है। उस समय एक मन्त्र पढ़ते हैं:—

सूर्यं चक्षुषा गच्छ वातमात्मना दिवं च गच्छ पृथिवीं च धर्मभिः।
अपो वा गच्छ यदि तत्र ते हितमोषधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः॥

अथर्व १८-२-७

अर्थात् हे जीव! तू नेत्रेन्द्रिय के द्वारा सूर्य को प्राप्त हो, प्राण द्वारा वायु में। अपने धर्म द्वारा द्युलोक और पृथिवी में जा। या तो कर्म को प्राप्त हो, यदि तेरा वहां हित हो, अथवा ओषधियों में जा। शरीरों के साथ इन सब स्थानों का गमन तथा अधिष्ठान कर।

इस मन्त्र के पूर्व भाग में भौतिक शरीर तथा आत्मा का भिन्न-भिन्न धर्म बताकर दो गतियां वर्णन की हैं—एक वहां जहां क्रिया होती है, दूसरी ओषधियों में। जिस गति से आत्मा का कल्याण हो, वही उसको मिलती है। यदि उसके पूर्व जीवन की प्रवृत्तियां इतनी जघन्य हैं कि उन्मत्त रोगी के सदृश कुछ समय क्रिया-क्षेत्र से अलग रखने से उसका सुधार हो सकता है तो ओषधि-जीवन उसके लिए उत्तम है। इसमें इच्छापूर्वक क्रिया का अभाव रहता है और यदि क्रिया-क्षेत्र में जीव के कल्याण की संभावना है तो उसे अन्य योनियों में लगाया जाता है।

अथर्व वेद के ओषधिसूक्त (का० ८ सू० ७ मन्त्र ६) में कहा है:—

जीवलां नघारिषां जीवन्तीमोषधीमहम्। अरुन्धतीमुन्नयन्तीं पुष्पां मधुमतीमिह हुवे ऽस्मा अरिष्टतातये।

यहां भी 'ओषधी' के लिए 'जीवन्ती' विशेषण आया है जिसका अर्थ है जोनेवाली। कोई णिच् प्रत्यय कर इसका अर्थ जिलानेवाली कर सकते हैं, परन्तु उस

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अवस्था में 'जीवलाम्' विशेषण व्यर्थ होगा जिसका अर्थ है, 'जीवन देने वाली'। अतः 'जीवन्ती' का अर्थ जीनेवाली ही करना चाहिए।

मनु अ० १२ में जीव की कर्मानुसार गतियों का वर्णन आता है। श्लोक ४२ में लिखा है:—

स्थावराः कृमिकीटाश्च मत्स्याः सर्पाश्च कच्छपाः।
पशवश्च मृगाश्चैव जघन्या तामसी गतिः॥

अर्थात् वनस्पति, कृमि, कीट, मछली, सांप, कछुआ, पशु, मृग सबसे नीच तामसी गति है।

ऋषि दयानन्द ने इस श्लोक का उद्धरण सत्यार्थप्रकाश के नवम समुल्लास में कर इस सिद्धान्त का समर्थन किया है।

महाभारत शान्तिपर्व अ० १८४ में भरद्वाज के प्रश्न करने पर भृगु यह उत्तर देते हैं:—

ऊष्मतो म्लायते वर्णं त्वक्फलं पुष्पमेव च
म्लायते शीर्यते चापि स्पर्शस्तेनात्र विद्यते ॥११॥
वाय्वग्न्यशनिनिष्पेषैः फलं पुष्पं विशीर्यते।
श्रोत्रेण गृह्यते शब्दस्तस्माच्छृण्वन्ति पादपाः ॥१२॥
वल्ली वेष्टयते वृक्षं सर्वतश्चैव गच्छति।
नह्यदृष्टेश्च मार्गोऽस्ति तस्मात्पश्यन्ति पादपाः ॥१३॥
पुण्यापुण्यैस्तथा गन्धैर्धूपैश्च विविधैरपि।
अरोगाः पुष्पिताः सन्ति तस्माज्जिघ्रन्ति पादपाः ॥१४॥
पादैः सलिलपानाच्च व्याधीनाञ्चापिदर्शनात्।
व्याधिप्रतिक्रियत्वाच्च विद्यते रसनं द्रुमे ॥१५॥
वक्त्रेणोत्पलानालेन यथोर्ध्वं जलमाददेत्।
तथा पवनसंयुक्तः पादैः पिबति पादपः ॥१६॥
सुखदुःखयोश्च ग्रहणाच्छिन्नस्य च विरोहणात्।
जीवं पश्यामि वृक्षाणामचैतन्यं न विद्यते ॥१७॥

अर्थात् गरमी से इनका रंग बिगड़ता है। त्वचा, फल और पुष्प कुम्हलाते और झड़ते हैं। अतः वृक्षों में स्पर्श है ॥११॥ वायु, अग्नि और विद्युत् के आघात से फल और पुष्प झड़ते हैं। शब्द के लिए श्रोत्र चाहिए। अतः इनमें श्रोत्रेन्द्रिय है। ॥१२॥ वृक्ष को बेल लपेटती और उसके चारों ओर जाती है। रास्ता बिना दृष्टि के नहीं दीखता अतः वृक्ष देखते हैं ॥१३॥ पवित्र अपवित्र गन्धों तथा धूपों से वृक्ष नीरोग और फलवान् होते हैं अतः वृक्ष सूंघते हैं ॥१४॥ जड़ों से पानी पीने और रोगों के देख जाने तथा उनके प्रतिकार से वृक्षों में रसनेन्द्रिय का अनुमान होता है ॥१५॥ कोंपल की डंडी को मुख बना कर जैसे ऊपर जल को ले जायं वैसे वायु के साथ मिल कर जड़ों से रस खींचते हैं ॥१६॥ सुख दुःख के ग्रहण करने तथा टूटने पर न उगने से मैं वृक्षों में जीव देखता हूँ। ये अचेतन नहीं हैं ॥१७॥

महाभारत के लेख वैज्ञानिक नहीं हैं। केवल लोक-प्रचलित विज्ञान को अनिश्चित लोकभाषा में कह दिया है। वृक्षों में जीव की विद्यमानता है—इतना ही मूल सिद्धान्त है। इसके अतिरिक्त कल्पना का चमत्कार है। सर जगदीशचन्द्र वसु ने भी अपने परीक्षणों के आरम्भ-काल में इसी प्रकार की कल्पनाएँ उठाई थीं, परन्तु पीछे जैसे हम आगे चल कर दिखायेंगे, वह सावधान हो गये। महाभारत का प्रामाण्य

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वैज्ञानिक नहीं, ऐतिहासिक है। जन साधारण के विश्वास का चित्र मात्र है। वैज्ञानिकों के अंगीकार करने योग्य केवल अन्तिम श्लोक का उत्तरार्ध है:—

जीवं पश्यामि वृक्षाणामचैतन्यं न विद्यते

इस मूल तार्किक धारणा के चारों ओर कल्पना का ताना तना है। शब्द एक शक्ति है, उसका धमाका (जब कि उसकी प्रबलता पर्याप्त हो) अचेतनों पर भी पड़ता है। परन्तु श्रोत्रेन्द्रिय के पीछे मन है। उसके लिए शब्द का अर्थावगमन चाहिए। रङ्ग अचेतनों का भी बदलता है। रास्ता अन्धे भी ढूढ़ लेते हैं। इससे चेतनतापूर्वक स्पर्श और दृष्टि की कल्पना निराधार है। रसारोह तथा श्वासादि वास्तव में जीवन के लक्षण हैं। सुख-दुःख की अनुभूति का विवेचन हम आगे चल कर करेंगे।

उपर्युक्त प्रमाण हमने यह सिद्ध करने को दिये हैं कि आर्य साहित्य में वनस्पतियों में आत्मा के अस्तित्व की भावना बहुत पुरानी है। जहाँ पाश्चात्य लोग पशुओं में भी जीव की सत्ता इन्हीं दिनों स्वीकार करने लगे हैं, और तो और स्त्रियों में आत्मा होती है, यह सचाई वहां का अर्वाचीन आविष्कार है, वहां हमारे यहां स्त्री और पशु का तो कहना ही क्या है, ओषधियों में भी चेतनता का अनुभव पुरातन काल से किया गया है।

सर जगदीशचन्द्र वसु ने जब पिछले वर्षों यह प्रतिपादित किया कि ओषधियों की जीवन-क्रियाएँ उसी जीवन-शक्ति का परिणाम हैं, जिसका करिश्मा पशुजगत् में रक्त-प्रवाह, श्वासोच्छ्वास, अंग प्रत्यंग के युगपत् विकास आदि के रूप में प्रकट हो रहा है, तो बड़े-बड़े वैज्ञानिकों ने वसु महाशय की खिल्ली उड़ाई थी। घोर विरोध के पश्चात् आज वैज्ञानिक संसार ने इस तथ्य को अङ्गीकार किया है कि प्राणी होने की दृष्टि से मनुष्य, पशु और ओषधि-जगत् एक ही जीवन-लड़ी के दाने हैं।

हम इस लेख में प्रथम उन परीक्षणों और युक्तियों का संक्षिप्त वर्णन करेंगे जो वसु महाशय के इस चमत्कारिक आविष्कार का आधार हैं। फिर वसु महाशय की धारणा की शास्त्रीय विवेचना कर पशुओं और ओषधियों की जीवनावस्था के भेद पर दृष्टि डालेंगे। अन्त में इस आविष्कार के जीवहिंसा पर प्रभाव-अप्रभाव की आलोचना वसु महाशय के अपने लेखों की छाया में करेंगे। हमारे लेख का अभिप्राय सर्वसाधारण को इस विषय का बोध प्रदान कराना है, तो भी विषय वैज्ञानिक है, कुछ परिभाषाओं के प्रयोग के लिए हम पाठकों से क्षमा चाहते हैं। विषय के महत्त्व को ध्यान में रख कर पाठकों को कुछ न कुछ परिश्रम तो सहना ही चाहिए।

जीवन क्या है ?

पाठकों की सुविधा के लिए हम सबसे पूर्व जीवन-अजीवन के भेद का दिग्दर्शनमात्र कराते हैं। जीवित प्राणियों में साधारणतया तीन विशेषताएं पाई जाती हैं— (१) स्वशरीर धारण की (Sustenant)। (२) सन्तानोत्पत्ति की (Generative)। (३) अंग प्रत्यंग के परस्पर सहाकारित्व की (Correlative)।

(१) स्वशरीर-धारण की शक्ति का अभिप्राय यह है कि प्राणियों के शरीरों के अणु परिस्थिति के प्रभाव के कारण प्रतिक्षण क्षीण होते हैं। इस क्षय का प्रतिकार करने को इनके शरीरों ही में निरन्तर ऐसी क्रियाएं होती रहती हैं जो पल-पल में होने वाली त्रुटि की साथ साथ पूर्ति करती रहती हैं। पूर्ति त्रुटि से अधिक हो तो विकास, और त्रुटि पूर्ति से अधिक हो तो ह्रास होता है। स्वयं जीवन में शरीर का सामग्री का व्यय होता है और स्वयं जीवन द्वारा उस व्यय की स्थान-पूर्ति की आय भी होती है। यथा पशुओं को ओषजन और पौधों को प्रधानतया कार्बन चाहिए।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

श्वासोच्छ्वास से यह कार्य स्वयं हो जाता है। इसी प्रकार रक्त तथा जीवन-रस (Sap) के प्रवाह से क्रमशः इन दोनों प्रकार के प्राणियों के कायिक यन्त्रों की यथेष्ट स्थिति तथा वृद्धि होती रहती है।

(२) सन्तानोत्पत्ति का अर्थ अपनी जाति के एक वा अनेक प्राणियों को जन्म देना है। मनुष्य ऐसा करते हैं, पशु ऐसा करते हैं, और पौधे भी ऐसा करते हैं, धातु ऐसा नहीं करते। जीवित प्राणियों की यह विशेषता वैज्ञानिकों को जीव की पृथक् सत्ता स्वीकार करने पर सबसे अधिक बाधित करने वाला हेतु है। विकास-वादियों की धारणा थी कि जीवन की उत्पत्ति अचेतन पदार्थों में किसी विशेष क्रिया का भौतिक फल सिद्ध हो जायगी। परन्तु अब तक अचेतन के चेतन में स्वतन्त्रतया परिणत होने की कोई साक्षी नहीं मिली। जीवन जीवन ही से उत्पन्न होता है,* कहीं बीज कहीं वीर्य—जीवित देह का अंश ही दूसरे जीवित देह को प्रादुर्भूत करता है। बिना इस अंश के प्राणी की उत्पत्ति का कोई प्रकार देखा नही गया, चेतन अचेतन के विभेद का यह सबसे प्रबल साधन है।

(२) अंग प्रत्यंग का सहकारित्व उस विशेष सम्बन्ध का परिणाम है जो प्राणियों के शरीर के भिन्न-भिन्न अवयवों में केवल प्राकृतिक संयोग की ही सृष्टि नहीं करता, किन्तु उनके अन्योऽन्याश्रय तक का कारण होता है। मज्जातन्तुओं (Nerves) का जाल जो शरीर के समस्त अवयवों में छाया हुआ है जैवी चेतनता की भौतिक कला प्रतीत होता है। यह तन्तु कोष्ठों (cells) का समूह है जो विविध रचनाओं के विविध रूपों में सारे प्राणिकाय को आच्छादित करते हैं। एक कोष्ठ को आघात (impulse) हो जाए सही, सारा शरीर उस से सचेत होता है। बाह्य परिस्थिति का शरीर की वृद्धि तथा संकोच पर इन्हीं तन्तुओं (nerves) की सूक्ष्म उत्तेजना (excitement) द्वारा प्रभाव पड़ता है। ताप और वायु की आर्द्रता तथा शुष्कता इन्हीं मज्जाकोष्ठों द्वारा शरीर के अन्तःस्थ पट्ठों (muscles) को सुकेड़ती तथा फैलाती है। इस सुकड़ाव तथा फैलाव का फल पशुओं में हृदय की धड़कन और पौधों में रस-नालियों की गति है जिससे क्रमशः रक्त एवं रस का समस्त देह में संचार होता है।

इस प्रकार यह तीसरी विशेषता पहली विशेषता की सहायक है। प्राणियों के अवयवों में है तो संयोग-संबन्ध ही, जो अचेतनों के अङ्ग प्रत्यंग में भी होता है, परन्तु जहाँ अचेतनो के अङ्ग एक-दूसरे से अलग किये जा सकते हैं और उसका अङ्गों की भौतिक सत्ता पर कोई मार्मिक प्रभाव नहीं होता, वहाँ चेतनों के अङ्गों में एक

*The thoroughly logical evolutionist simply says, sometimes some how, somewhere some way living matter. in its simplest form arose From nonliving matter. But he has not seen that happening, nor does he attempt to say when, where, or really how it happened.Evolution the Way of Man by Kellog P. III. Only life produces life.

'A Second difficulty which confronts the geologist is the lack of evidence as to the origin of the great Phyla into which the animal and plant kingdom are divided'. Evolution in the Light of Modern Knowledge. Chapter on Geology by Dr. William W. Watts Sc. D.,L. L. D., M. Sc., F. R. S.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

विशेष प्रकार की पारस्परिक एकता है। एक अङ्ग का जीवन अन्य अङ्गों के जीवन का सहायक है। यह सहायकता मज्जातन्तुओं की संकीर्णता (complexity) के साथ बढ़ती जाती है। यथा किसी पशु का एक इन्द्रिय—उदाहरणतया श्रोत्र या घ्राण या चक्षु—बिगाड़ दीजिए। सारे शरीर के विकास पर उसका हानिकर प्रभाव होगा, अचेतनों में यह बात नहीं।

मज्जातन्तु-संस्थान और रक्त-प्रवाह

हम ऊपर कह चुके हैं कि जीवित प्राणियों के देह के जीवन का आधार मज्जा तन्तुओं का जाल है, जो हृदय आदि मर्म-स्थानों के साथ जुड़ा हुआ है। ताप और वाष्प की एक विशेष सीमा इन मज्जा-तन्तुओं पर हितकर प्रभाव डालती है। इस प्रभाव का रूप वैद्युत है। विद्युत् का यह धक्का हृदय तक पहुँच कर उसे सुकेड़ता है, जिससे उसके अन्दर का संचित रक्त बाईं ओर की निष्कासक नाड़ियों (arteries) में जाता है। नाड़ियों के घूम-घुमाव में रक्त अशुद्ध होता है। प्रवेशक नाड़ियों द्वारा जिन्हें अंग्रेजी में (veins) कहते हैं, यह रक्त हृदय के एक और मार्ग में आता है, वहाँ से दाईं ओर यकृत् में जाता है। ओषजन के संसर्ग से शुद्ध होकर बाईं ओर की प्रवेशक नाड़ियों द्वारा फिर हृदय में पहुंचता है और बाईं ओर की निष्कासक नाड़ियों में चला जाता है। पशु जगत् की स्व-शरीर-धारक क्रिया का मूल यही हृदय का संकोच और विकास है।

रसारोह

पौधों में रक्त का स्थान रस (sap) ने लिया है। सर जगदीशचन्द्र वसु के परीक्षणों से पूर्व रस के निरन्तर आरोह का कारण वृक्ष के मूल का दवाव समझा जाता था। वनस्पतिशास्त्रियों का विचार यह था कि मूल का कार्य एक पम्प का सा है जो पानी को ऊपर फेंकता है। वसु महाशय ने मूल को काट कर पौधे कटा सिर पानी में रखा। पानी का चढ़ाव दीर्घ काल तक स्थिर रहा। दूसरा सिद्धान्त यह था कि पौधे पत्रों के लोम कूपों द्वारा श्वासोच्छ्वास करते हैं। इस क्रिया में पौधा पानी बाहर निकालता है। निकसित जल का स्थान रिक्त हो जाने से नीचे के पानी पर खिंचाव पड़ता है। कल्पना यह थी कि जल का आरोह इसी खिंचाव का फल है। वसु महोदय ने पत्ते नोच डाले त्वचा द्वारा वाष्प के बहिर्गमन का निरोध पौधे पर वेसलीन की अत्यन्त पतली परत लगा देने से किया। रसारोह स्थिर रहा। रसारोह की क्रिया वृक्ष के किसी अवयव विशेष तक परिमित नहीं—इसके परीक्षण के लिए पौधे के प्रत्येक अङ्ग का उपर्युक्त अवलोकन पृथक्-पृथक् किया। परिणाम यह निकला कि रसारोह की क्रिया किसी समस्त शरीरव्यापी कला का चमत्कार है।

पौधे के इधर-उधर का ताप घटाया बढ़ाया तो पता लगा कि पशु शरीर के सदृश एक सीमा तक ताप की वृद्धि रसारोह की गति को तीव्र करती है और एक सीमा के नीचे ताप की न्यूनता रसारोह को रोक देती है। शेषोक्त सीमा विकसित पौधों में १४०० सें० है और विकास पारहों में २२०० सें०।

पौधे को क्लोरोफार्म से अभिभूत कर देने पर उसका रसारोह धीमा पड़ जाता है। समय अधिक हो जाय तो सर्वथा निरुद्ध हो जाता है, जो पौधे की मृत्यु है। विष देने से शेषोक्त परिणाम शीघ्र घटित होता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वायुमंडल की शुष्कता की अवस्था में पत्रों द्वारा जल का निकास बढ़ जाता है। यदि इस क्रिया के फलस्वरूप पौधे की आन्तरिक आर्द्रता का ह्रास रसारोह का कारण होती तो शुष्कता (अवृष्टि) रसारोह की गति को तीव्र कर पौधे के विकास पर अनुकूल प्रभाव डालती, अवस्था इसके विरुद्ध है। शुष्कता वृक्षों के जीवन की प्रगति को घटाती है।

इस प्रकार यह सिद्ध हो गया कि पौधे का रसारोह कोई यान्त्रिक (mechanical) क्रिया नहीं, किन्तु पशुओं के रक्त-संचार के सदृश (Protoplasmic) कलल रस सम्बन्धी क्रिया है। देखना यह चाहिए कि क्या पौधों में भी रस-प्रवाह का यन्त्र वैसा ही है जैसे पशुओं में?

अन्वय-व्यतिरेक की विधि से वसु महोदय ने उस यन्त्र का पता भी लगाया है। उन्होंने Electric Probe वैद्युत एषणी नामक सूक्ष्म यन्त्र बनाया। उससे पौधे की छाल से डंडी के केन्द्र तक एक-एक सूक्ष्मतम परत को टटोला। अन्त में cortex नामके त्वगवयव के सबसे अन्दर के परत में उन्हें तन्तु मिले। उन तन्तुओं में धड़कन पाई गई। वह धड़कन पशु शरीर के सदृश किसी एक पट्ठे यथा हृदय तक परिमित नहीं, किन्तु वृक्ष, उसकी डंडियों तथा नालियों सबकी लम्बाई में पाई जाती है। इस धड़कन का रूप कौष्ठिक गति के समान समझ कर उन्होंने निश्चय किया कि वृक्ष का हृदय एक स्थान पर केन्द्रित नहीं, किन्तु विकीर्ण है। (Physiology of the Ascent of Sap by J. C. Bose)

हृदय की धड़कन का हेतु मज्जातन्तु हैं। पौधे में इनका स्थान Phloem में फैली हुई कोष्ठ-नालिकाएँ हैं, इनका स्थान-निर्णय अतीव सूक्ष्म वैद्युत यन्त्रों से हुआ है, (Life-Mechanism of Plants by J. C. Bose)

सार यह कि हमारे मज्जातन्तुओं के स्थान में पौधा अपने मज्जातन्तु रखता है। उसके उत्तेजन से हमारे हृदय की भाँति पौधे का विकीर्ण हृदय संकुचित तथा विकसित होता है। इसस हमारे रक्त संचार की भाँति उसका रस-संचार हो कर उसकी जीवन-सामग्री का योगक्षेम किया जाता है। पौधे का रक्तवाही यन्त्र इस अंश में अधूरा अवश्य है कि इसमें निष्कासक नलिकाएँ तो हैं, प्रवेशक नलिका नहीं।

यह हुई पौधे की पशुओं से पहली विशेषता अर्थात् स्व-शरीर धारण में समता। दूसरी और तीसरी विशेषता पर अधिक विस्तार से लिखने की आवश्यकता नहीं। दूसरी विशेषता स्वयं सिद्ध है और तीसरी पहली ही मे समाविष्ट है।

वेदना का प्रश्न

इस प्रकार जहाँ तक प्राणित्व का सम्बन्ध है, पौधे और पशु में कोई मौलिक अन्तर नहीं। प्राणित्व के पश्चात प्रश्न वेदना अर्थात् मानसिक क्रिया का है। हमारे पुराने शास्त्र तथा आधुनिक जीवन-विज्ञान इस विषय में सहमत है कि जीवन life और वेदना (Consciousness) का आधार एक ही चेतन पदार्थ को मानना चाहिए,* एक ही चेतनता जीवन तथा वेदना का अवलम्ब है। पशुओं की वेदना का भौतिक साधन मज्जातन्तु ही माने जाते हैं। इन्हीं की उत्तेजना से जैसे हम ऊपर कह चुके

*The Response of the Living and the Non-Living by. J.C. Bose.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हैं—रक्त-संचार तथा प्राणापान आदि क्रियाएँ होती हैं। वैद्युत आघातों का प्रत्युत्तर जैसे पशु और पौधे देते हैं, ठीक उसी प्रकार धातु भी देते है। परन्तु धातुओं की उत्तेजना का फल न जीवन है न वेदना। इस लिए उन्हें चेतन नहीं कहा जा सकता। चेतन पौधे, पशु और मनुष्य हैं।

आत्मा का लक्षण

हमारे शास्त्रों में जीव का लक्षण 'चित्' किया गया है और लिङ्ग सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, ज्ञान (न्याय द०) अथवा प्राण, अपान, निमेष, उन्मेष, इन्द्रियान्तर्विकार, मन, गति, इत्यादि (वैशेषिक दर्शन) बताए गए हैं। लक्षण तो पदार्थ का स्वभाव होता है। उसके अभाव में पदार्थ का अभाव माना जाता है। परन्तु लिङ्ग की वह बात नहीं। लिंग का भाव तो पदार्थ के भाव ही में होता है, परन्तु अभाव के लिए पदार्थ का अभाव आवश्यक नहीं। उपर्युक्त लिङ्गों में कई वह हैं जो जीवन से सम्बन्ध रखते हैं, यथा प्राणापान, निमेषोन्मेष, इत्यादि। कुछ वेदना से सम्बन्ध रखते हैं यथा, सुख, दुःख ज्ञान, इत्यादि। कुछ उभयात्मक हैं, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, इन्द्रियान्तर्विकार इत्यादि।

पशुओं में मन*

पशुओं में जीवन के अतिरिक्त वेदना भी है। वेदना का साधन जिसे अन्तःकरण कहते हैं, मन है। पशुओं में मन की विद्यमानता का सबसे स्पष्ट चिह्न उनकी इच्छा है। उन्हें सिखाया-समझाया जा सकता है। जो क्रियाएँ उन्हें स्वभाव से नहीं आतीं, वह शिक्षण से आ जाने का सम्भावना है। एलबर्फेल्ड के घोड़े Cube-root (घनमूल) के प्रश्न निकाल सकते हैं। Lola (लोला)नामक कुत्तिया को दिन की गति से समय का निश्चय करना समझा दिया गया। यह बात पौधों में सम्भव नहीं है।

पौधों में मन नहीं

पौधों में मज्जा-तन्तुओं को वैद्युत आघात द्वारा उत्तेजित करने और उस आघात का सूक्ष्म प्रत्युत्तर पाने से वसु महाशय का प्रारम्भ में अनुमान यह था कि पौधे सुख-दुःख अनुभव करते हैं। महाभारत के ऊपर उद्धृत किये श्लोकों में भी ऐसा कहा गया है। परन्तु वैद्युत आघात से उत्तेजित तो धातु भी होते हैं और ये भी उत्तेजना का प्रत्युत्तर ठीक पौधों की तरह देते हैं। सम्मोहन और विषप्रदान का प्रभाव भी उभयत्र एक-सा है। वसु महाशय ने धातुओं के उत्तेजन के फल स्वरूप कुछ स्थिर रेखाएँ देख कर आशा की थी कि इस परीक्षण के आधार पर प्राणी-जगत् की भांति धातुओं तक में मानसिक क्रिया की विद्यमानता सिद्ध होकर पशुओं में पाई जाती स्मृति शक्ति का भौतिक स्पष्टीकरण हो जाएगा, परन्तु अनुभव ने इन्हें बताया कि उनका क्षेत्र प्राणियों और पौधों की शरीर-रचना तो हैं, मनो-वृत्तियां नहीं। शेषोक्त क्रियाओं की खोज किसी मनो-वैज्ञानिक का काम है।

'महाबोधी'नाम का आँगलभाषा का बौद्ध पत्र कलकत्ते से निकलता था। उस में किसी प्रश्नकर्ता के उत्तर में श्री वसु महाशय का पत्र प्रकाशित हुआ था। उस का प्रासङ्गिक भाग हम नीचे दिए देते हैं :—

'प्रतीत यह होता है कि चेतनता पौधे में पशु की अपेक्षा अधिक विकीर्ण है।

*Encyclopaedia Britannica—Article on Biology.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भय मृत्यु से बुरा है। पौधों में भय की विद्यमानताकी कल्पना का कोई आधार नहीं।'

(Modern Review for July 1925)

कहाँ तो स्मृतिशक्ति का भौतिक स्पष्टीकरण करने की आशा और कहां अब यह स्थिति कि भय की कल्पना तक पौधे में नहीं की जा सकती ! मनोविज्ञानी जानते हैं कि भय प्रतिकूल अनुभव (दुःख की पूर्व वेदना) का परिणाम मात्र है—यह प्रतिकूल अनुभव चाहे इस जन्म में हुआ हो या पूर्व जन्म में। दुःख की स्मृति का फल भय है और सुख की स्मृति का आशा। वसु महाशय हिंसा अर्थात् दुःख की सम्भावना सम्बन्धी प्रश्न ही का उत्तर दे रहे थे। अतः उन्होंने केवल भय की वर्तमानता का निराकरण किया। अर्थापत्ति से यह निराकरण आशा की वर्तमानता का भी समझना चाहिए।

दिसम्बर १९२४ के माडर्न रिव्यू में वसु महोदय का एक लेख छपा है जिस में वह स्वयं प्रश्न करते हैं—'क्या पौधों में अनुभूति है ?' इसका उत्तर दिया है:—'इसमें हाँ या ना करने के लिए स्वयं पौधा बनना चाहिए'। इसके आगे पौधे में जो जो शक्तियां हैं उनकी सत्ता का वर्णन किया है। पौधे के मज्जातन्तु-संस्थान में कमी है मस्तिष्क की, रीढ़ की Ganglionice centres(शिरास्फोटों) की। ये इस संस्थान के वे अंश हैं जो संगठित ज्ञान (systematised consciousness) का भौतिक आधार कहे जा सकते हैं। दूसरे शब्दों में पौधों में एक ओर तो आशा और भय के न होने मे यह निश्चय होता है कि इन में किसी सरल वेदना (Simple sensation) का, यदि वह उन में होती हो, कोई स्थिर प्रभाव नहीं होता। दूसरी ओर मज्जातन्तु-संस्थान के उत्कृष्ट अवयवों के अभाव से यह धारणा स्थिर होती है कि पौधे वैद्युत आघात के सरल भौतिक प्रभावों को किसी संकीर्ण मानस वेदना की आधारभूत, संकीर्ण भौतिक उत्तजना में भी परिणत नहीं कर सकते।

चेतनता का प्रारम्भिक परिणाम जीवन है। वह पशुओं में सुषुप्ति-अवस्था में भी पाया जाता है। उस समय वेदना का अभाव रहता है परन्तु जीवन-यन्त्र मज्जा तन्तुओं की जीवन-जनक उत्तेजना द्वारा चलता रहता है। यही स्थिति स्थिर रूप में पौधे की है। जीवन की गति ताप की मात्रा के परिवर्तन के साथ परिवर्तित होती है। यह बात पशुओं में भी है, पौधों में भी। अत्यन्त ताप में जीवन का निरोध भी हो सकता है, उस में मन्दता भी आ सकती है। सुषुप्ति का ताप की मात्रा से कोई सम्बन्ध नहीं। उदाहरणतया हम दिन में भी सोते हैं। और ध्रुव के निकटवर्ती मनुष्य तो बहुत कम ताप में मनमाना दिन और मनमानी रात बनाते हैं। अतः पौधों के ताप की न्यूनता के कारण मन्द जीवन को सुषुप्ति कहना भ्रम है। उन की सुषुप्ति स्थिर सुषुप्ति है। कारण उनमें मन नहीं। ताप के घटने-बढ़ने से सुषुप्तावस्था में ही जीवन की गति तीव्र तथा मन्द होती रहती है।

इससे पाठक जान गए होंगे कि पौधे पर आघात करने से उसकी हिंसा नहीं होती।

इसी बात को ऋषि दयानन्द इस प्रकार कहते हैं:—

"पीड़ा उन्हीं जीवों को पहुँचती है जिनकी वृत्ति सब अवयवों के साथ विद्यमान हो, इसमें प्रमाण:—

पञ्चावयवयोगात्सुखसंवित्तिः॥ सांख्य० अ० ५ सू० २७॥

जब पाँचों इन्द्रियों का पाँचों विषयों के साथ सम्बन्ध होता है तभी सुख वा दुःख की प्राप्ति जीव को होती है। जैसे बधिर को गाली प्रदान, अन्धे को रूप वा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आगे से सर्प व्याघ्रादि भयानक जीवों का चला जाना, शून्यबहिरी वाले को स्पर्श, पिन्नस रोगवाले को गन्ध और शून्य जिह्वा वाले को रस प्राप्त नहीं हो सकता, इसी प्रकार उन (वृक्षशरीरगत) जीवों की भी व्यवस्था है। देखो! जब मनुष्य का जीव सुषुप्ति दशा में रहता है तब उस को सुख वा दुःख की प्राप्ति कुछ भी नहीं होती, क्योंकि वह शरीर के भीतर तो है परन्तु उसका बाहर के अवयवों के साथ उस समय सम्बन्ध न रहने से सुख-दुःख की प्राप्ति नहीं कर सकता और जैसा वैद्य या आजकल के डाक्टर लोग नशे की वस्तु खिला वा सुंघा के रोगी पुरुष के शरीर के अवयवों को काटने वा चीरते हैं, उसको उस समय कुछ भी दुःख विदित नहीं होता, वैसे वायुकाय अथवा अन्य स्थावर शरीर वाले जीवों को सुख वा दुःख प्राप्त कभी नहीं हो सकता। जैसे मूर्च्छित प्राणी सुख-दुःख को प्राप्त नहीं हो सकता वैसे वे वायुकायादि के जीव भी अत्यन्त मूर्छित होने से सुख-दुःख को प्राप्त नहीं हो सकते। फिर इनको पीड़ा से बचाने की बात सिद्ध कैसे हो सकती है? जब उनको सुख-दुःख की प्राप्ति ही प्रत्यक्ष नहीं होती तो अनुमानादि यहाँ कैसे युक्त हो सकते हैं? (प्रश्न) जब वे जीव हैं तो उनको सुख-दुःख क्यों नहीं होगा? (उत्तर) सुनो भोले भाइयो! जब तुम सुषुप्ति में होते हो तब तुम को सुख-दुःख प्राप्त नहीं होते? सुख-दुःख की प्राप्ति का हेतु प्रसिद्ध सम्बन्ध है अभी हम इसका उत्तर दे आये हैं कि नशा सुंघा के डाक्टर लोग अङ्गों को चीरते-फाड़ते और काटते हैं। जैसे उनको दुःख विदित नहीं होता इसी प्रकार अतिमूर्च्छित जीवों को सुख-दुःख क्योंकर प्राप्त होवे? क्योंकि वहां प्राप्ति होने का साधन कोई भी नहीं। (प्रश्न) देखो! निलोति अर्थात् जितने हरे शाक, पात और कन्दमूल हैं उनको हम लोग नहीं खाते क्योंकि निलोति में बहुत और कन्दमूल में अनन्त जीव हैं जो हम उनको खावें तो उन जीवों को मारने और पीड़ा पहुँचाने से हम लोग पापी हो जावें। (उत्तर) यह तुम्हारी बड़ी अविद्या की बात है, क्योंकि हरित शाक खाने में जीव का मारना मन को पीड़ा पहुँचनी क्योंकर मानते हो? भला जब तुम को पीड़ा प्राप्त होती प्रत्यक्ष नहीं दीखती है और जो दीखती है तो हम को भी दिखलाओ, तुम कभी न प्रत्यक्ष देख वा हम को दिखा सकोगे? जब प्रत्यक्ष नहीं तो अनुमान, उपमान और शब्दप्रमाण भी कभी नहीं घट सकता। फिर जो हम ऊपर उत्तर दे आये हैं वह इस बात का भी उत्तर है क्योंकि जो अत्यन्त अन्धकार महा-सुषुप्ति और महानशा में जीव हैं इनको सुख-दुःख की प्राप्ति मानना तुम्हारे तीर्थंकरों की भी भूल विदित होती है जिन्होंने तुम को ऐसी युक्ति और विद्याविरुद्ध उपदेश किया है।"

—सत्यार्थप्रकाश

वेद भगवान् की आज्ञा है:—

पयः पशूनाँ रसमोषधीनां बृहस्पतिः सविता मे नि यच्छात् अथर्व १९-३१-५

अर्थात् परमात्मा मुझे पशुओं का दूध और ओषधियों का रस दे।

हमने इस लेख में यह सिद्ध कर दिया है कि पौधा चेतन तो है जैसे पशु और मनुष्य। परन्तु पौधे की चेतना का आविर्भाव केवल जीवन ही में होता है और पशु और मनुष्य की चेतनता का जीवन और वेदना दोनों में। पशु और मनुष्य भी सुषुप्तावस्था में अपनी चेतना को पौधे की भाँति केवल जीवन का आधार बनाते हैं। और पौधे सदा सुषुप्त होने से अपनी चेतना का सदैव यही प्रयोग करते हैं।

जीव-दया का युग

हमने अपने सारे लेख में केवल वैज्ञानिक दृष्टि से इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है। इस सिद्धान्त का कतिपय धार्मिक मन्तव्यों पर गहरा प्रभाव पड़ सकता है।

 Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

श्री वसु महाशय अपने आविष्कारों द्वारा कृषि-शास्त्र की उन्नति की सम्भावना तो करते ही हैं। वैद्यक विद्या के परीक्षणों में भी उन्हें एक नए युग की प्रवृत्ति की आशा है। जब पशु और पौधा जीवन की दृष्टि से एक हैं और ओषधि-उपचार का प्रभाव दोनों पर एक-सा पड़ता है तो आगे को वैद्यक शास्त्र के परीक्षणों के पात्र पशु न बन कर पौधे बनाए जायेंगे। पौधों के जीवन की अपेक्षाकृत सरलता वैद्यों के लिये सुगमता पैदा करेगी और जीवदया-वाद का वैद्यक परीक्षणालयों में भी प्रवेश होगा। वसु महाशय दृढ़ आशावादी हैं। वह विज्ञान की उन्नति चाहते और करते हैं परन्तु प्राणियों को मनुष्य के हिंसक आविष्कारों का आखेट नहीं बनाते।

प्राचीन भारतीयों ने घोर अहिंसावादी होते हुए वैद्यकशास्त्र को उत्कर्ष की पराकाष्ठा तक पहुँचाया था—इसका रहस्य वसु की उक्त उक्ति से झट समझ में आ जाता है। वैद्यक दया है—पूर्ण दयानन्दी दया। उसका आधार ऋषियों के हाथों प्राणी-हत्या-युक्त परीक्षण-शृंखलाएं हुई हों, बुद्धि स्वीकार नहीं करती। ऋषि दयानन्द ने वृक्षों में जीव की सत्ता को तो स्वीकार किया ही है परन्तु उनमें वेदना को अभाव की वैज्ञानिक युक्ति देकर प्राणियों को हिंसा से बचा दिया है। यह स्मरण कर ऋषि के चरणों में सहसा सिर झुकता है। वाणी मुग्ध है, मूक है, पर हृदय को कौन रोकेगा। पौधों का विकीर्ण हृदय कहता है—दयानन्द की जय! पशुओं का केन्द्रित परन्तु दीन हृदय कहता है—दयानन्द की जय!! चमूपति का भक्तिलीन हृदय कहता है—दयानन्द की जय!! ऋषिवर दयानन्द की जय!!

सत्य घोष

—विन्ध्येश्वरी ओझा—

आर्य धर्म की शुभ्र-पताका, घर-घर में लहरायेंगे,
अमृत-मय संदेश ऋषि का, जन-जन में विखरायेंग॥
त्याग-तपस्या ऋषि जीवन का, हम सबको बतलायेंगे।
आदर्श-धर्म-सुख-सार वेद का, हम सबको सिखलायेंगे,

वेदामृत का नया भाष्य यह, अनुपम ज्योति जगायेगा।
ऋषि-जीवन का पुण्य-कीर्ति यह, नया सवेरा लायेगा,
भूले-भटके पथ-भ्रष्टों को, यह सुराह पर लायेगा।
आर्य-धर्म से विरत जनों को, फिर से आर्य बनायेगा,

सूक्ष्म-ज्ञान का ज्योति-पुञ्ज यह, अनुपम तेज जगायेगा,
हिन्द-देश का अमिय-कलश, अमरत्व धरा पर लायेगा।
अमर-ज्ञान, विज्ञान भरा यह, जग में सुयश कमायेगा,
भारत का गौरव बन कर यह, जग को नमन करायेगा।
प्रिय भारतेन्द्र, रानी राकेश, गौरव के बड़-भागी होंगे।
जिनके प्रयास से अमरवेद, धरतीके पुनि थाती होंगे,
विज्ञान-ज्ञान से दिशा-दिशा, उर्वरता के प्रांगण होंगे।
वेदों के ज्ञान-प्रकाशों से, धरती पर देव प्रकट होंगे,

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ज्योतिर्मय

दयानन्द

—हेमन्त कुमार—

वह एक आवाज थी जिससे दहाड़ते हुए शेर भी डर कर छिप जाते थे। वह एक ऐसा पांचजन्य था जिसके घोष से शत्रुओं के हथियार हाथ से छूट जाते थे। वह एक आग थी जो धधक कर प्रह्लाद को जलाने वाली होलिका को फूंकने के लिए जिह्वा लपलपाती रहती थी। वह एक प्रचण्ड और शान्त रोष था। वह एक तराश थी जो बिना घाव किये ही खूनी तलवार को काट डालती थी।

वह आया और गया, पर वह हमें ऐसा दीपक दे गया जो कभी नहीं बुझेगा। वह दीपक उसकी वाणी का दीपक है, जिसमें उसके स्नेह के तेल का प्रकाश है। किसी कवि ने लिखा है :—

आया था जग में वह भी, और फूलों की तरह,
चमका वह आसमाँ में, सितारों में चाँद की तरह।
लोग तो मरते रहते हैं, बुझ गया वह भी औरों की तरह,
एक नई राह पर मोड़ गया, जिन्दगी के मोड़ों की तरह।

लोहे की जंजीरों से देश और जाति को गुलाम बनाया जा सकता है, पर धर्म लोहे की बेड़ियों से नहीं बंधता। तलवार से मनुष्य को काटा जा सकता है, उसकी भावनायें नहीं कटतीं। किसी का सिर काट दिया जाय तो वह मरेगा नहीं, लेकिन यदि उसके मन को मार दिया गया है तो वह जीवित ही मरे हुए के समान है। लड़ाइयों के हारने से हार नहीं होती; हार तब होती है जब हिम्मत टूट जाती है। मृत्यु तब होती है जब किसी का धर्म मर जाता है।

न जाने कितने शासकों ने भारत को दास बना कर उसकी संस्कृति में दियासलाई लगाई, उसके धर्म को फूंकना चाहा, उसके साहित्य और रीतिरिवाजों पर आक्रमण किये।

काल की कठोर आवश्यकतायें ही महान् विभूतियों को जन्म देती हैं। यह एक ऐसा काल था जब समाज में कुरीतियाँ बढ़ी चली जा रही थीं और उन कुरीतियों को बढ़ाने वाले माथे पर तिलक लगा कर जनता पर आधिपत्य जमाने की कोशिश कर रहे थे। धर्म का स्वरूप अलग-अलग शीशों में देखा जा रहा था।

ऐसे ही समय में काठियावाड़ के टंकारा जिले में संवत् १८८१में एक दीपक की लौ निकली जिसे इन कुरीतियों से तेल मिला और वह लौ बढ़ कर ज्वाला बनी और अन्त में सूर्य के रूप में परिणत होकर विश्व को उजाला दे गई।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

यह दीपक की लौ के रूप में महर्षि दयानन्द सरस्वती थे जिन्हें बचपन में मूलशंकर पुकारा जाता था। इनके पिता शंकर जी के अनन्य भक्त थे। जब यह थोड़े बड़े हुए तो एक बार शिवरात्रि के अवसर पर अपने पिता के साथ शिव-मन्दिर में जा कर उपवास रखा।। इनके पिता ने इन्हें बताया कि यहाँ रात के समय शकर जी आते हैं। इन्हें तो सच्चे शिव की खोज करनी थी। इस लिए रात भर जागते रहे। इन्होंने देखा कि सब पण्डित यहां तक कि उनके पिता जी को भी निद्रा देवी ने घेर लिया। और शिवजी की मूर्ति पर चूहे दौड़ रहे हैं। इनके मन में यह देख कर एक शंका उत्पन्न हुई, काफी देर तक सोचने के पश्चात् वह इस निश्चय पर पहुँचे कि जो ईश्वर स्वयं अपनी रक्षा इन चूहों से नहीं कर सकता वह ईश्वर हमारी रक्षा कैसे कर सकता है। यह सोच कर वह उसी समय घर लौट गये और माता जी को सब कथा सुनाई। खाना खा के सो गये। सुबह इनके पिता ने इन्हें खूब डांटा। परन्तु मूलशंकर पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

वह तो सच्चे शिव की खोज में था। इसलिये वह घर से निकल पड़ा और बहुत पण्डितों से मिला। परन्तु इसका शका समाधान नहीं हो सका। अन्त में वह स्वामी पूर्णानन्द के पास पहुँचे उन्होंने उनका नाम बदल कर उपयुक्त नाम दयानन्द रखा इसके पश्चात उन्होंने उसे मथुरा के स्वामी विरजानन्द के पास भेजा। वहां पहुँचने पर इन्होंने स्वामी विरजानन्द का द्वार खटखटाया। उन्होंने पूछा "कौन?" तो उत्तर मिला, कि यही तो मैं समझने आया कि मैं कौन हूँ। इस उतर से स्वामी विरजानन्द जी अत्यधिक प्रभावित हुए और दयानन्द को शिष्य रूप में स्वीकार कर लिया। उन्हें तो वह एक आदर्श गुरु के रूप में प्राप्त हुये। उन्होंने उनकी शका का समाधान किया और चारों वेद पढ़ा कर अपने शिष्य को दुनियां के अनर्थों और व्यभिचारों से जूझने का मौका दिया और शिष्य भी दुनिया के अनर्थों और व्यभिचारों से जूझने के लिए जान को हथेली पर रख कर युग प्रवर्तक के रूप में चल पड़ा। उसके ऊपर विरोधी लोगों ने कीचड़ तक फेंके, सांप तक फेंके परन्तु उस सच्चे शिव के पुजारी का बाल बांका भी न कर सके।

एक बार की बात है कि स्वामी दयानन्द अलीगढ़ के पास काली नदी के तट पर कुटिया बना कर वहाँ विश्राम कर रहे थे। तभी अलीगढ़ विश्वविद्यालय के संस्थापक सर सय्यद अहमद खां उनके पास मिलने के लिए पहुँचे। बहुत देर तक वाद-विवाद होता रहा। तभी मौलाना ने कहा, 'स्वामी जी, मेरी नमाज़ पढ़ने का समय हो रहा है इस लिए मैं जाना चाहता हूँ।"तब स्वामी जी बोले, "मौलाना, अगर तूने सच्चे हृदय से नमाज पढ़नी है और ईश्वर का स्मरण करना है, तो तू दयानन्द की छाती पर चढ़ कर नमाज़ पढ़ सकता है।" इस तथ्य में कितना सत्य का प्रकाश है, यह समझाने की आवश्यकता नहीं है, इससे अगर सूर्य भी चाहे तो प्रकाश ले सकता है।

स्वामी जी ने "आर्य समाज" नाम की एक संस्था की स्थापना की। आज आप को देश के कोने-कोने में आर्य समाजी मिलेंगे। सबसे पहली आर्य समाज की स्थापना बम्बई में हुई थी।

योगिराज अरविन्द ने उनके ऊपर एक पुस्तक लिखी है जिसका नाम है 'दयानन्द'। इसको देख कर स्वामी जी के हितैषी बहुत नाराज हुए और उन्होंने योगिराज अरविन्द से कहा कि पुस्तक के नाम के आगे स्वामी या महर्षि लगाना चाहिए था। तो योगिराज ने कहा कि महर्षि और स्वामी तो प्रारम्भ से होते चले आये हैं

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

और होंगे भी, परन्तु ऐसा दयानन्द न तो पहले कोई हुआ है और न ही कभी होगा। इस लिए मैंने इस पुस्तक का नाम केवल 'दयानन्द' रखा है।

स्वतन्त्रता के अमर सेनानी लाला लाजपत राय, महात्मा हंसराज स्वामी और स्वामी श्रद्धानन्द इत्यादि उनकी परम पुनीत संस्था "आर्य समाज" के ही सेनानी थे।

एक बार यह जोधपुर नरेश राजा यशवन्त सिंह के पास पहुंचे। वह एक वैश्या. "नन्हीं जान" के नृत्य में मस्त था तो इन्होंने राजा को बहुत डांटा-फटकारा, जिसके फलस्वरूप राजा ने उसका साथ छोड़ दिया और स्वामी जी का अनुकरण करने लगे। यह बात उस वैश्या को अच्छी न लगी और उसने इन्हें मरवाने की सोच ली। उसने स्वामी जी के रसोइये जगन्नाथ को बुला कर बहुत पैसा दिया और एक विष की पुड़िया दे कर स्वामी जी के दूध में विष मिलाने के लिए कहा।

जगन्नाथ ने उसी रात्रि को उनके दूध में विष मिला दिया और जब उनकी तबीअत खराब होनी शुरू हुई तो उन्होंने योगाभ्यास द्वारा अपनी आंतों को देखा कि उनकी नसों में विष फैल चुका है। तब उन्होंने जगन्नाथ को बुला कर कुछ रुपये दिये और कहा कि तुम रात ही रात में पर्वतों की ओर भाग जाओ नहीं तो तुम्हें ये लोग मार डालेंगे। तब वह रो पड़ा और स्वामी जी के चरणों में गिर पड़ा। अन्त में स्वामी जी ने उसे चले जाने के लिए कहा और वह चला गया। इस प्रकार स्वामी जी का वह हत्यारा उनकी क्षमा से बच निकला। आश्चर्य है कि अन्याय के उस क्रान्तिकारी विरोधी ने एक हत्यारे को क्षमा क्यों कर दिया?

अब उन्हें चिकित्सा के लिए आबू पर्वत पर भेजा गया। परन्तु उनकी हालत बिगड़ती ही गई और अन्त में अजमेर में सम्वत् १६४० में कार्तिक कृष्णा अमावस्या दीपावली के दिन उन्होंने अपना नश्वर शरीर छोड़ दिया और वह पुनीत आत्मा परमात्मा में लीन हो गई।

वह अब भी 'सत्यार्थ प्रकाश' के रूप में हमारे मध्य विद्यमान हैं। उनका 'सत्यार्थ प्रकाश' हमें सत्य की ओर ले जाने के लिए प्रकाश है।

हम भी उस महर्षि के समान महान् बन सकते हैं, परन्तु इसके लिए हमें चांदनी से अधिक शीतल और सूर्य से अधिक गरम होकर तप करना होगा। उस महर्षि की याद हमें अन्त तक सताती रहेगी। वह इस दुनिया में कभी भी भुला नहीं जायेगा। किसी कवि ने लिखा है—

"न भुलाया जाएगा वह तब तक,
जब तक न मिटेंगे चांद-सितारे जमीं से,
जब तक इन्सान रहेंगे धरती पर,
न निकलेगा नाम उसका दुनिया के दिलों से"

महर्षि दयानन्द के प्रति श्रद्धा हो तो उन के जीवन चरित्र को अधिक से अधिक बांटें

—:o:—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दयानन्द संस्थान द्वारा प्रकाशित

अंग्रेजी-साहित्य

1. Light of truth. अंग्रेजी भाषा में (दूसरा संस्करण)
सत्यार्थप्रकाश (कपड़े की जिल्द में) अब मिल रहा है मूल्य १२)
2. A short life story of Swami Dayananda Saraswati. मूल्य १)
3. The man and his mission.
स्वामी सत्यप्रकाश जी सरस्वती लिखित वैदिक विचारधारा
प्रसार के लिए महान् रचना मूल्य १)
4. What is yoga. योग क्या है ? इस संवन्ध में सही जानकारी
देने वाली पुस्तिका मूल्य २० पैसे १५) सैकड़ा
5. Teachings of Swami Dayananda. मूल्य १)
6. The vedic fundamentals. मूल्य २.५०
7. Ten commandments.
स्व० पं० चमूपति जी द्वारा लिखित आर्यसमाज के १० नियमों
की प्रभावपूर्ण व्याख्या मूल्य १.००
8. The Ten principles of the Arya Samaj. १५) सैकडा
9. The Great Gaytri. २० पैसे १५) सैकड़ा
10. Vedic prayer. संध्या-हवन-स्वस्तिवाचन, शान्तिप्रकरण
आदि की अंग्रेजी हिन्दी में विस्तृत व्याख्या मूल्य २.५०
11. Life and teachings of Swami Dayananda. मूल्य १०-००
12. Vedic life. वेद के जीवन कैसे बिताएं वेद मंत्रों
द्वारा हिन्दी और अंग्रेजी में प्रेरक मार्ग दर्शन मूल्य २.५०
13. Message of the Arya Samaj to the universe. मूल्य ५० पैसे
14. Dayananda the Great. १५ पैसे १०) सैकड़ा
15. Christianity and Vedas.
पं० धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड द्वारा लिखित खोजपूर्ण ग्रन्थ मूल्य १.५०
16. Bible in the balanee. .15
17. A challenge to the christian faith. .05
18. An introduction to the Arya Samaj. .15

जन - ज्ञान - प्रकाशन

१५६७, हरध्यानसिंह मार्ग नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पाखंडों का अन्त करना ही होगा !

अभी पिछले दिनों हमारे फूफा जी और बुआ जी दक्षिण की यात्रा से लौट कर आये थे। उनसे मिलने पर उनकी यात्रा के कुछ रोचक संस्मरण सुनने को मिले। बातों ही बातों में जब साईं बाबा का विषय आया, तो वे उनकी बहुत प्रशंसा करने लगे। वे कहने लगे कि साईं बाबा तो भगवान के अवतार हैं, वे सबके मन की बात जान लेते हैं, उनकी हथेली में से भभूति (राख) झड़ती है, प्रत्येक पर्व या किसी अवसर विशेष पर एवमस्तु की मुद्रा में हाथ से वस्त्र आदि निकाल कर चमत्कार उत्पन्न करते हैं, आदि-आदि।

कहने का तात्पर्य यह है, कि आज सिर्फ साईंबाबा ही नहीं, इन जैसे अनेकों महानुभाव हिन्दू धर्म की आड़ में अपनी स्वार्थ-सिद्धि कर रहे हैं और वह सदा से चला आ रहा धर्म जिसे औरंगजेब जैसा कट्टर शासक भी नहीं मिटा सका था; उसकी जड़ें ये खोखली करने में लगे हुए हैं तथा आर्य जनता इन भीषण षड़यन्त्रों से निश्चिन्त गहरी नींद में सोई हुई है।

हमारे फूफा जी ने यह भी बताया कि, उनके मंदिर के बाहर (मद्रास शहर के पास एक छोटे नगर में स्थित) उनके चित्र, कलैण्डर, तावीज, चाभी के गुच्छे, जीवन चरित्र आदि बहुत ही सस्ते दामों पर मिलते हैं। प्रमुख बात तो यह है कि, उन्होंने इन वस्तुओं की बिक्री ही अपना व्यवसाय बना रखा है। उन पर चढावे में श्रद्धालु-जन लाखों रुपए चढ़ाते हैं, और वे हाथ से भभूति आदि निकाल कर कुछ भावुक भक्तों द्वारा स्वयं को भगवान कहलवाते हैं। हाथ से भभूति आदि निकालना तो साधारण चमत्कार है, भारतीय जादूगर तो इनसे भी अधिक चमत्कार कर सकते हैं जैसे व्यक्ति को हवा में उड़ाना, सिर काट कर पुनः जोड़ देना आदि। वास्तव में साईंबाबा के ये कार्य सिर्फ सम्मोहन हैं, और उसके अतिरिक्त कुछ भी नहीं हैं। गोगिया पाशा नामक महान जादूगर ने भी इन चमत्कारों को सिर्फ सम्मोहन विद्या बताया था ! सम्मोहन (Mesmerism) संवशीकरण (Hypnotism), दृष्टि सम्बन्ध (Sightism) आदि योग की पाश्चात्य पद्धतियाँ हैं, जो कि वास्तव में न तो कोई योग है और न ही उसकी शाखायें ही। क्योंकि योग तो मन की शान्त स्थिति की वस्तु है जबकि ये मन की भ्रान्त स्थिति के प्रयोग। इस प्रकार के लोग मनुष्य का मन किसी भी रीति से भ्रांतिमय करके उक्त प्रयोग करते हैं और उसे चमत्कार का नाम देकर ईश्वर होने का दावा करने लगते हैं।

ईश्वरों की तथाकथित इस श्रेणी में प्रेमपाल सिंह रावत (स्वयं को बाल-योगेश्वर कहने वाला) की पोल तो खुल ही चुकी है। समाचार पत्रों में इस विषय

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पर काफी चर्चा हो चुकी है कि, किस प्रकार नवभारत टाइम्स के कार्यालय पर पथराव करने वाले इसके अनुयायी विदेशों से जम्बों जेटों पर तस्करी का माल लेकर आये, और उसे अपने विदेशी भक्तों का बताया। सरकार ने उसका पारपत्र तो जब्त कर ही लिया है, तथा जाँच के बाद कई और रहस्यों के प्रकाश में आने की भी आशा है।

यही बालयोगेश्वर एक बार हमारे कस्बे—सिकन्द्राबाद में भी आये थे। इस उपनगर के आर्यसमाज ने उससे शास्त्रार्थ का आयोजन किया। दूर-दूर से उच्च-कोटि के विद्वान और प्रकांड पण्डित बुलाये गये जिनमें शास्त्रार्थ-महारथी स्वामी अमरसिंह भी थे। समस्त विद्वान आर्य-जनों के साथ वहाँ के जे० एस० डिग्री कालिज के फील्ड पर गये जहाँ शास्त्रार्थ का आयोजन किया गया था। वह व्यक्ति भला क्या शास्त्रार्थ करता जिसे वेदों के रचयिताओं के नाम तक न पता हों, सो वह और उसके शिष्य हुड़दंग मचाते वहां से भाग गये और आज तक शास्त्रार्थ का नाम नहीं लिया।

आनन्द मार्ग के प्रवर्तक (तृतीय श्रेणी के कर्मचारी) प्रभात रंजन सरकार अभी तक जेल में हैं। उनकी पत्नी के बयानों से यह स्पष्ट हो जाता है कि, किस प्रकार उन्होंने भोले-भाले युवक व युवतियों को अपने जाल में फंसाया और आज्ञा न मानने पर उनकी हत्यायें कर दी गईं। उनके कार्यालय से प्राप्त मानव खोपड़ियाँ सदा इस बात का प्रतीक रहेंगी कि कुछ लोगों ने मानसिक व आध्यात्मिक शान्ति के इच्छुकों को अपने प्रपंचों में फँसा कर स्वार्थ पूर्ति की।

आज कल लोगों ने स्वाध्याय के अभाव के अज्ञान में योग शब्द का विचित्र अर्थ लगा रखा है। इसी अज्ञान का लाभ उठा कर महेश (योगी) नामक व्यक्ति ने हरिद्वार में योगाश्रम खोलकर कुछ रुपयों के बदले योग की दीक्षा देने का प्रपन्च रच कर अपने व्यापार की दुकान खोल रखी है। क्या डनलप के गद्दों पर योग की शिक्षा दी जाती है ? क्या यम-नियम पालन एवं आचार-व्यवहार की शुद्धता को सर्वथा अनावश्यक बताना ही योग का अंग है ? विद्यार्थियों को वाममार्ग की ओर प्रेरित करने वाले योगीराज (?) का स्वयं का जीवन पवित्र होगा, क्या ऐसी आशा की जा सकती है ? वस्तुतः योगसाधना में शरीर, आत्मा के समक्ष गौण है, तथा एक ऐसी पद्धति है जिसमें भौतिक सुखों को सिर्फ साधन मात्र समझा जाता है अर्थात मन की स्थिर वृत्ति ही "योग" है।

आज जब पश्चिम भौतिकता के दमघोटू वातावरण से ऊब कर धीरे-धीरे अध्यात्म के शान्त एवं प्रिय वातावरण की ओर अग्रसर होने का यत्न कर रहा है दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि, विदेशों में योग के नाम पर एक भूख-एक रुचि जग रही है, योग विद्या के शत्रु योग के नाम पर ही सस्ते नुस्खे निकाल कर उस भूख को समाप्त करके उनके हृदयों में धर्म की जिज्ञासा का अंकुर भी तोड़ रहे हैं। इसीलिए एक ओर तो योग के प्रचार व प्रसार की चर्चायें हैं, तो दूसरी ओर हमारे समाज को दूषित करता कदाचार और अशान्त जीवन !

अतः आज धर्म के नाम पर हो रहे इन आडम्बरों को रोकने की आवश्यकता है। यह उत्तरदायित्व सिर्फ आर्य नेताओं का नहीं; वरन समस्त आर्य जनता का है; जो एकता के सूत्र में बंध कर और हाथ में पाखंड-खंडिनी-पताका लेकर यह दृढ़ निश्चय कर ले कि, समय रहते ही इन पाखंडों का अन्त करना ही होगा अन्यथा ये हमारे धर्म की जड़ें बिलकुल खोखली कर देंगे !

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

परिवार का अन्त और व्यक्ति की वीरता

स्व० प्रिय प्रभात, अंजुला रानी और पुनीत

श्रीमान सम्पादक जी !

मेरे पिता श्री जियालाल जी आरम्भ के आर्य समाजी थे। मुजफ्फरनगर में आर्यसमाज की स्थापना का श्रेय उन्हें ही प्राप्त था। सन १९४० में ९० वर्ष की आयु में ओ३म-ओ३म् की पवित्र ध्वनि को जपते हुए वे परम धाम को सिधारे। मेरी माता जी को भी संध्या व हवन मंत्र कंठाग्र थे। हमारे घर में ५ व ६ के बीच में यज्ञ समाप्त हो जाता था और हम सभी भाई बहन भी यज्ञ को श्रद्धापूर्वक करते थे। मेरे मन पर वैदिक धर्म की अमिट छाप अपने जन्म काल से ही अंकित थी और ऐसे श्रेष्ठ व धर्म प्रेमी माता पिता की छत्र छाया में वो निरन्तर बढ़ती रही। और उस महान प्रभु की कृपा से मुझे पतिदेव भी व ससुर भी देवता समान ही मिले। हमारी सास जी का स्वर्गवास तो पहले ही हो चुका था। ससुर जी ने माँ और बाप

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दोनों का प्यार दिया। मवाना की महिला आर्य समाज की नींव डालने वाली हमारी धर्म परायणा सास जी थीं। सर्व प्रथम अपने घर में ही उन्होंने साप्ताहिक यज्ञ व सत्संग आरम्भ किया था जो बाद में आर्य समाज मन्दिर में होने लगा। मैं भी अपने विवाह से ही यहाँ की स्त्री समाज की सदस्या हूँ। जब छोटे-छोटे बच्चे थे तब उन को लेकर जाती रही। मेरे दो बड़े भाई व एक बड़ी बहन हैं। भाई ११६ B नई मण्डी मु० नगर में रहते हैं बड़े भाई श्री विष्णुचन्द जी संगल से तो आप परिचित हैं। उन्होंने वानप्रस्थ ले लिया है और ईश्वर भक्ति में ही पूर्ण जीवन लगाया हुआ है। मेरी बड़ी बहन श्रीमती ब्रह्मादेवी और उनके पतिदेव श्री दलीपसिंह जी मित्तल जो रिटायर्ड इन्जिनियर हैं उन्होंने अपना समस्त जीवन परोपकार में ही लगाया है। सर्वोदय में भी बहुत काम किया है और बड़े ही ईश्वर प्रेमी हैं। हमारे २ पुत्रियां और ५ पुत्र थे सबसे बड़ी लड़की मिनी का विवाह श्री. R. S. Gupta जो आजकल F. C. D. में पर्सनल मेनैज़र हैं उनसे हुआ है और छोटी लड़की मधुर थ्योफिस्ट है और आजकल नूर मंजिल लखनऊ में जो मनोवैज्ञानिक चिकित्सालय है उसमें सर्विस कर रही है और बड़ा लड़का पाल प्रवीण यूनियन बैंक में फ़ील्ड अफ़िसर हैं पाल प्रशान्त फ़ार्मिङ्ग में चौथा लड़का पाल प्रमोद एयर फ़ोर्स में Flt. Lt. है और आजकल दिल्ली में ही है पांचवा लड़का पाल प्रमोद जो अब तक फार्मिङ्ग ही कर रहा था परन्तु अब मद्रास में मिलिट्री की ऑफ़िसर ट्रेनिंग ले रहा है जो २६ अप्रैल १६७३ में समाप्त हो जायगी और उसको कमीशन मिल जायगा।

स्वर्गीय श्री पाल प्रभात हमारे तीसरे नं० के होनहार सुयोग्य पुत्र थे। उनका जन्म जून १९४० में लखनऊ में हुआ था। मेरा १६ संस्कारों के ऊपर अटूट विश्वास रहा है। गर्भावस्था में मैं अपना समय सदैव ही धार्मिक व वीर गाथाओं के पठन पाठन में लगाती रही। पूज्य पिता जी भी सभी संस्कार कराने के पक्ष में थे—हम दोनों बच्चों सहित पिता जी के साथ में यज्ञ करते थे और तत्पश्चात स्वाध्याय चलता था। मेरा विश्वास रहा है कि माता गर्भावस्था में ही जैसा बच्चों को चाहे बना सकती है। और प्रिय प्रभात ने तो प्रत्यक्ष करके दिखा दिया। वह बचपन से ही बहुत शान्त व मधुर प्रवृत्ति का था। परम आज्ञाकारी व मातृ पितृ भक्त था। हमने कभी पलभर को भी उसके चेहरे पर क्रोध नहीं देखा। बहुत नपी तुली बात बोलने वाला व गम्भीर था। बड़ों से मान्योचित व्यवहार करना व छोटों पर प्यार उड़ेलना उसकी अपनी विशेषता थी। सन् १९६२ में वह कोटा पोलीटैकनीक में पढ़ने के लिए चला गया। वहां रेस प्रतियोगता में प्रथम तो आ गया था परन्तु दोनों हाथों की कलाइयों में फ्रेक्चर हो गया था परन्तु उसके मृदुल व्यवहार के कारण सभी अध्यापक गण व सहपाठी गण उससे बहुत ही प्यार करते थे। अपने आप तो अपना कोई भी कार्य नहीं कर सकता था। हमने उसके प्रिंसीपल से कहा था कि आप प्रभात का काम करने को कोई नौकर रख दीजिये हम उसका वेतन देंगे परन्तु उसके मित्र इसके लिए तैयार नहीं हुए और उन परेशानियों के दिनों का उसके सहपाठियों ने पता भी नहीं लगने दिया। और वहाँ से प्रथम डिवीज़न से पास होकर आ गया। उसने अपनी सर्विस का आरम्भ बम्बई से किया और उसके पश्चात कानपुर में F. C. I. में असिस्टैन्ट मैनेजर होकर आ गया। उसका अपने नीचे के कर्मचारियों से इतना सुन्दर व्यवहार था कि आज सभी उसकी याद में तड़प रहे हैं। सन् १९६८ में श्री. दलीपसिंह जी तहसीलदार जो आजकल इटावा में हैं उनकी सुपुत्री अंजुला से पाणिग्रहण हो गया। प्रभात के पिता जी और मैं भी दहज प्रथा के विरोधी रहे हैं और हमारे ही पद चिन्हों पर चल रहे हैं। सो उनका विवाह मेरठ के आर्य समाज मन्दिर में

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वैदिक रीति के अनुसार बड़े ही प्रेम सद्भावना सादगी से सम्पन्न हो गया वह एक आदर्श विवाह था। श्री तहसीलदार साहब भी बहुत ही सज्जन व ईमानदार व्यक्ति हैं। दोनों परिवारों में अटूट प्रेममय सम्बन्ध बन गये थे। बहू भी देवी समान मिली थी। सती साध्वी सीता थी। उच्च आदर्शों को उसने अपने जीवन में अपनाया हुआ था। अपने मृदुल व प्रेममय व्यवहार से उसने सबके ऊपर जादू किया हुआ था। चार वर्ष हमारे बीच में रही मुझे तो ऐसा प्रतीत होता था मानों वह मुझसे ही उत्पन्न हुई मेरी बेटी है। वह सभी के लिए कुछ न कुछ करती रहती थी। वह एक पतिव्रता नारी थी। जो उसके प्यार भरे व जीवन में शक्ति साहस और शान्ति प्रदान करने वाले पत्र हमारे पास हैं। वह एक अनमोल निधि दोनों की हमारे पास संचित हैं। हम उसकी पवित्र स्मृति जीवन में कभी भुला न सकेंगे। दोनों ही हर समय सेवा करने को तैयार रहते थे। जहां वे रोज यज्ञ आदि तो करते ही थे वहां त्यौहार भी बड़े उत्साह व श्रद्धा पूर्वक करते थे–प्रभात तो नियम से आसन वगैरह भी लगाते थे।

आपने अलीगढ़ में हुई गैस दुर्घटना का समाचार अखबारों में अवश्य ही पढ़ा होगा वह हम अभागों के बच्चों के साथ ही घटित हुई है। पहले वहू बच्चे २१ ता० में अलीगढ़ अपनी बहन के पास आने वाले थे और प्रभात को २५ ता० में छुट्टी मिलने वाली थी और तब दोनों २७ में मवाना पहुंचने थे—परन्तु विधि के मन में तो कुछ और ही था प्रभात को भी छुट्टी २० को ही मिल गई और वे सब अलीगढ़ में २० नवम्बर की शाम को ही आ गये। श्री सलेकचन्द जी जो कोओपरोटिव बैंक में ओडीटर हैं प्रभात के साढ़ू हैं व साली मंजु में तथा प्रभात अंजुला में बहुत प्यार था करीब २ हमेशा ही वो एक दो दिन अलीगढ़ रुक कर आते थे। परन्तु इस बार ये मालूम नहीं था कि उन्हें काल घसीट कर ला रहा है। और वे सब ही एक साथ मय बच्चों के काल के ग्रास बन जायेंगे। गैस सिलेन्डर नया आया था २१ ता० में लेकिन वह कुछ लीक कर रहा था। २२ की प्रातः घर में अंगीठी जला ली गई थी और सलेकचन्द जी ने एक मैकेनिक को जो उनका भांजा भी है बुला लिया था। अंगीठी रसोई में जल रही थी और गैस का सिलेन्डर बरांडे में ठीक कर रहे थे–परन्तु मैकेनिक से ठीक से खुलने के बजाय उलटा खुल गया तब वह उस सिलेन्डर को जीने के पास छत पर ले आये और उसे ऊंची मुंडेल पर रख दिया परन्तु तभी पूरे मकान में एक दम से आग लग उठी–वह मैकनिक तो तभी भाग गया और जीने में भी आग लग गई। जो जहां था जलने लगा। सलेकचन्द जी बस में एक सुरक्षित जगह पर खड़े थे। बस सबसे पहले तो अंजुला जल गई तो वह नीचे कूद पड़ी और उसी समय भगवान को प्यारी हो गई। प्रभात ने अपनी साली के तीनों बच्चों को क्रमशः १०, ८, व ५ साल के थे उन्हें आग में से निकाला और सलेकचन्द जी को पकड़ाता रहा और वे उनकी आग बुझा-बुझा कर नीचे फेंकते रहे–सलेकचन्द जी की भाई की लड़की कामना भी जो १३-१४ वर्ष की होगी उसे भी अग्नि में कूद कर निकाला अपनी सवा साल की बिटिया लवी को भी उसने सलेकचन्द जी को दे दिया था फेंकने के लिए और इतना स्वयं जल जाने के बाद भी उस १४ साल की लड़की को पीठ पर लादा और ३ साल के लड़के पुनीत को गोद में लिया और फिर नीचे कूद पड़ा नीचे मुहल्ले वाले खड़े थे और चारपाइयां बिछा रक्खी थी–कोई गोद में गिरा कोई चारपाई पर और कोई जमीन पर ही फिक गया कुछ ही मिन्टों में तो ये सब घटना हो गई उसकी साली मंजु वहां खड़ी ही जलती रही उसके कपड़ें फुंक चुके थे इसलिए उठने व कूदने को मना कर दिया। प्रभात ने इतना जलने व कूदने के पश्चात भी हिम्मत नहीं हारी पता नहीं कहां से उसमें इतनी अद्भुत शक्ति आ गई थी–चाहता तो शुरु में ही अपने

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

को कूद कर बचा सकता था परन्तु उसे तो शहीद होना था–नीचे एक जीप खड़ी थी उसने स्वयं सब बच्चों को जीप में डलवाया और मैडीकल कोलिज ले गया–सभी डाक्टर्स चकित थे कि इतना जलने के उपरान्त भी यह व्यक्ति कैसे सब कार्य कर रहा है–उसने कैजुएल्टी वार्ड में बच्चों के ६ बिस्तर लगवाये और डाक्टरों को सब जगह फ़ोन करने के लिये फ़ोन नम्बर दिये और तब साइड रूम में अपना बिस्तर लगवा कर उस पर लेटा। डाक्टर्स बताते थे कि हमने ऐसा बहादुर आदमी कभी नहीं देखा और न हम कल्पना कर सकते थे कि कोई स्वयं इतना फुंकने के पश्चात् इतने जीवन का कार्य कर सकता है।

हम सभी २२ व २३ में प्रभात के पास पहुँच गये थे और वह २६ जनवरी की रात्रि में १० बजे परलोक हुआ परन्तु उसने तो अपने को **"ओं तेजोसि तेजो मयि धेहि। ओं वीर्यमसि वीर्य महि धेहि। ओं बलमासि बलं मयि धेहि। ओं ओजयो-मस्योजो मयि धेहि। ओं मन्युरसि मन्यु मयि धेहि। ओं सहोऽसि सहोमयि धेहि।** के अनुरूप अपने को ढाल रक्खा था। हाथ पैर इतने जले हुए थे जैसे किसी ने मांस उबाल रखा हो। मुँह भी झुलस गया था और बाल भी जल गये थे राख तकियों पर फैली हुई थी। परन्तु इतनी अधिक पीड़ा और वेदना के होते हुए भी वह सभी आने जाने वालों से उनका कुशल ऐसे पूछता रहा और अपनी व्यथा को प्रकट नहीं किया। जैसे बीमार का अपने को देख कर मन भर आता है और वह रोने लगता है–परन्तु कमाल का था वह मेरा बेटा कि किसी को देख कर न तो आँसू ही गिराये और न एक बार भी हाय या उफ़ भी किया और न यही कहा कि मैं अच्छा नहीं होने का बल्कि उल्टा हमसबको धीरज बंधाता रहा। ऐसा लगता था मानो उसकी आत्मा रोग शोक व मोह से अलग हो चुकी थी। अपने बिस्तर पर लेटे-लेटे वो अपने लड़के व साली के बच्चों को समझाता रहा व दिलासा देता रहा। सभी बच्चे एक २ करके दम तोड़ते रहे। बच्चों के प्राण बड़े ही कष्ट से निकले, उनका दु:ख देखा नहीं जाता था पर इन अभागी आँखों को सभी कुछ देखना बदा था। पता नहीं किन दुष्कर्मों का फल हमको मिल रहा था। प्रभात की लड़की लवी तो २२ ता० में ही अपना शरीर पूरा कर चुकी थी। प्रभात ने मुझसे पूछा की लवी की आवाज नहीं सुनाई दे रही है–मैंने कह दिया कि हमने उसे अंजु के पास भेज दिया है। चाहे वो समझ भी गया होगा कि लवी नहीं रही परन्तु उसने फिर इस टौपिक पर बात नहीं चलाई। हमने भी प्रभात से इस ट्रैजैडी के विषय में कोई बात नहीं चलाई कि कभी बात-चीत के दौरान अंजु का जिक्र न आ जाय। और हम लोगों को रोना न आने लगे।हम तो हृदयों पर पत्थर रख कर प्रभात के पास हँसते हुए ही जाते थे। और न उसने स्वयं ही कुछ बताया, सिर्फ इतना कहा था कि हमारी बुद्धि ने काम नहीं किया अन्यथा हम सब बच सकते थे, सिलेन्डर को वैसा ही छोड़ कर भाग जाते तो बच ही जाते मकान जलता जल जाता परन्तु उनके सिर पर तो काल खेल रहा था कैसे भागते। प्रभात के बात चीत करने के ढंग को व उसकी सहनशक्ति को देख कर डाक्टरों ने अनुमान लगाया था कि प्रभात जी अवश्य बच जायेंगे। डाक्टरों ने पूरा प्रयत्न किया परन्तु प्रभात ने भी और उन आठों ने भी गैस inhale कर ली थी उनके रक्त में विष फैल गया था ऊपर के जले तो शायद बच जाते। प्रभात ने आखिरी क्षण तक धीरज नहीं छोड़ा। फेफड़े फुंक चुके थे उन्होंने अपना कार्य करना बन्द कर दिया था साँस लेने में कठिनाई होने लगी थी तो डाक्टरों से अपने आप artificial respiration देने को कहा उससे पुन: साँस आने लगती थी हम सभी ओं का जाप कर रहे थे और प्रभात भी ओं का जाप करता रहा मैंने कहा कि भइया गायत्री मंत्र बोलो

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

तो उस महान आत्मा ने गायत्री मंत्र का अच्छी प्रकार जप किया ।मैंने कहा कि बेटा अपनी आत्मिक शक्ति बनाए रखना तो कहने लगा कि अम्मा जी क्या आप समझती हैं कि मुझमें आत्मिक शक्ति नहीं है यदि आत्मिक शक्ति न होती तो मैं कैसे इतने जनों को बचाता? कैसे उन्हें आग में से निकालता" इस बात का परम संतोष था कि मैंने बच्चों की जीवन रक्षा की । परन्तु भगवान ने तो उसके बलिदान होने का भी ध्यान न रक्खा किसी एक बच्चे की ही जीवन रक्षा हो जाती तो उसका शहीद होना सफल हो जाता । बस मैंने सभी से ये कहा हुआ था कि कोई भी रोये नहीं और सब लोग ओं या गायत्री मंत्र का जप करते रहना । और मैं महामृत्युञ्जय मंत्र का सस्वर जाप करती रही । मैंने प्रभात से पूछा कि मेरा मंत्र बोलना तुम्हें कैसा लग रहा है तो कहने लगा कि मुझे बड़ी शाँति मिल रही है । ऐसा प्रतीत होता था मानों उसने मृत्यु के ऊपर विजय प्राप्त कर ली है । और जैसा जीवन भर शांत रहा—वैसे परम शांति के साथ ओं की पवित्र ध्वनि के साथ प्रभु में मिल गया । जितने भी डाक्टर्स व रिश्तेदार वहाँ उस समय उपस्थित थे सभी उस चमत्कारिक देहावसान पर ईश्वर भक्ति की अनोखी लीला को देखकर आश्चर्य कर रहे थे । हमारा तो यही विचार है कि प्रभात तो इस आवागमन के चक्कर से छुट कर मोक्ष का अधिकारी बन ही गया है परन्तु उसकी पत्नी अंजुला भी उसके स्वागत के लिये पहले ही वहाँ पहुँच चुकी है । अब बाद में २ बच्चे बच गये थे एक प्रभात का बेटा पुनीत और एक सलेकचन्द्र जी की लड़की छवि । छवि का भी २८ ता० को स्वर्गवास हो गया था । अब सब डाक्टरों का ध्येय पुनीत को बचाना था परन्तु पुनीत के अन्दर भी कोई महान् आत्मा ही निवास कर रही थी उसको भी दिव्य दृष्टि प्राप्त हो गई थी । जिस समय प्रभात का प्रशान्त हुआ वह एकदम चिल्लाने लगा मेरे पाप को बचालो उन्हें कोई ले जा रहा है । और फिर अगले दिन जब प्रभात की बौडी को अन्त्येष्ठी संस्कार के लिए मुर्दाघर से निकालकर जीप पर रक्खा तो पुनीत फिर कहने लगा कि "मेरे पापा को कहाँ ले जा रहे हो" मेरे आँसू आ रहे हैं मेरे आँसू पोंछ दो और जब प्रिय अंजु व प्रभात की एक साथ अस्थि बिनी गई तो कहने लगा कि "मेरे मम्मी पापा के साथ में ये क्या कर रहे हो" जलने से तो वो करीब २ ठीक हो गया था परन्तु गैस inhale होने के कारण वह भी न बच सका । एक मुसलमान पेशेन्ट ने भी उसके लिये दुआएं माँगी मिन्नते माँगी पर कुछ भी काम न आया—और वह भी जब मवाने में उसके माता-पिता व बहन का शाँति यज्ञ ३ दिसम्बर में हो रहा था वह भी उसी में सम्मिलित हो गया—३ ता० को ७½ बजे उसने भी इस शरीर को त्याग दिया और अपने माँ-बाप व बहन से जा मिला । सम्पादक जी-ये है हमारी दुखान्त कहानी । मन में तो जहाँ शोक समुद्र उमड़ा रहता है वहाँ मैं अपने को गौरवान्वित भी अनुभव करती हूँ कि मेरा बेटा कितना महान था । बहुतेरा अपने मन को समझाने का प्रयत्न करती हूँ । आपके सितम्बर के जन-ज्ञान में जो ईशोपनिशद् के मन्त्र व्याख्या सहित निकले थे उनमें आरम्भ के ४-५ मन्त्रों पर तो मैं सितम्बर से ही बड़ा गहन विचार कर रही थी पता नहीं भगवान ने किसलिए ये अग्नि परीक्षा ली है । मेरे बहादुर बेटे ने अपना सब दुःख ईश्वर को ही अर्पित कर दिया था । इतनी असह्य मानसिक व शारीरिक वेदना व व्यथा के होते हुए भी एक शब्द मुंह से न निकालना और ईश्वर में ही लौ लगा देना इस बात का संकेत है कि जो ईश्वर भक्त होते हैं उन्हें कोई भी कष्ट नहीं व्याप्ता क्या आप इस विषय में कोई प्रकाश डालेंगे ।

आपका अनमोल समय लेने के लिए क्षमा प्रार्थी हूं । कष्ट के लिए धन्यवाद ।

मवाना (मेरठ) भवदीया **शीलापाल**

 Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मांस भक्षण: आपकी हिंसात्मक प्रवृत्ति

—उदय शरण कुल श्रेष्ठ

सामवेद में प्राणी हिंसा निषेधार्थ स्पष्ट लिखा है **'मा हिंस्यात् सर्वाणि भूतानि'** अर्थात् किसी भी प्राणी की हिंसा मत करो तथा **मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे, मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे** (यजु ३६/१८) इस मन्त्र में सभी प्राणियों के प्रति मित्र भाव है एवं **'मानो गोषु मानो अश्वेषु रीरिषः** (यजु १६/१६) **भेषजमसि भेषजं गवे अश्वाय पुरुषाय भेषजम् सुखम्मेषाय भेष्ये** (यजु ३/५९) इत्यादि स्थलों पर भी पुनः पशुरक्षा निमित्त की हुई प्रार्थना प्रत्यक्ष परिलक्षित हो रही है और पशुरक्षा निमित्त प्रार्थना अहिंसक व्यक्ति द्वारा ही संभव हो सकती है वेद में ऐसे और भी अनेक मन्त्र हैं जिनमें प्राणी हिंसा का पदे-पदे निषेध किया है। स्मृति ग्रन्थों में भी देवपूजन और यज्ञादि हेतु पशुओं की बलि निषेध ठहराते हुए स्पष्ट लिखा है कि—

> **कस्यापि प्राणिनो हिंसा नैव कार्याअत्र भानवेः**
> **सूक्ष्म युकामत्कुणादेरपि वृद्धा कदाचनः**
> **देवतापितृयागार्थमप्यजादेश्च हिंसनम्,**
> **न कर्तव्यमर्हिसैव धप्रोक्तोअस्ति यन्महान्।**

तथा स्थान-स्थान पर अहिंसा परमो धर्मः इत्यादि अहिंसापरक वाक्यों का समुल्लेख भी उपलब्ध होता है और अहिंसा क्या है ? इसका अर्थ तो साधारण लोग भी जानते हैं कि—

> **कर्मणा मनसा वाचा, सर्वभूतेषु सर्वदा**
> **अक्लेशजनने प्रोक्तमहिंसात्वेन योगिभिः।**

अर्थात् मन, वाणी, कर्म, से किसी भी प्राणी को कष्ट न पहुँचाना ही अहिंसा है

वेदों में गोमेध नरमेध अश्वमेध आदि का विधान है केवल इस वाक्य को लेकर ही प्रतिपक्षी पशुवलि का समर्थन वेद द्वारा करने में इति श्री समझ लेते हैं प्रत्येक व्यक्ति को यहाँ यह जानना आवश्यक है, कि गोमेध, नरमेध इत्यादि शब्द गौ-बलि, नरवलि इत्यादि के द्योतक नहीं हैं। अतः इनका जैसा अर्थ साधारण लोग समझते हैं वास्तव में वैसा अर्थ नहीं है क्या गोमेध शब्द का अर्थ गोवलि करके हिंदू (कोई भी) यज्ञादि में गाय का बध करने को तत्पर हो सकता है ? क्या नरमेध का अर्थ नरवलि करके कोई भी हिंदू देव-सम्मुख या यज्ञादि में समर्थ हो सकता है ? यदि कोई समर्थ हो तो बध करके देखे, फल भी प्रत्यक्ष मिल जायगा।

मूलतः इन सब शब्दों का अर्थ ही कुछ और है मेरी दृष्टि में तो वेद- प्रमाण रहित पशुबलि समर्थक हिंदुओं की अपेक्षा वे नास्तिक भले हैं कि—

> **पशुश्चेन्निहतः स्वर्गं, ज्योतिष्टोमे गमिष्यति,**
> **स्वपिता यजमानेन तत्र, कस्मान्न हिंस्यते।**

अर्थात् यदि यज्ञ में मारे जाने वाला पशु स्वर्ग को हो जाता हो तो फिर यजमान अपने पिता एवं परिवार को ही मार कर स्वर्ग क्यों नहीं भेज देता ?

आशा है लोग व्यर्थ ही निरीह को कष्ट न देकर धर्म के इस सार को भी अवश्य याद रखेंगे कि **'आत्मनः प्रति कूलानि परेषां न समाचरेत्।'** ●

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सुन्दर रथ में बैठ चल दिया

ओमप्रकाश उपाध्याय ,"मधुर"

सुन्दर रथ में बैठ चल दिया,
लेकिन पथ का ज्ञान नहीं है।
और सारथी मिला अनाड़ी,
जिस पर कुछ अभिमान नहीं है।
घोड़े वहुत तीव्रगामी थे, जिन्हें न अपने पर संयम था।
जिनके पग-पग भटक रहे थे, चौराहों पर नहीं नियम था।
मुझको लगी बयारि सो गया,
तन का भी कुछ ध्यान नहीं है। १।
पनघट-पनघट भटका अटका, लेकिन ऐसी प्यास जगीथो।
जीवन को बन्दी करने की तृष्णाओं में होड़ लगी थी।
रूप नगर की सैर सलोनो,
कम करती अरमान नहीं। २।
चेत हुआ भी है जब आखिर, हिय हारे सारथी थका है।
मंजिल से भटकाव हो गया, अनचाहे रथवान रुका है।
रथ भी जीर्ण हुआ जर्जर पर,
अन्तर ज्योतिर्मान नहीं है। ३।
किस हद तक तृष्णा बढ़ी थी, रथके हर पहिये पर अंकित।
ऐसे अक्षर भाल लिख गए, जिन्हें देख अपने में शंकित।
पड़ा त्यागना इसी लिये रथ,
क्योंकि रहा गतिमान नहीं है। ४।
सुन्दर रथ में बैठ चल दिया,
लेकिन पथ का ज्ञान नहीं है।

पुरोहित चाहिए

"आर्य समाज गाजियाबाद के लिए एक सुयोग्य पुरोहित की आवश्यकता है जो समस्त वैदिक संस्कार योग्यता पूर्वक करा सके और वैदिक सिद्धान्तों का अच्छा ज्ञान रखते हो और उन पर प्रभावशाली भाषण दे सकें। संगीत जानने वाले को वरीयता दी जायेगी।"

परमानन्द शर्मा मन्त्री—
आर्य समाज गाजियाबाद

 Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

–प्रगति दिशा में नया पग
"जनज्ञान" अंग्रेजी का प्रकाशन
प्रभावी उद्घाटन समारोह : आर्यनेताओं द्वारा अभिनन्दन

—"दीनानाथ सिद्धान्तालंकार"—

"दयानन्द संस्थान" ने अपने स्वल्प आयु काल में वैदिक साहित्य प्रकाशन की दिशाओं में जो सराहनीय और ठोस कार्य किया है, उसमें एक नयी दिशा का सूत्रपात तब हुआ जब १३ जनवरी ७३ शनिवार सायं ६ वजे आर्य समाज मन्दिर हनुमान रोड में अंग्रेजी में "जनज्ञान" मासिक का उद्घाटन, शुभ यज्ञ के बाद, केन्द्रीय राज्य मंत्री श्री शेरसिंह के कर कमलों द्वारा सम्पन्न हुआ। दैनिक "वीर अर्जुन और प्रताप" के सम्पादक श्री के० नरेन्द्र की अध्यक्षता में आयोजित इस समारोह में दिल्ली की लगभग १७५ आर्य समाजों के प्रमुख प्रतिनिधि और पंजाब हरियाणा के कईपत्रकारपर्याप्त संख्या में उपस्थित थे। जिसमें जालन्धर के हिन्दी-उर्दू दैनिक "वीरप्रताप" के संचालक-सम्पादक श्री वीरेन्द्र, अम्बाला के डॉ० हरिप्रकाश आयुर्वेदालंकार, करनाल के वेद प्रेमी आर्य श्री प्रतापसिंह चौधरी, गाजियाबाद महानन्द मिशन कॉलेज में दर्शनशास्त्र विभाग के प्रमुख प्राध्यापक श्री रतन सिंह, बरेली (उत्तर प्रदेश) के आर्य विद्वान आचार्य विश्वश्रवा, आचार्य जगदीश विद्यार्थी, कांग्रेस नेता चौ० देशराज, "जन- ज्ञान" हिन्दी की सम्पादिका श्रीमती राकेशरानी इत्यादि विशेष उल्लेखनीय थे।

"संस्थान" का परिचय

"जनज्ञान" अंग्रेजी की सम्पादक कुमारी ज्योत्स्ना की ओर से आज के प्रमुख अतिथि प्रो० शेरसिंह, व अध्यक्ष श्री के० नरेन्द्र तथा अन्य अभ्यागत महानुभावों का माल्यार्पण द्वारा स्वागत करने के बाद संस्थान के अध्यक्ष श्री भारतेन्द्र नाथ ने संस्थान का परिचय दिया। "दयानन्द संस्थान" की स्थापना के इतिहास पर प्रकाश डालते हुये आपने बताया कि किस प्रकार बिना किसी प्रकार की पूँजी के, मात्र प्रभु विश्वास और स्वतः प्रसूत काल प्रेरणा के सम्बल से ही संस्थान का तथा चारों वेदों को अल्प मूल्य पर प्रकाशित करने का उद्योग पर्व प्रारम्भ किया गया। वेदभाष्य की मांग आर्य समाज की ओर से इतनी उत्साहपूर्ण नहीं हुई जितनी देश की सामान्य हिन्दू जनता और विदेश स्थित भारतीयों से। यह वेदभाष्य साढ़े बारह हजार की संख्या में मुद्रित हो रहा है और इस वर्ष मार्च में इसका प्रथम खण्ड ग्राहकों तक पहुँचा देने का हमारा संकल्प है। संस्थान की ओर से अंग्रजी-हिन्दी में "सत्यार्थ प्रकाश" और महर्षि दयानन्द का जीवन चरित्र हम १९७५ में होने वाली "आर्य समाज जन्म शताब्दी" के उपलक्ष्य में, कम से कम, ५ लाख परिवारों तक पहुँचा देने के लिए दृढ़ संकल्प है। आप ने बताया कि सजिल्द हिन्दी, अंग्रेजी, सत्यार्थ प्रकाश और ऋषि का जीवन चरित्र

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जितना सस्ता संस्थान दे रहा है, इतना आज तक किसी सभा व प्रकाशक ने नहीं दिया है।

अंग्रेजी "जनज्ञान" केवल प्रभु विश्वास पर

अंग्रेजी में "जनज्ञान" प्रकाशित करने की आवश्यकता के सम्बन्ध में श्री भारतेन्द्र जी ने कहा कि ५ वर्ष पूर्व हिन्दी "जनज्ञान" प्रकाशित करने का संकल्प हमने एकान्त में बैठ, एकमात्र प्रभु प्रार्थना की पूंजी के साथ किया था। इस पत्रिका ने जनता में अपना एक अडिग स्थान बना लियाहै। अब पिछले कई मासों से "जनज्ञान" को अंग्रेजी में प्रकाशित करने की—विशेषतः विदेशों से माँग प्रबल हो रही थी। वैदिक धर्म के सिद्धान्तों का अंग्रेजी पढ़े लिखे शिक्षित वर्ग में सर्वथा अपर्याप्त प्रचार है। यही कारण है कि यह वर्ग आज ढोंगी गुरुओं और नवकल्पित अवतारों की ओर आकृष्ट हो रहा है। "जनज्ञान" अपने नये साहस द्वारा इस वर्ग तक पहुँचने का प्रयत्न करेगा। इसका प्रारम्भ भी केवल प्रभु विश्वास और आर्य जनता के सहयोग से ही किया जा रहा है। हमारी सर्वोत्कृष्ट पूंजी यही है।

पश्चिम में आध्यत्मिकता की भूख—शेरसिंह

अंग्रेजी "जनज्ञान" का उद्घाटन करते हुए केन्द्रीय कृषि राज्य मंत्री प्रो० शेरसिंह ने कहा "भौतिकवाद की उच्चतम चोटी पर पहुँचे आज के पाश्चात्य देश इस मार्ग से उकता गये हैं। शारीरिक सुखों की चरम सीमा को उपलब्ध करने के बाद भी आज का मानव अपने जीवन में एक खालीपन, शून्यता और अशान्ति अनुभव करता है। ईसाई मत उनकी मानसिक अशान्ति और रिक्तता की संतृप्ति करने में सर्वथा असमर्थ और अशक्त हो रहा है। यही कारण है कि उन देशों में भारत के अध्यात्मवाद के प्रति जनता की गहरी दिलचस्पी और उत्कंठा बढ़ रही है।" इस सम्बन्ध में अपनी मास्को यात्रा का एक अनुभव बताते हुए आपने कहा कि रूस के प्रमुख विद्वान की एक सांस्कृतिक गोष्ठी में सभी विद्वानों ने जब एक ओर ईसाइमत की विद्या विरुद्ध विचारधारा और दूसरी ओर भोगवाद के वर्त्तमान प्रवाह से असन्तोष प्रकट किया तब मैंने गोष्ठी के दूसरे दिन गायत्री मंत्र का हिन्दी और अंग्रेजी रूसी भाषा में अनुवाद पढ़कर सुनाये, जिससे समस्त विद्वन्मंडल मंत्रमुग्ध हो गया। सब ने एक स्वर से कहा कि "आपका यह मंत्र तो बड़ा शान्तिप्रद, शिक्षापूर्ण और उद्बोधक है। सचमुच आपके पास तो आत्मिक उन्नति की अद्भुत कुंजी है।" इसी प्रसंग में प्रोफेसर साहब ने अपना एक अमेरिकी पत्रिका का संस्मरण सुनाते हुए बताया कि किस प्रकार वहाँ के उच्चवर्गीय और सामान्य जनता—दोनों आध्यात्मिक शक्ति के लिए भारत की ओर उत्सुकता से निहार रही हैं।

आर्य समाज की शिथिलता

इस दिशा में आर्य समाज के विशेष दायित्व की ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए राज्य मंत्री महोदय ने आर्य समाज की विदेशों के लिए उपयुक्त साहित्य प्रसार के प्रति व्याप्त उदासीनता और शिथिलता पर भारी खेद प्रकट किया। अपने इस कथन की पुष्टि में आपने आचार्य विनोवा भावे के साथ आर्य समाज के एक शिष्टमंडल की उस मुलाकात का उल्लेख किया जिसमें विनोबाजी को "सत्यार्थ प्रकाश" तथा अन्य ऋषि दयानन्द ग्रन्थ जब भेंट किये गये तब उन्होंने कहा "आज से लगभग ३० वर्ष पूर्व भी मुझे यह ग्रन्थ दिये गये थे और आज भी यही ग्रन्थ दिये जा रहे हैं। इन

Dr. Vivek Arya Vedic Library; Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ग्रन्थों का समुचित सम्मान करते हुए भी ऐसा प्रतीत होता है कि आर्य समाज के पास नवीन और आधुनिक साहित्य की कमी है।"

प्रोफेसर साहब ने "जनज्ञान" अंग्रेजी के प्रकाशन का हार्दिक स्वागत करते हुए कहा "मैंने इस पत्र के प्रथम अंक को सरसरी दृष्टि से देखा है। इसमें कई लेख अवश्य ही पठनीय और ज्ञानवर्द्धक हैं। मैं पूर्ण आशा करता हूँ, यह पत्र अंग्रेजी शिक्षितवर्ग में वैदिक सिद्धान्तों के प्रचार का उत्तम और उपयोगी माध्यम बनेगा। इन शब्दों के साथ मैं मंगल कामनाओं से "जनज्ञान" का शुभारम्भ करता हूँ।"

श्री चौधरी देसराज जी

कांग्रेसी (पुराने) नेता श्री देसराज चौधरी ने कहा "मैं पहले भारतेन्द्र जी की कार्य पद्धति का विरोधी था। पर, अब पिछले कुछ वर्षों से इनके साहस, लगन और सूझ बूझ को देख मैं इनका समर्थक बन गया हूं। "दयानन्द संस्थान" द्वारा जिस प्रकार सुन्दर, सुलभ, आकर्षक और बढ़िया मुद्रण के साथ यह आर्य साहित्य प्रकाशित कर रहे हैं, वह, निश्चय ही, प्रिय व प्रशंसनीय है। इस समय, यह खेद से कहना पड़ता है कि आर्य साहित्य प्रकाशन का समुचित संगठन नहीं है। दयानन्द संस्थान प्रकाशन और मुद्रण कलामें विख्यात है। "जनज्ञान" अंग्रेजी में प्रकाशित कर इन्होंने जिस साहस का परिचय दिया है, मैं उसका हार्दिक अभिनन्दन करता हूं।" चौधरी जी ने कहा "मैं यहाँ उपस्थित सज्जन वृन्द से सबल अनुरोध करता हूं कि इस पत्रिका के सभी ग्राहक बन संचालकों का उत्साह-वर्धन करें।" चौधरी जी जहाँ तत्काल स्वयं पत्रिका के ग्राहक बने, वहाँ, सभा समाप्ति पर पर्याप्त संख्या में उपस्थित महानुभावों ने अपने नाम ग्राहक श्रेणी में लिखाया।

अंग्रेजी शिक्षितवर्ग : वैदिक धर्म से अपरिचित

महानन्द मिशन कॉलेज, गाजियाबाद के दर्शन प्राध्यापक श्री रत्नसिंह ने इस पत्रिका का स्वागत करते हुए और अपनी ओर से लेख इत्यादि द्वारा पूर्ण सहयोग की घोषणा करते हुए साहित्य प्रचार में आर्य समाज की खेदपूर्ण शिथिलता के उदाहरण रूप बताया कि उनके कॉलिज के पुस्तकालय में ७० हजार के लगभग पुस्तकें हैं जिनमें केवल "सत्यार्थ प्रकाश" की एक ही पुरानी, दीमक खाई हुई प्रति है, अन्य कोई पुस्तक नहीं है। आपने कहा अंग्रेजी में आर्य समाज के साहित्य की इस कमी के कारण अंग्रेजी शिक्षित व्यक्ति वैदिक धर्म से अनभिज्ञ हैं। अंग्रेजी के प्रभाव से इन्कार नहीं किया जा सकता।

अंग्रेजी में आर्य समाज साहित्य का प्रभाव

पंजाब के आर्य नेता और प्रमुख पत्रकार श्री वीरेन्द्र ने अमरहुतात्मा पं० लेख राम के इन अजेय वचनों को कि "आर्य समाज से लेखन का काम बन्द न हो"—उद्धृत करते हुए इस क्षेत्र में समाज की वर्तमान शिथिलता और उदासीनता पर विशेष खेद प्रकट किया। भारत के प्रथम राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन द्वारा उनसे मिलने गये एक आर्य शिष्टमंडल को कहे गये यह शब्द कि "आर्य समाज का साहित्य अधिकतः हिन्दी में ही है और वह भी प्रायः पुराना है तथा विदेशों के लिए कोई उपयुक्त साहित्य नहीं है"—उपस्थित करते हुए वीरेन्द्र जी ने अंग्रेजी साहित्य के प्रकाशन की ओर जहाँ आर्य समाज का ध्यान आकृष्ट किया, वहाँ "जनज्ञान" अंग्रेजी के प्रकाशन को बड़ा आवश्यक बताया। एक ओर अंग्रेजी वैदिक साहित्य की कमी और दूसरी ओर पश्चिम में बढ़ रही आध्यात्मिक पिपासा के सन्दर्भ में आपने अपनी हाल की विदेश यात्रा के कुछ अनुभव भी सुनाये।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पश्चिम का अन्धा अनुकरण नाशक है

अध्यक्ष पद से भाषण देते हुए श्री के० नरेन्द्र ने पश्चिम के अन्धानुकरण का प्रवत्ति को श्रेष्ठ और सदाचार वर्द्धक साहित्य के प्रसार और प्रचारद्वारा रोकने का ओर ध्यान दिलाते हुए भारतीय सभ्यता के अतीत युग से प्रेरणा लेने की आवश्यकता पर बल दिया। विदेशों में वैदिक ज्ञान के प्रचार के लिए हमें विशेष उत्साह के साथ ठोस कार्य करने होंगे। आप ने भावपूर्ण शब्दों में "जनज्ञान" अंग्रेजी की सफलता और चर्तुदिक प्रसार के लिए अपनी शुभकामनायें प्रकट की। ●

आर्य जनता को यह जान हर्ष होगा कि हिन्दी सत्यार्थ प्रकाश का चौथा संस्करण एक वर्ष के भीतर हो छप रहा है। इस का संपादन प्रसिद्ध शास्त्रार्थ महारथी श्री अमर स्वामी कर रहे हैं। अपने आदेश शीघ्र भेजें ।।

भारत के घर-घर में सत्यार्थप्रकाश पहुंचाइए !

व्यवस्थापक
"दयानन्द संस्थान"
नई दिल्ली-५

---

१५ दिसम्बर को दिल्ली में आर्यसमाज के सुयोग्य कार्यकर्त्ता श्री देवप्रकाश आयुर्वेद भास्कर का स्कूटर दुर्घटना में देहान्त हो गया। आप महाविद्यालय ज्वालापुर के मंत्री श्री पं० प्रकाशचन्द्र जी के छोटे भाई थे। आप की मृत्यु से सभी परिजनों व परिचितों को गहरा आघात लगा। प्रभु दिवंगत को शान्ति और परिवार को धैर्य प्रदान करें।

—सपादक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

योग विद्या के निष्काम प्रचारक

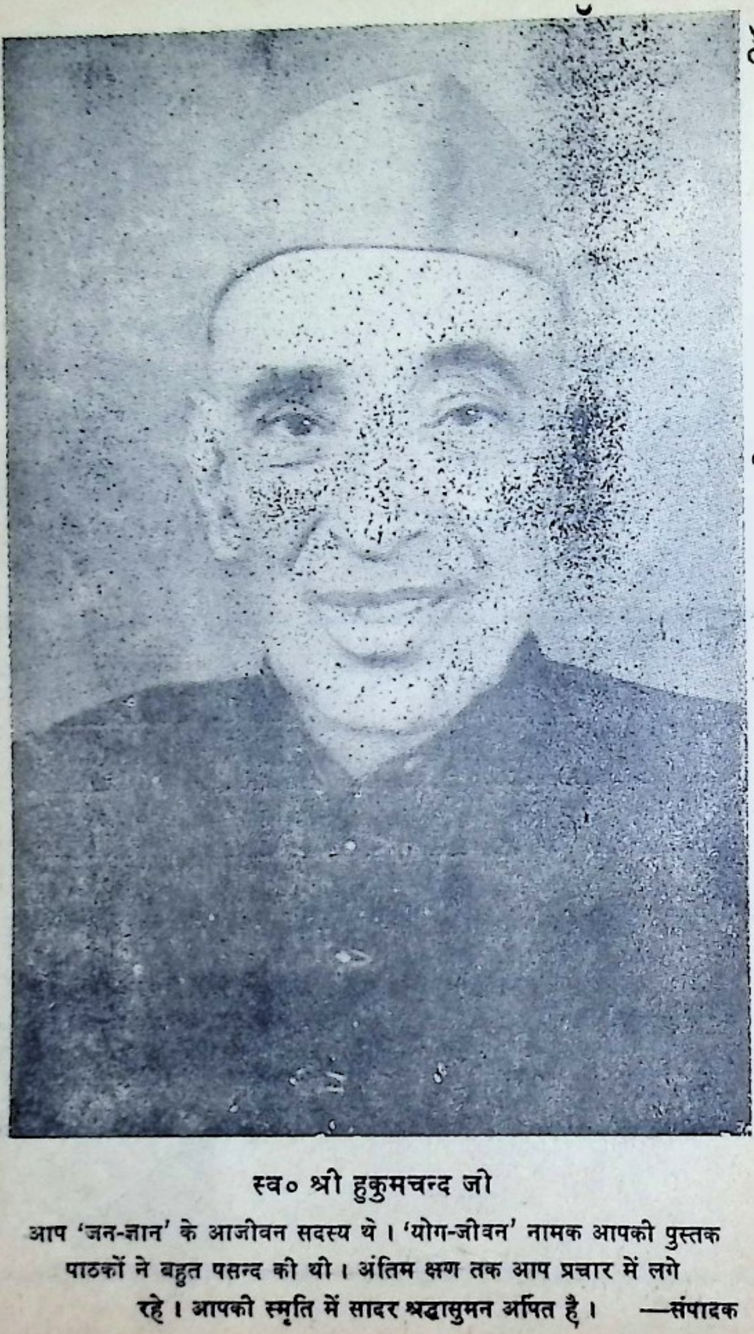

स्व० श्री हुकुमचन्द जो

आप 'जन-ज्ञान' के आजीवन सदस्य थे। 'योग-जीवन' नामक आपकी पुस्तक पाठकों ने बहुत पसन्द की थी। अंतिम क्षण तक आप प्रचार में लगे रहे। आपकी स्मृति में सादर श्रद्धासुमन अर्पित है। —संपादक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बालक के व्यक्तित्व का विकास कसे किया जाय

श्रीमती सावित्री देवी वर्मा, एम० एम०

अगर बचपन में ही बालक के व्यक्तित्व का सही ढंग से विकास किया जाए तो बड़े होकर अभाव तथा असफलता के बीच भी वह अपने जीवन को सुखी बना सकेगा। जीवन की हार-जीत को वह सहज ढंग से स्वीकार करेगा। इसलिए माता-पिता तथा अध्यापकों का प्रथम कर्त्तव्य है कि वे बच्चे के व्यक्तित्व को विकसित होने में ऐसा सहयोग दें कि वह सहनशील, आत्मनिर्भर, सहयोगी, तथा व्यवहार कुशल बन सके। इसके लिए नीचे लिखी बातों का ध्यान रखने से अवश्य सफलता मिलेगी।

१—अगर जन्म से ही बच्चे के शारीरिक और मानसिक विकास में कुछ न्यूनता है तो उसे समान योग्यता और सामर्थ्य वालेबच्चोंके साथ ही बढ़ने तथा खेलने का अवसर दें। अगर उसमें कुछ कुरूपता है तो उसमें आत्मविश्वास पैदा करके अन्य किसी बात में विशेष उन्नति करने का प्रोत्साहन दें।

२—बहुत कम बच्चे सर्वगुण संपन्न होते हैं। कोई विज्ञान में तेज है तो कोई कला की ओर विशेष आकर्षित है। बच्चे की रुचि और योग्यता के अनुसार काम सौंपा जाय ताकि वह अपनी एक कमी को दूसरी ओर पूरी करके सन्तुलन बनाए रखे।

३—स्कूल में अध्यापक इस बात का विशेष ध्यान रखे कि शारीरिक हीनता के कारण संगी-साथी बच्चे का मजाक न उड़ायें। सभ्यता व सद्-व्यवहार का पाठ उन्हें बचपन में पढ़ाना होगा।

४—बच्चे को कोई विषय समझ में न आने पर उसे बुद्धू, कूढ़मगज, भौंदू आदि उपाधियों से विभूषित करना महा-मूर्खता है। इससे उनका आत्म-विश्वास हिल जाता है और वे तरक्की करना छोड़ देते हैं।

५—जब अच्छे बच्चों की प्रशंसा की जाय तब पिछड़े हुए बच्चों के साथ उनकी तुलना न करनी चाहिए। इससे तेज बच्चा दंभी बन जाएगा और पिछड़ा हुआ बच्चा हीनता की भावना से उसके प्रति द्वेषी हो जाएगा।

६—हर समय डाँट-डपट, आलोचना करने तथा धिक्कारने से बच्चा ढीठ हो जाता है वह आप की बात को एक कान से सुनकर दूसरे से निकाल देगा। 'उह' ये तो हमेशा ऐसा ही कहते रहते हैं। करो तो भी बुरे, न करो तो भी बुरे बकने दो इन्हें। इस प्रकार बुड-बुड कर के आपकी उपेक्षा करेगा। शनैः शनैः यह उपेक्षा इतनी प्रबल हो जाती है कि बच्चा अपने गुरुजनों के प्रति सचमुच अशिष्ट तथा उद्दण्ड हो उठता है। माँ-बाप भी तंग आकर बच्चे के प्रति विरक्त हो जाते हैं। उसे कपूत समझकर उसकी उन्नति की ओर से भी उदासीन बन जाते हैं। इस प्रकार तिरस्कृत होकर बच्चा घरेलू सुविधाओं से भी वंचित हो जाता है। ऐसे दृष्टान्त घर-घर मिल जायेंगे जहाँ बचपन में ठीक तरह से न समझे जाने के कारण मेधावी बच्चे भी पिछड़

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

गये हैं। और उनके कारण घर की बदनामी होती है। माँ-बाप दुखी हो जाते हैं, और बच्चे का तो जीवन ही निष्फल हो जाता है।

७—असफलता, सफलता की प्रथम सीढ़ी है। गिर-गिर कर ही सब चलना सीखते हैं। असफल होने पर आप बच्चे की हँसी न उड़ायें। उस की कठिनाइयों को समझने की चेष्टा करें। आपकी चेष्टा उसे निकम्मा प्रमाणित करने की नहीं, अपितु उसको सफलता प्राप्त करने में सहयोग देने की होनी चाहिए। हो सकता है वह जरा जल्दबाज हो, घबड़ाता हो, तो भी काम करने का सही ढ़ंग बताकर उसे स्वयं काम करने दें तभी उसमें आत्म निर्भरता आयेगी। खुद उसका काम करके पराये पंखों पर उड़ना न सिखायें। वह दूसरों के किये काम की बड़ाई पाने का आदी होकर कामचोर बन जायेगा।

८—घर के सब बच्चों के साथ एक सा व्यवहार करना चाहिए। प्रायः ऐसा होता है कि रूपवान् व तेज बच्चे पर माँ-बाप का अधिक अनुग्रह होता है, उसी को सुन्दर कपड़े तथा साथ जाने की सुविधा मिलती है, जब कि बदसूरत बच्चे को कलूटा, बुद्धू आदि कह कर घर में मजाक बनता है। इस प्रकार का पक्षपात बहुत महंगा पड़ता है। उससे सुन्दर बच्चा दंभी होकर चेष्टा करना छोड़ देता है और आगे जाकर निकम्मा बन जाता है, बदसूरत या मन्द बुद्धि बच्चा भी हीनता से भरकर आत्मविश्वास खो बैठता है और वह अपनी तरक्की में दिलचस्पी लेना छोड़ देता है।

९—कभी-कभी अच्छा-भला चेहरा बेपरवाही से खराब भी हो जाता है। यथा बच्चे को नाखून कुतरने अथवा कपड़ा चबाने या अंगूठा चूसने की बुरी आदत पड़ जाती है। कभी-कभी माताएं भी छोटे बच्चे को चुप कराने के लिए रबड़ की चुस्नी या अंगूठा मुंह में दे देती है। इससे बच्चे के दाँत आगे को बढ़ जाते हैं। आंख बिचकाना, ओंठ छीलना, मोड़ना या चबाना, नाक में हमेशा उंगली डालना, गले से विशेष प्रकार की ध्वनि करना आदि आदतें ऐसी हैं कि बच्चे को बदसूरत बना देती हैं। इसके अतिरिक्त पेट निकालकर, कुबड़े होकर या टेढ़े पाँव करके चलने, कर्कश आवाज में चिल्ला कर या गुन-गुना कर, चीख कर बोलने से भी व्यक्तित्व प्रभावहीन हो जाता है। इसी प्रकार शिष्टाचार के अभाव में भी मनुष्य असभ्य तथा अशिक्षित-सा प्रतीत होता है। ठीक ढंग से खांसना छींकना, जम्हाई लेना, गला साफ करना आदि बातें बचपन से ही सिखाई जायें। इस विषय में बच्चे बड़ों के उदाहरण से बहुत कुछ सीखते हैं। सलीके से खाना-पीना, बातचीत करना, अपनी चीजों की संभाल, वेश-भूषा में सुथरापन आदि बातें बच्चे अपने मां-बाप तथा संगी-साथियों से ही सीखते हैं।

१०—बच्चों को अपने मनोभावों को प्रकट करने का भी सही ढंग आना चाहिए। दाँत पीसते हुए, आँखें निकालकर, मुट्ठियाँ भीच कर अगर कोई क्रोध प्रकट कराता है, या मुंह फाड़-फाड़ कर, घिगिया-घिगिया कर रोता है तो उसकी आकृति हास्या-स्पद-सी बन जाती है। इसी प्रकार अपनी रोष प्रकट करते समय माथे पर त्योरियाँ डाल कर, झुंझलाते हुए बोलना भी दोष है। जिन व्यक्तियों का बातचीत करने का ढंग सभ्य और स्वाभाविक होता है, उनकी संगति सब को प्रिय होती है। और वे अपने आकर्षक व्यक्तित्व से सबको सहज ही प्रभावित कर सकते हैं।

—बच्चों के विकास के लिए यदि अभिभावक इन बातों पर ध्यान देंगे तो अवश्य अच्छे बच्चे बनेंगे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दयानन्द-संस्थान ने अपनी गौरवमयी परम्पराओं के
अनुसार संसार में वैदिक विचारधारा प्रसार के लिए

JAN GYAN (English Monthly)

का प्रकाशन आरंभ किया है।

- यह नया अँग्रेजी (मासिक) वैदिक विचारधारा को भूमण्डल में पहुंचाएगा—
- वैदिक अध्यात्म की पावन गंगा अँग्रेजी भाषा के माध्यम से धरती पर बहाएगा।
- ऋषि दयानन्द की विजय पताका सर्वत्र फहराएगा।

बढ़िया कागज : बढ़िया छपायी और
उत्तमोत्तम सामग्री के साथ

आर्यसमाज का गौरव और प्रचार का प्रबल साधन होगा।

भेंट करने योग्य : अनुपमग्रन्थ

वैदिक—गृहस्थाश्रम

वेदों के अद्वितीय विद्वान पं० विश्वनाथ विद्यामार्तण्ड द्वारा लिखित मूल्य ५) किन्तु जन-ज्ञान के सदस्यों के लिए २) ५०

थोड़ी सी प्रतियां शेष हैं : शीघ्र मंगाएं

वैदिक डायरी

पहला संस्करण हाथों-हाथ निकल गया, दूसरा तैयार है, अपना आदेश तुरन्त भेजें।

संध्या-हवन-भजनादि सहित: प्रत्येक पृष्ठ पर वेद मन्त्र।

सजिल्द १५०) सैंकड़ा। अजिल्द १०० सैंकड़ा।

जन-ज्ञान-प्रकाशन १५६७ हरध्यान सिंह मार्ग नई दिल्ली—५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ऋषि दयानन्द वैदिक संस्थान का नाम - उद्देश्य - आदि ।

(भारतीय ट्रस्ट अधिनियम १८८२ के अन्तर्गत पंजीकृत न्यास)

१. नाम :—

(क) संस्था का नाम "ऋषि दयानन्द वैदिक संस्थान" होगा । किन्तु समस्त कार्य व्यवहार में 'दयानन्द संस्थान' शब्द ही प्रयुक्त होगा ।

२. उद्देश्य :—संस्थान के निम्न उद्देश्य होंगे :—

(१) वेद और वेदोक्त विचारधारा का भूमण्डल में प्रसार तथा अज्ञान अभाव और अन्याय की समाप्ति ।

(२) मानव मात्र के कल्याणार्थ सत्य, ज्ञान, मानवता और न्याय पर आधारित व्यवस्थाओं का प्रसार और शिक्षण संस्थाओं की स्थापना ।

(३) अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए चरित्रवान धर्म प्रचारक, विशेषज्ञ, अन्वेषक और संन्यासी महानुभावों की सेवायें उपलब्ध करना ।

(५) विश्व के विभिन्न भागों में अपने केन्द्र खोलना तथा समान उद्देश्य वाले संगठनों को सम्बद्ध करना और उनकी सहायता करना व अपने उद्देश्य पूर्ति के लिए संस्थाएं स्थापित करना ।

महत्वपूर्ण धाराएं

(६) संस्थान की समस्त संपत्ति व आय उक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए ही व्यय की जायेगी जिस के लिए संस्थान दान, अनुदान, ऋण ले व दे सकेगा तथा संपत्ति का क्रय विक्रय भी कर सकेगा ।

(७) संस्थान का प्रत्येक कार्य ऋषि दयानन्द के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए होगा । इस संदर्भ में ऋषि दयानन्द लिखित सत्यार्थ प्रकाश व अन्य ग्रंथ अन्तिम प्रमाण होंगे ।

दयानन्द-संसद्

कार्य व नीति पर विचार के लिए संस्थान की एक दयानन्द-संसद होगी जिस की सदस्यता निम्न प्रकार होगीं :—

(१) १००१) रु० प्रतिवर्ष देने वाले संरक्षक सदस्य ।
(२) ५०१) रु० प्रतिवर्ष देने वाले पोषक सदस्य ।
(३) १०१) रु० प्रतिवर्ष देने वाले संचालक सदस्य ।
(४) ५१) रु० प्रतिवर्ष देने वाले दाता सदस्य ।
(५) २५) रु० प्रतिवर्ष देने वाले सहायक सदस्य ।
(६) ११) रु० प्रतिवर्ष देने वाले प्रचारक सदस्य ।

(७) विद्यादि गुणों के कारण अथवा संस्थान के कार्य के लिए जीवन देने वाले अध्यक्ष की सहमति से कार्यकारिणी द्वारा जो सदस्य बनाए जायेंगे वे आजीवन सदस्य होंगे ।

आर्य जनता से प्रार्थना है कि उक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए "दयानन्द-संसद" के सदस्य बनें ।

विनीत
—भारतेन्द्र नाथ
अध्यक्ष

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अन्तिम किश्त

अनुवादक :
बनारसीसिंह एम० ए०

लेखक :
वीर सावरकर

धारावाहिक उपन्यास

मोपला

ऊँचे-ऊँचे आह्वान् देते हुए भयप्रद बिगुल तथा बैण्ड इत्यादि रणवाद्य बजने लगे ! हजारों तुर्क लोगों को लेकर अनवर पाशा, हजारों हथियारों से लदी अरबी नौकाएं, सहस्रों पठानों के साथ अमीर, हिन्दुस्थान में मुसलमानों के साम्राज्य की स्थापनार्थ अली मुसँलियर के मोपला खिलाफती राज्य की सहायतार्थ दौड़ते हुए आये। आने से पहले ही गोरखों की सेना ने 'हर हर महादेव' का जयघोष करते हुए धावा बोल दिया। थंगल ने जिन देवताओं के रेवड़ के रेवड़ अथवा किरीट में तीन चन्द्रमा लटकाए वह देव सेनापति जेब्रिल किंवा सुरतुल मुजदिल अध्याय के अनुसार मुसलमानों की विजय होगी, उस मौलवी द्वारा दिया गया आश्वासन, इनमें से कोई भी उन वीर गोरखों की तलवारों के प्रहारों को नहीं रोक पाया। तो फिर इन बेचारे मोपलों की तो बिसात ही क्या थी ! थंगल ने मरने के उपरांत स्वर्ग में दारू और स्त्रियाँ मिलने का जो प्रलोभन दिया था, तथा न दिखाई देने वाले देवदूतों की सहायता प्राप्त होने का जो भ्रम मन में बसा हुआ था उससे प्रेरित होकर दस-बारह मोपले लड़ते हुए मारे गए। परन्तु सैकड़ों मोपले स्वर्ग में प्राप्त होने वाली दारू और स्त्रियों के लोभ को बिसार कर गोरखों से लड़ने के स्थान पर अपने प्राण बचाकर भाग निकले। संध्या होते-होते कुट्टम ग्राम में मोपलों का दिखाई देना भी दुर्लभ हो गया। कोई मार डाला गया, कोई भाग निकला, हर हर महादेव की उस तलवार के सामने खिलाफत की आफत ही आ गई !

रात्रि हो गई, अंधकार चतुर्दिक व्याप्त हो गया। वह कुआं जिसमें थंगल और मौलवी ने कत्ल कराके सैकड़ों हिन्दू फेंक दिए थे, मानो आकाश की ओर निहार रहा था। अंधकार बढ़ता गया, मध्यरात्रि हो गई। जिस प्रकार बैठे-बैठे झपकियां लेने लगता है, उसी प्रकार कुएं को खोलकर अंधकार भी मानो गहरी नींद में खर्राटे भरने लगा था। उसके पेट में भयंकर पाचन क्रिया जारी थी। उस कुएं में पड़े हुए

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अनेक अर्धजीवित और मरणासन्न हिन्दुओं की कराहें, जो बीच-बीच में सुनाई पड़ रही थीं उस अन्धकार के पेट में होती हुई गड़गड़ाहट-सी प्रतीत होती थीं !

वह कुआँ, उसमें धकेली गई लाशों, धड़ों, धड़विहीन सिरों, टूटे हुए हाथों के टुकड़ों, माँसपिण्डों से आकंठ भरा हुआ था। इस कुएं की एक दीवार में एक वृक्ष फूट कर निकला हुआ था। अतः अनेक हिन्दुओं के जो शव, मॉस आदि के टुकड़े फेंके गए थे वे इसमें अटक गए थे और इसकी शाखाएं भी झुक गईं थीं। इसी की एक शाखा में एक घायल हिन्दू जिसे इस कुएं में धकेला गया था, अटक कर रह गया था। उसी के समीप एक मरणासन्न हिन्दू और भी लटका हुआ था। वह दम तोड़ ही रहा था कि एक कोमल-कण्ठ से निःसृत आवाज उस घायल हिन्दू को सुनाई पड़ी और वह थी 'भाई'। तू कहाँ है ? मुझे भय लग रहा है, अपना हाथ पकड़ा दे।' उस वृक्ष में अटके हुए हिन्दू ने जब यह आवाज सुनी थी तो उसकी थोड़ी-थोड़ी चेतना बनी हुई थी। उसने सोचा कि यह किसी ऐसी बहिन की आवाज है कि जो मरते समय अपने भाई का स्मरण कर रही है कि उसका क्या हुआ है, अतः वह विह्वल है। अथवा जब उसने हिन्दू धर्म का परित्याग न करने का संकल्प व्यक्त किया है तो मोपलों द्वारा की जा रही मारामारी में उसका भाई उससे बिछुड़ गया है ! या फिर जब मोपलों द्वारा इस कुएं में को अन्धाधुन्ध गिराया जा रहा है तो वह बहिन अपने भाई के हाथ का सहारा माँग रही है, जिससे कि वे दोनों ही साथ-साथ इस अन्धकूप में गिर सकें। अभी तक तो वह घायल हिन्दू अर्ध-चेतन अवस्था में ही था, इसलिए उसे अपनी पीड़ा का भान ही नहीं हो पा रहा था, किन्तु सहसा ही एक दम तोड़ते हुए व्यक्ति द्वारा पैर पटके जाने पर जब उसकी नाक पर आघात लगा तो वह सहसा ही पूर्णतः सचेत हो गया। किन्तु वह चेतना बड़ी ही भयंकर थी, मृत्यु की अचेत अवस्था से भी अधिक भयावह ! मध्यरात्रि, घिरा हुआ अन्धकार, चारों ओर गूँजती आहें-कराहें, बिलबिलाते मानस-पिण्ड, रक्त, मज्जा, माँस और अंतड़ियाँ, भीषण विस्मृति, भीषण स्मृतियां। वह घायल तरुण होश में आ गया था। अब उसके घायल कंधे और अंग-प्रत्यंग में भयंकर पीड़ा उभर उठी थी ! वह भी जोरों से चीख उठा। उसकी उन आहों और कराहों से कतिपय अन्य अर्धमृत घायल भी तड़प उठे ! मलबार में यह एकमात्र कुआँ ही नहीं था, जहाँ अर्धरात्रि के इस अन्धकार में आहों और कराहों के स्वर उभरे थे। ऐसे दसियों कूपों में इसी प्रकार की आहों और कराहों के गूंजते स्वरों से रावण के द्वारा की जाने वाली भयंकर गड़गड़ाहट का आभास हो उठता था।

उसी समय कानपुर के समीप एक भव्य बंगले में प्रेमवर्धक महामण्डल की सभा हो रही थी—खुदाबख्श, कड़कखान इत्यादि प्रमुख मुसलमान नेता तथा भालचन्द, गयाल सेठ, पीट गय्या इत्यादि हिन्दू नेता इस संस्था के इस विशेष अधिवेशन में उपस्थित थे। सभा में खड़े होकर कड़क खान ने कहा कि प्रेमवर्धक महामण्डल ने अपने अविकल परिश्रम से हिन्दू-मुसलमानों में जो एकता-निर्माण की है, वह कतिपय देश-शत्रुओं को फूटी आँखों नहीं भा रही है। अतः उन्होंने हिन्दुओं और मुसलमानों में दंगे होने के मिथ्या अत्याचार छापने का अभियान चलाया हुआ है ! उनकी यह सभा तीव्र निन्दा करती है ! सभा ने स्वयं इन मामलों की जाँच करने के लिए खुदाबख्श को मलबार भेजा था। उनके द्वारा प्रस्तुत किए गए प्रतिवेदन को देखते हुए यह सभा देश-भर की जनता की ओर से यह प्रस्ताव करती है कि मलबार में हिन्दू मुसलमानों की एकता को भंग करने वाली एक भी घटना घटित नहीं हुई है।"

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

गया सेठ बोला, "सभी हिन्दुओं की ओर से मैं इस प्रस्ताव का अनुमोदन करता हूँ। मलवार में हिन्दू और मुसलमान सुख और समाधान-सहित निवास कर रहे हैं। मलवार में कुछ भी नहीं हुआ है!

सभी हिन्दू बोल उठे—"कुछ भी नहीं हुआ है।"

"छी: छी:, कुछ भी नहीं हुआ, ऐसा कैसे कह रहे हो? या अल्लाह! अभी भी हमारे हिन्दू बन्धुओं में मुसलमानों के प्रति जितनी सहानुभूति होनी चाहिए वह नहीं है। मलवार में हमारे शूर मोपले जो यह कर रहे हैं, क्या वह कोई बात ही नहीं है?" कड़कखान कड़क उठा।

तभी अध्यक्ष भालचन्द ने खड़े होकर कहा "क्षमा कीजिए! कड़कखान महोदय, तुम्हारे शूर बन्धुओं उन मोपला वीरों और उनके धैर्य का यह सभा अभिनन्दन करती है। मोपले हम हिन्दुओं के भाई हैं।"

"हिन्दू मुसलमान भाई हैं" सभा में गर्जना हुई।

"हिन्दू मुसलमान एक हैं" मूढाप्पा, बावले, शास्त्री आदि उत्साह से नारे लगाने लगे।

"और यदि हिन्दू मुसलमान नहीं हुए हैं तो मोपले उन्हें मुसलमान बना रहे हैं, जान से मार रहे हैं।" एक गृहस्थ ने उठकर ज़ोरदार आवाज लगाई। तभी बावले, गवाले, भालचन्द इत्यादि हिन्दू नेता चीख उठे "गलत बात कहता है! तू है कौन, बता तो सही तू देशभक्त है?"

"यह देशशत्रु है। हिन्दू-मुसलमानों की एकता नष्ट कर रहा है" सारी सभा गूँज उठी। परन्तु इससे भी भयभीत न होते हुए वह गृहस्थ बोला, "शान्त हो जाओ। मैं जो कुछ कह रहा हूँ वह अक्षरश: सत्य है। मैं एक हिन्दू हूँ। मेरी इस सम्बन्ध में प्रत्यक्ष साक्षी है! स्वयं मुझे ही मोपलों ने भयंकर बल द्वारा मुसलमान बना लिया था। मेरे से भी लाखों गुना अधिक अत्याचार अन्य लोगों पर किया गया है।

"परन्तु अब तू मुसलमान है ना, फिर तू मुसलमानों के विरुद्ध कैसे बोल रहा है?" मौलवी करीमुद्दीन ने उससे पूछा।

"मैं हिन्दू हूँ। मोपलों ने मुझे बलात् मुसलमान बनाया था। परन्तु मुझे मेरी इच्छा के अनुरूप आर्यसमाज ने संस्कार कर शुद्ध कर लिया है। मैं तो हिन्दू का हिन्दू ही हूँ।"

"या अल्लाह! फिर तो यह काफ़िर मार दिए जाने के योग्य है!" कुढ़कर भयंकर रूप से चीखता कड़कखान बोला, "मुसलमानों की शरीयत के अनुसार जो व्यक्ति मुसलमानों से पुन: हिन्दू होगा वह मृत्युदण्ड का पात्र है। वह काफ़िर है, उसे जान से मार दिया जाना चाहिए।"

तभी अध्यक्ष भालचन्द ने हस्तक्षेप करते हुए कहा, "खान साहेब! क्षमा कीजिए। अपराध इस गृहस्थ का है। यह क्योंकि भांडखोर आर्यसमाज का अनुयायी है उसी प्रकार इसकी बात पर कोई विश्वास नहीं किया जा सकता यह तो स्पष्ट ही है।"

"आर्यसमाज बिलकुल भांडखोर संस्था है। यह आर्यसमाजी है, इसलिए इसकी साक्षी पर विश्वास ही नहीं किया जा सकता।" सभा में एक स्वर से लोग बोल उठे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

"परन्तु मलवार में हिन्दुओं पर भयंकर अत्याचार किए जा रहे हैं, उनकी हत्याएं की जा रही हैं। यह मैं आर्यसमाजी नहीं कहता अपितु यह बात श्री देवधर के पत्र में कही गई है। ये देखिए उनका पत्र।"

"श्रीयुत देवधर उपद्रवी है" सभा गरज उठी।

"श्रीयुत देवधर उपद्रवी है, हम असहकारी देशभक्तों को उसका कथन मान्य नहीं है।" भालचन्द ने निर्णय दे दिया।

"फिर भी मलबार में मोपलों द्वारा हिन्दुओं से किए गए छल को तुम्हें सत्य मानना चाहिए! कारण देवधर ही नहीं डॉ० मुंजे भी इस बात की साक्षी देने को तैयार हैं कि यह बात सत्य है!"

"डॉ० मुंजे जाहिल हैं, अतः उनकी ही साक्षी पर विश्वास नहीं किया जा सकता" सभा में स्वर गूंज उठा।

डॉ० मुंजे जाहिल, अतः हम अनत्याचारी देशभक्तों की दृष्टि में उनकी साक्षी विश्वसनीय नहीं है।" अध्यक्ष भालचन्द ने निर्णय किया।

"परन्तु जिन-जिन हिन्दुओं को इस भयंकर आपत्ति से ग्रस्त होना पड़ा है, उन्होंने हस्ताक्षरों सहित आपदाओं की यह गाथाएं लिख कर मेरे मित्रों को तारों द्वारा भेजी हैं। कुट्टम ग्राम में कुछ दिन पूर्व ही भयंकर हिन्दू-मुस्लिम दंगा हुआ है और मुसलमानों द्वारा हिन्दुओं का शिकार खेला जा रहा है। यह सूचना मुझे दूसरे पत्र द्वारा मिली है, मैं वह थोड़ी-सी पढ़कर सुनाए देता हूँ।

"अरे तारों का क्या है? काल्पनिक दंगा सम्बन्धी समाचारों की तारें तो मुझे प्रतिदिन ही सैकड़ों मिल रही हैं। परन्तु मलवार के इन हिन्दुओं की इन तारों की एक गद्दी बनाकर मैं अपनी उस कुर्सी पर बैठता हूँ। वहां से आई हुई तारें सत्य हैं, यह कैसे मान लिया जाए? भालचन्द ने शान्त मुद्रा में किन्तु बड़ी गम्भीरता सहित कहा "तारों पर मुझे विश्वास नहीं है।"

खुदाबख्श कुछ कराहता हुआ-सा बोला "अभी मुझे कोचीन के खिलाफत मंडल के अध्यक्ष का तार भी मिला है। इस प्रश्न से सभी प्रश्नों का उत्तर मिल जाता है। कोचीन से खिलाफत के सेक्रेट्री ने लिखा है कि मलबार में मुसलमानों ने हिन्दुओं पर अत्याचार किया है कि हिन्दुओं को मुसलमान धर्म में बलपूर्वक दीक्षित किए जाने के जो समाचार प्रकाशित हो रहे हैं वे पूर्णतः निराधार हैं। प्रेक्षतः जानकारी प्राप्त करने से यह विदित हुआ है कि एक अथवा डेढ़ हिन्दुओं को बलपूर्वक मुसलमान बनाने की घटना हुई है।"

"बस-बस। इस तार ने सभी प्रश्नों का समाधान कर दिया है। मलबार के हिन्दुओं पर अत्याचारों सम्बन्धी सभी कहानियां मिथ्या हैं। एकाध हिन्दू को इस प्रकार धर्मच्युत किया गया होगा। यह बात खुदाबख्श को मिली तार से ही स्पष्ट हो जाती है। अतः शंका करने का कोई कारण नहीं है।" भालचन्द बोला—

"अब शंका का कोई कारण ही नहीं रहा, मलबार में कोई गड़बड़ नहीं हुई। मलबार में हिन्दू और मुसलमान प्रेम-सहित रह रहे हैं।" सभा में गर्जना हुई।

यहाँ मूल प्रस्ताव से मोपलों के शौर्य का अभिनन्दन करने सम्बन्धी खुदा की उस सूचना को सम्मिलित करते हुए मोपलों की दयालुता, सहनशीलता के गुण-गान करके यह बताया जा रहा था कि उनके द्वारा हिन्दू बन्धुओं पर अत्याचार किया जाना किस भांति असम्भव है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

और उसी समय वहाँ—

वहाँ भयंकर अन्धकार में अपना जबड़ा खोले सोये हुए से उस से उस भयंकर कुएं के पेट में हाड़-रक्त-माँस, शव, कटे हुए अंग-प्रत्यंगों, छिन्न-भिन्न हुए सिर, टूटे पैर आदि यह सब अन्न पचता जा रहा था। और उस अन्न के चावे जाने, दले जाने से उत्पन्न किसी रत्न के समान वह हिन्दू तरुण—वह लटका हुआ घायल मरने वालों में से किसी की लात लगने से जब सचेत हुआ तो उसे एकदम उस समय की स्मृति हो आई जब वह अचेत हुआ था। उसे लगा कि मानो उससे पूछा जा रहा है, "हिन्दू धर्म छोड़ता है कि नहीं ? मुसलमान होता है कि मरता है ?" और वह चीख उठा "जी नहीं होता, जी नहीं छोड़ता ! मैं हिन्दू हूँ ! मारो तुम कितना मारते हो। परन्तु कुछ ही समय उपरांत उसे अनुभूति हो गई कि वह कहाँ है ? उसका प्रकृति-प्रदत्त धैर्य पुनः उदित होने लगा। उसके समीप ही किसी हिन्दू का पैर लटका रहा था और उससे रक्त की धारा उसके मुख पर टपक रही थी। वह उस लटकते हुए पैर पर चढ़ गया। किन्तु तभी उसके मन में एक टीस-सी उठी कि कहीं उसके द्वारा किसी हिन्दू हुतात्मा की देह का अपमान तो नहीं हो रहा। किन्तु उसने अपने मन के इस संकोच को शान्त किया और कुएं में उगे हुए उस वृक्ष को पकड़ कर कुएं से बाहर निकलने का प्रयत्न किया। किन्तु वह डाली छूट गई और वह धड़ाम से गिर गया। इसका परिणाम यह हुआ कि कुएं में दूसरी ओर शवों का जो ढेर लगा हुआ था वह उसके ऊपर खिसक कर आ गिरा। थोड़ी-सी चूक हुई ही थी कि उसका पीठ तक का भाग शवों आदि की उस ढेरी में धँस गया। उसने उस ढेरी से निकल कर एक ओर खड़े होने का प्रयास किया ही था कि उसका पैर एक व्यक्ति के पेट पर पड़ गया और पेट फूटते ही उस शव की अंतड़ियाँ, माँस, नसें, अन्न-मल सभी कुछ निकल कर बिखर पड़ा। इससे बनी कीच में उसका पांव फँस गया था। उसे सहसा ही अत्यधिक भय प्रतीत होने लगा किन्तु उसने येन-केन प्रकारेण उस भय से अपने आप को उबारा और झटका देकर अपना पैर खींचा। उसने पास ही पड़े एक सिर विहीन धड़ को कुएं की दीवार के सहारे खड़ा किया और उस पर पांव रखकर पुनः उस वृक्ष की टहनी को पकड़ा। उसके मन में बार-बार एक ही विचार आ रहा था कि वह सिरहीन हिन्दू हुतात्मा कौन था ? रहने के लिए मरण का भी वरण करने वाले उसके समान लोग थोड़े ही हैं। और तू उस सिरविहीन हिन्दू हुतात्मा की पीठ और कन्धे पर पग रखकर बचने के लिए इतने हाथ-पैर मार रहा है, तुझे लज्जा नहीं आती ?

किन्तु सिरविहीन हुतात्माओं के कन्धों पर चढ़कर ही तो कोई राष्ट्र पतन के गर्त से अपना सिर ऊँचा करके निकल पाता है। मरण के अन्धकार से पुनर्जीवन के उदयाचल की ओर बढ़ने के लिए शीशदान देने वाले ऐसे ही हुतात्माओं के शवों की ढेरियां तो किसी राष्ट्र को खड़ी करनी पड़ती हैं।

अतः हे हिन्दू तरुण ! संकोच न कर। चढ़ इस ढेरी पर, पकड़ ले वह डाली, और आगे बढ़ा अपना हाथ तथा उस कुएं की लकड़ी को पकड़कर इस मृत्यु के मुख से बाहर निकल आ।

वह हिन्दू तरुण इसी प्रयास में लगा हुआ भी था।

और उधर उस सभा में खुदाबख्श मोपलों की दीनता और सुशील स्वभाव का वर्णन करते हुए कह रहा था—"ऐसे लोग हिन्दुओं पर भयंकर अत्याचार व उनका बलात् धर्मान्तरण कर रहे हैं इस बात पर हिन्दू बन्धुओं को विश्वास ही कैसे हो रहा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

है ? हिन्दू बन्धुग्रो, स्मरण रखो कि मोपले मुसलमान हैं। बस ! इस एक ही शब्द से इन सम्पूर्ण ग्राक्षेपों की समाप्ति हो जाती है। मुसलमानी धर्म बलात् दूसरों के धर्म को हानि पहुंचाने के पूर्णतः विरुद्ध है।"

"पूर्णतः विरुद्ध है।" लबाड़ खान बोला, "कुरान के तो एक-एक पृष्ठ में यही स्पष्ट किया गया है।"

"उदाहरण स्वरूप ग्राप मुझे इस मत की पुष्टि करने वाले किन्हीं दो पृष्ठों को बता सकते हैं क्या ? ग्रौर यह भी बताएँगे क्या कि इन वचनों के विरुद्ध कितने वचन हैं तथा मुसलमानी इतिहास में इन दोनों वचनों के स्थान पर कौन से वचनों को ग्रहण किया गया है ?" वह ग्रार्यसमाजी बीच में ही बोल उठा। यह सुनते ही कड़कखान एकदम ग्रागबबूला हो गया ग्रौर बोला, "इस ग्रार्यसमाजी को सभा से निकाल दो, ग्रन्यथा मैं इसको जान से मार दूंगा। जो भी एक बार मुसलमान बना लिया गया है, चाहे वह बलपूर्वक ही बनाया गया हो वह यदि पुनः मुसलमानी धर्म को छोड़ता है, चाहे वह स्वेच्छा से ही ऐसा करे, उसे जान से मार देना ही मुसलमानी धर्म की ग्राज्ञा है।"

"यह हरामी है, यह काफिर है" ऐसा कहते हुए ग्रनेक मुसलमान उस हिन्दू की तरफ बढ़े। ग्रध्यक्ष भालचन्द भी भयभीत हो गया। कहीं सभा ही भंग न हो जाए, इस भय से उसने उस ग्रार्यसमाजी को धक्के देकर सभा से निकाल देने का ग्रादेश दे दिया। जब उसको सभा से बाहर निकाला जा रहा था तो उसने कहा कि "हे हिन्दुग्रों, तुम मुझे धक्के मार कर क्यों निकाल रहे हो, तुम तो ग्रत्याचार न करने वाले लोग हो।"

'चुप रह ! गधा कहीं का ! श्रीयुत झकमार घोष ने क्षुब्ध होकर कहा, "हमारा ग्रत्याचार न करने का निर्णय केवल दूसरों के सम्बन्ध में है। ग्रपनों के विरुद्ध भी हम बल प्रयोग नहीं करेंगे, ग्रत्याचार न करने का यह भी ग्रर्थ होता है क्या ?"

उस ग्रार्यसमाजी को बाहर निकाल दिए जाने पर सभा में शान्ति स्थापित हो गई। स्वयं भालचन्द द्वारा प्रस्तुत यह प्रस्ताव सर्व-सम्मति से स्वीकार कर लिया गया कि मुसलमानी धर्म का प्रचार कभी भी बलपूर्वक नहीं किया गया। ग्रतः मलबार में भी बल प्रयोग नहीं हुग्रा है। मोपले शूर-वीर ग्रौर हम हिन्दुग्रों के सगे भाई हैं। उन्होंने हिन्दुग्रों के साथ किसी प्रकार का भी छल नहीं किया है। इसके विपरीत ग्रनेक मोपलों ने हिन्दुग्रों को ग्राश्रय देकर हिन्दू जनता पर उपकार किया है। जिन लोगों ने भी हिन्दुओं के बलात् धर्मान्तरण की ग्रफवाहें फैलाई हैं) वे सभी देश के शत्रु हैं। इस प्रकार का ग्राधार कहीं एक डेढ़ हिन्दू का बलात् धर्मान्तरण किया जाना है। ग्रतः मलबार में कोई चिन्ताजनक स्थिति नहीं है।"

"मलबार में हिन्दू मुसलमानों की एकता को कोई भंग नहीं कर सकता। वहाँ कोई चिन्ताजनक स्थित नहीं है।" बावले, झकमार घोष, मुढ़ाप्पा इत्यादि सभी हिन्दुग्रों ने एक स्वर से गर्जना की।

ग्रौर वहाँ —

वह हिन्दू युवक उस कुएं से बाहर निकल ग्राया था। उसके अंग-प्रत्यंग नख-शिख सने हुए, किसी के रक्त से तो किसी की मज्जाग्रों से बहते रस से। मुसलमानों द्वारा उस पर किए प्रहारों से उसके कंधे ग्रादि पर भी भयंकर घाव लगे थे ग्रौर उनसे

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रक्तस्राव हो रहा था, असह्य वेदना हो रही थी। परन्तु खुली वायु में श्वास लेकर वह तरुण अपने को कुछ हलका अनुभव कर रहा था। परन्तु घोर अन्धकार। वह गहन कूप ! वह घोर स्मृति और गहन विस्मृति ! किन्तु वह सहसा ही चौंक-सा पड़ा। उसने देखा कि पास के वृक्षों के पीछे कोई खड़ा है। फिर उसे स्पष्टतः दिखाई देने लगा कि वहाँ कोई स्त्री खड़ी है। उसने समझा कि यह कोई मोपला नारी है।

इधर श्रीरंगम देवालय के समीप से एक प्रचण्ड जयघोष सुनाई पड़ा "हर हर महादेव।" हिन्दू युवक यह विचार कर प्रसन्न हो उठा कि इतने जोरों से हर हर महादेव का जयघोष गुँजाने में समर्थ हिन्दू अभी भी विश्व में जीवित हैं। उसका रोम-रोम प्रफुल्लित हो उठा और सुध-बुध भूलकर उस प्रिय और पूज्य जयघोष को तन्मयता-सहित सुनने लगा और स्वयं भी बोल उठा "हर हर महादेव।"

उस तरुण के मुख से यह ध्वनि सुनते ही वह झाड़ी के पीछे खड़ी हुई आकृति भी चल पड़ी। उसने अपनी साड़ी के पल्ले के पीछे छिपाया दीप निकाला और उसके उजाले की रेखा उस जयध्वनि करने वाले व्यक्ति पर पड़ने लगी। वह स्त्री तत्काल उसकी ओर "दामू ! हे वीर-वर !" कहते हुए दौड़ पड़ी। आश्चर्य, आनन्द, आभार और अभिमान से उसका शरीर कंपित हो उठा। उसके हाथ से जलता दीप गिर पड़ा। उस दीप के गिरने के साथ ही उसके धैर्य का बाँध भी टूट गया। "दामू जानते हो कि नहीं ? वीरवर मैं हूँ तुम्हारे द्वारा मुक्त की गई लक्ष्मी।" एक साँस में ही यह कहती हुई वह युवती दामू से लिपट गई। उसकी छाती से लिपट कर वह युवती बोली "मुझे संभाल दामू, अब तक इस श्मशान में भी मुझे भय नहीं लग रहा था, किन्तु मैं अब क्षण-भर भी खड़ी नहीं रह सकती।"

यह चिन्तामणि शास्त्री की वही कन्या थी जिसे शास्त्री के शान्ति-कुटीर में सोए हुए सुमति समझकर पकड़ा गया था। और उसके बाद उसने कितने सन्ताप, छल, भीति, बलात्कार, प्रहार और आशा तथा निराशा सहन की ! उसे भी वन्दी बनाना पड़ा था, किन्तु विजयी गोरखों ने सभी बन्दी बनाई गई हिन्दू कन्याओं को स्वतंत्र कर दिया था। यह युवती, लक्ष्मी भी उन्हीं के साथ मुक्त हुई थी। इतने कष्टों और दुःखों से लक्ष्मी टूट-सी गई थी।

परन्तु अब उसके जीवन का वन्धन भी टूटने ही वाला था, जब उसकी दामू से भेंट हुई।

इतने दिनों के उपरान्त उसे कोई अपना मिला था। यह पगली स्त्री जाति ! संकटकाल में झेले सभी दुखों को वह एकदम भूल गई। दुखों के आघात से उसकी जो जीवन-डोरी टूट नहीं पाई थी वह सुख का यह अतिरेक सहन न कर पाई। और दामू मुझे संभाल ले, कहती-कहती वह उस युवक के बाहुपाश में इस प्रकार आबद्ध हो गई कि फिर न हिली। उसने इतना ही कहा "दामू ! मेरा दामू ! मेरा···" और लजा गई। परन्तु अधूरे वाक्यों का उच्चारण यही तो प्रेम का पुरातन अभ्यास है ! दामू ने भी उसे सान्त्वना दी—"लक्ष्मीबाई ! भयभीत न हो, मैं तुम्हारे साथ हूँ।"

किन्तु प्रेमोन्मत्त इस सुन्दर कन्या का यह प्रथम बाहुपाश में आबद्ध होना, उसके लिए जीवन का अन्तिम बन्धन सिद्ध हुआ। लक्ष्मी बड़ी निश्चिन्तता-सहित उस युवक की गोदी में सिर रखकर सो गई। युवक भी सोच रहा था कि गोरखों ने पुनः ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी है कि कुट्टम ग्राम में हिन्दू निश्चिन्तता-सहित सो सकते हैं। उसने समझा कि युवती को नींद आ गई है। कुछ समय पश्चात युवक को भी नींद आ गई।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रातःकाल हुआ। सुशीतल सुगन्धित समीरण बह चला। पक्षियों की चहचहाट चारों ओर गूंज उठी। पहले एक चिड़िया उन दोनों के ऊपर से उड़ी और उसने कई चक्कर लगाए और फिर लक्ष्मी की बिखरी केशराशि में से एक केश खींच कर वह चिड़िया उड़ गई। परन्तु वह युवती जागी नहीं, अपितु उस युवक के गले में हाथ डाले उसी भांति निश्चिन्त पड़ी रही। युवक के घावों से होते हुए रक्तस्राव से वह भी पूर्णतः भीग गई थी। कुछ ही समय पश्चात एक छोटा-सा हिन्दू बालक एक भव्य आकृति वाले संन्यासी को साथ लिए वहाँ आ पहुँचा और बोला, "यही है वह कुआं महाराज।" संन्यासी भी स्तम्भित-सा होकर खड़ा रहा।

"परन्तु यह कौन है ?" वह बालक दामू और उस युवती को वहाँ सोए हुए और रक्त से नहाए हुए देखकर बोला, "ओहो, यह तो दामू थिय्या है ! कम्बु का सहायक और वीर शिष्य, और यह ? यह है चिन्तामणी शास्त्री की कन्या—लक्ष्मी, हाँ वही तो है यह !"

संन्यासी ने भी बड़ी कुरूप दृष्टि से यह यह दृश्य देखा। उस युवक और युवती के संबन्ध में में शंकित होकर उन्हें संन्यासी ने हिलाया। परन्तु वह कन्या तो निश्चिन्त पड़ी थी। किन्तु वह तरुण एकदम उचक पड़ा। उसे लगा कि लक्ष्मी को किसी शत्रु ने हाथ लगाया है। परन्तु उसने देखा कि उसके सिर पर एक भव्य आकृति वाले परम दयालु संन्यासी ने हाथ रखा हुआ है और वह उसे आशीर्वाद दे रहा है। उसे यह संन्यासी अभय दान देने वाले देवता के समान प्रतीत हुआ।

दामू झटपट उठा, खड़ा हुआ और भक्ति-भावना-सहित कुछ दूर पीछे हटा और उस संन्यासी को दण्डवत किया। अभी संन्यासी पुनः उसके मस्तक पर प्रेम-सहित हाथ रखने ही वाला था कि युवक बोल उठा "भगवान मैं थिय्या हूँ। आपको कलंक लग जाएगा।"

"पगले ! तेरी वीरता की कथा मैंने लोगों के मुख से सुनी है। मुझे बताया गया था कि तेरी हत्या कर दी गई है। तब तेरे तथा तेरे गुरु कम्बु सहित हिन्दू धर्म के सम्मान की वेदी पर, जिस-जिसने अपनी देह सानन्द समर्पित की है, उन्हीं हुतात्माओं के बध किये शरीर के दर्शन करने हेतु मैं यहाँ आया था। और मुझे वहाँ उन हिन्दू हुतात्माओं के समान ही तेरा प्रत्यक्ष दर्शन मिला है जो थिय्या हिन्दू धर्म के लिए अपनी आत्मा का हवन करता है वह तो ब्राह्मणों से भी श्रेष्ठ ब्राह्मण है। जो महान हिन्दू धर्म के लिए अपना शीश भेंट चढ़ाता है वह क्षत्रियों से भी श्रेष्ठ क्षत्रिय है। चल, सर्वप्रथम इस सुन्दर ब्राह्मण कन्या के शव को इस कुएं में डाल दें। रो मत, हजारों वृद्ध एवं तरुण, बालक और बालिकाएं स्त्रियां तथा पुरुष हिन्दू धर्म के लिए मोपलों की तलवारों का शिकार बन रहे हैं। जब तू किसी व्यक्ति-विशेष के लिए रोने लगा है तो यह समझ कि तेरा अहंकार तेरे जाति-प्रेम के मार्ग में रोड़ा बन रहा है। तुम्हारा प्रत्येक अश्रु हिन्दू जाति के लिए गलना चाहिए। किसी व्यक्ति-विशेष के लिए अपने नेत्रों से अश्रु प्रवाहित करते रहने का अवसर अब कहाँ है।

उन दोनों ने उस निरपराध किन्तु पीड़ाओं के भार से क्लान्त-श्रान्त हुई युवती के शव को उस कुएँ में फेंक दिया। वह संन्यासी तथा दामू बहुत देर तक उस कुएं के समीप खड़े रहे। बीच-बीच में संन्यासी कुछ पूछता जाता था और दामू उसे उत्तर देता जाता था। उस कुएँ के पास बड़ी दूर-दूर तक अनेकों हिन्दुओं की कटी हुई शिखाएँ; और बलात् की गई सुन्नत के कारण कंटक हुआ मांस तथा चर्म और

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रक्त बिखरा हुआ था। और उस कुएँ में हिन्दुओं के अनेक शव रक्त में सराबोर पड़े थे। ऐसा लग रहा था कि मानो इस कुएँ के निर्माण में मलबार के मुसलमान कारीगरों ने हिन्दुओं के रक्त-मांस के चुने से कटे हाथों, पाँवों, सिरों, बोटियों और अस्थियों व धड़ों तथा शवों से इसका निर्माण किया हो। संन्यासी उस दृश्य को बारम्बार देखकर बोला—"आगरा में मुसलमानों ने प्रेम का ताजमहल बनाया है, परन्तु मुसलमान कारीगरों ने इस कुएँ के समान द्वेष के ताजमहलों का निर्माण भी पद-पद पर समग्र हिन्दुस्तान में किया है। ईश्वर क्षमा कर और सद्बुद्धि प्रदान कर।"

"सुबुद्धि दे" सहसा ही एक ध्वनि उठी। संन्यासी ने पीछे मुड़कर देखा तो एक मुसलमान वृद्ध लाठी टेकता हुआ अपनी ओर आते हुए दिखाई दिया। वह मुसलमान बोला—"महाराज चौंकिए नहीं, मैं मोपला मुसलमान हूँ।"

"अच्छा तो ऐसा है ." संन्यासी बोला—"यदि तू अन्य मोपला मुसलमानों के समीप मुझ हिन्दू की हत्या करने आया हूँ, तब भी मैं चौंकूंगा नहीं। इस कुएँ को देख। चौदह-चौदह वर्ष की अल्हड़ हिन्दू कुमारियों ने हिन्दू धर्म की रक्षार्थ अपने प्राण समर्पित किए हैं। उन्होंने ही कोई संकोच नहीं किया, मैं तो संन्यासी हूँ। संन्यासी के प्राण तो पहले ही आधे जा चुके होते हैं। और यदि तू मोपला होकर भी हिन्दुओं से द्वेष नहीं करता और उनके द्वारा किए भयंकर अन्याय और अत्याचार पर तुझे वस्तुतः पश्चात्ताप हो रहा है तो भी मैं चौंकूंगा नहीं। कारण यह है कि मोपला, क्या मुसलमान, क्या ईसाई! सम्पूर्ण जाति की जाति ही दुष्ट होती है ऐसा तो मैं मानता नहीं हूँ। वे भी मनुष्य ही हैं। उनमें भी साधु, सत्त्वशील तथा दयामय नर-नारी हैं। मैं जब किसी जाति के लोगों द्वारा किए गए कृत्यों का विरोध करता हूँ तो उन कृत्यों का विरोध करता हूँ उस जाति अथवा धर्म का नहीं।"

आँखों में अश्रु भरकर वह मोपला बोला—"महाराज, हिन्दू लोगों में साधु-सन्तों की मैंने पर्याप्त संगति की है। अतः मुझे यह विदित है कि न्याय, सत्य व दैवी विचारों को जितना हिन्दुओं ने मान्यता दी है, उतने दुर्दैव से हम मुसलमानों में अभी तक नहीं पनप पाए हैं। कुरान सरीखे ग्रन्थ का उसके लाखों अनुयायियों द्वारा बड़ा ही भयंकर अर्थ किया जाता है। वह अर्थ मुझे तथा मेरे पंथ के अनुयायियों को पसन्द नहीं है। अनेक मुसलमान हमें मुसलमान मानते हुए भी हमारे प्रति भारी द्वेष-भावना रखते हैं। क्योंकि हम कुरान के वचनों का अर्थ समझ और परिस्थितियों के संदर्भ में लगाते हैं। जो वचन त्रिकाल में सत्य हैं तथा मानव-जाति के हितों के अनुकूल प्रतीत होते हैं उन्हें हम त्रिकाल बाधित मानते हैं अतः हमारे हिन्दू बन्धुओं द्वारा मुसलमानों ने जो अत्याचार किए हैं, उनका भी हमारा पंथ तीव्र निषेध करता है। हम तो यह प्रार्थना करते हैं कि "हे रहीम, हे राम! मुसलमानों को सद्बुद्धि दे। हिन्दुओं को सद्बुद्धि दे कि जिससे मनुष्य देव के नाम पर और देवताओं के नाम पर मनुष्यों की बलि न लें। जिस कुरान ने अरबों को अपनी कन्याओं को न मारने की शिक्षा दी है वही कुरान अल्ला के नाम पर दूसरों की हत्या की शिक्षा भला कैसे दे सकती है? और यदि वह ऐसी शिक्षा देता है तो फिर वह ईश्वरीय पुस्तक नहीं है।"

"ईश्वरीय पुस्तक?" संन्यासी बोला—"इस ईश्वरीय पुस्तक की मनुष्य ने शैतानी टीकाएँ करके मनुष्य पर अत्याचार किए हैं। यदि मनुष्य जाति के लिए जो शिक्षाएँ प्रत्यक्षतः उपकारक हैं उनका अनुकरण किया जाए और जो शिक्षाएँ राक्षसी व

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अहितकारी प्रतीत होती हैं वे केवल किसी पुस्तक में उल्लिखित हैं, केवल इसीलिए मान्य हैं, यदि मनुष्य इस दृष्टिकोण का परित्याग कर दे तो मानव का मानव पर कितना उपकार होगा ? ईश्वरीय पुस्तकों के नाम पर मानव ने इतने अधिक अनर्थ किए हैं कि उनकी अपेक्षा मनुष्य-कृत पुस्तकें ही अधिक आदरणीय व नैतिक प्रतीत होती हैं। परन्तु यह स्थिति तो जब आएगी तब आएगी। तब तक तो अत्याचार और बलात्कार का मुकाबला करने वाला कोई भी व्यक्ति ही हमारे लिए वन्दनीय है। यह कुआँ अनेक सुकोमल सुकुमारियों और नवयौवन में मदमाते तरुणों के शवों से भरा हुआ है ! उनसे यही प्रश्न किया जाता है कि तुम मुसलमान होते हो कि मरते हो ? बालिकाओं ने अपनी माताओं और माताओं ने बालकों के मोह को तज कर तथा तरुणों ने मदमाते यौवन का मोह छोड़कर हाँफते-हाँफते काल का वरण किया है। उनके खण्ड-खण्ड कर दिए गए फिर भी उन्होंने सी तक न की। उनका यह धर्मवीरत्व धन्य है। अत्याचारों की धार भी जिस ढाल से टकराकर कुँठित हो गई हुतात्माओं की ढाल हे हिन्दू जाति, आज भी तेरे हाथों में है, अतः भय न कर।

एक बाबा बन्दा बहादुर ने बलिदान दिया, शम्भाजी शहीद हो गए किन्तु आज भी उनके बलिदानों के कारण हम उनका नाम सम्मानसहित लेते हैं। किन्तु जिनकी शहादत की पावनता उनसे अणुमात्र भी कम नहीं, परन्तु जिनके नामों का पता लगाया जाना असंभव है, ऐसे सैकड़ों आबालवृद्ध नर-नारी, ब्राह्मण और चाण्डालों, हिन्दू धर्मवीरों ने जो अत्युग्र बलिदान देकर इस कुंएँ को पाटा है, उन्हीं के नाम पर इस कुँए को नाम देता हूँ। हिन्दू जाति की अवनत स्थिति में भी प्रकाशमान उनका दिव्य बलिदान और उनकी शक्ति का नाम ही यह कुआं। इनके दिव्य बलिदान और शक्ति के नाम पर यह हिन्दू जाति पुनरादि समर्थ, सुन्दर और देवप्रिय होगी ऐसी जो आशा हमारे हृदय का स्पन्दन कर रही है उस आशा का नाम ही यह कूप।"

संन्यासी ने भक्ति-भावना से परिपूरित होकर इस कुएँ की तीन प्रदक्षिणा की। उनके पीछे-पीछे ही वह मुसलमान वृद्ध और दामू भी भक्ति-भावना से चल रहे थे। तदुपरान्त इन तीनों ने इस कुएँ को साष्टांग दण्डवत किया। संन्यासी ने अपनी भुजा को ऊँचा उठाते हुए कहा, "दामू मैं मर जाऊँगा, किन्तु तू उस सौभाग्यशाली दिवस को देखने के लिए जीवित रहेगा। तू मेरा यह कथन स्मरण रखना कि जब हिन्दू जाति एक स्वतन्त्र व सामर्थ्यवान राष्ट्र के रूप में खड़ी हो जाए तो वह इस कुएँ को कदापि विस्मृत न करे। यदि एक बार चन्द्रगुप्त, शिवाजी तथा गुरु गोविंद और भाऊ द्वारा जिन रणांगणों में विजय प्राप्त की गई वहाँ विजय-स्तम्भ न भी बनाए गए तो क्षण भर चलेगा ? परन्तु इस कूप के रक्तांगण में जयस्तम्भ नहीं तो यशस्तम्भ का निर्माण किये जाने का कार्य कदापि न भुलाया जाए। जाति के जीवन का आधार जयस्तम्भ की अपेक्षा उसके यशस्तम्भों की दृढ़ता पर ही अधिक अवलम्बित होता है।"

"परन्तु महाराज ? जिनके भाग्य में उस सौभाग्यशाली दिन का दर्शन करना है वही करें। मैं तो इस कूप में पुनः उतरूँगा। मेरे साथ-ही-साथ जिन लोगों ने धर्मयुद्ध में भाग लिया और जो मारे गए, उनके शवों पर पग रखकर, अपना जीवन बचाने के लिए इस कूप से बाहर आकर मैंने जो कृतघ्नता दिखाई है उसको अपने-आपको इसमें पुनः प्रविष्ट कराकर मैं भस्म क्यों न कर दूं।"

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

"छी:-छी: ! पगला कहीं का। ध्येय की प्राप्ति के लिए मरना जितना पावन है उसकी अपेक्षा ध्येय की सफलता के लिए जीवित रहना और भी अधिक पावन है। यदि तेरे सरीखे युवक जाति के लिए अपना जीवन लगा दें तो फिर धर्म के लिए मरने की स्थिति ही कभी उत्पन्न नहीं होगी ! धर्म के लिए सजग रहना यही मुख्य कर्त्तव्य है ! उससे पवित्र होने पर ही धर्म पर संकट के घन फहरा उठते हैं और उस उपेक्षा का प्रायश्चित्त करने के लिए धर्महेतु जीवन समर्पित करने पड़ते हैं। परोपकारार्थ मरना तो आपद्धर्म है। अतः तू जी और इस प्रकार जी कि तेरी जाति भी एक जीवित जाति के रूप में खड़ी रहे ! इन हुतात्माओं ने महान् कार्य किया है। किन्तु जिस ध्येय के लिए ये जीवन दे चुके हैं उसको प्राप्त करते ही हुतात्माओं को अधिक सन्तोष प्राप्त होगा। इस कार्य के लिए तुझे एक महत्त्वपूर्ण कार्य करना पड़ेगा।"

"महाराज वह महत्त्वपूर्ण कार्य क्या है ?"

"शुद्धि !" संन्यासी बोला, "चल हुतात्माओं के पावन रक्त से पवित्र हुए इस कुएँ के समक्ष प्रतिज्ञा कर कि जिन लोगों को मुसलमानों ने बलात् मुसलमान बनाया है उन सब हिन्दुओं की शुद्धि कर, मैं उन्हें पुनः हिन्दू धर्म में दीक्षित करूँगा ! जिन्होंने हिन्दुत्व के लिए प्राण दिए हैं उन्होंने हिन्दुत्व की रक्षा की है, और तुम जीवित हो, अब तुम्हें शुद्धि द्वारा हिन्दू धर्म की रक्षा करनी होगी। शुद्धि का प्रचार करो और शत्रु के दुष्ट इरादों को विफल करो। चलो कार्य में प्रवृत्त हो जाओ।"

\+ \+ \+

वे चल पड़े। संन्यासी और दामोदर दोनों ही ग्राम-ग्राम और झोंपड़ी-झोंपड़ी में पहुंचे और मोपलों द्वारा बलपूर्वक धर्मच्युत किए गए हिन्दुओं को शुद्ध करने लगे। यह कार्य बड़ी तीव्र गति से चला। मोपलों के विद्रोह के प्रवाह का शमन हो गया। उनके नेतागण भी मारे गए और वे दाँतों तले तृण दबाकर अनुनय-विनय कर रहे थे। किन्तु इस पर भी संन्यासी और दामोदर द्वारा किए जा रहे शुद्धि के कार्य से क्षुब्ध होकर मोपलों में से ही कुछ व्यक्तियों ने उनकी हत्या का षड्यन्त्र रचने में कोई कमी नहीं की।

एक दिन तीसरे पहर के लगभग एक झोंपड़ी के द्वार पर एक तरुण कन्या सुस्वर में कोई गीत गुनगुना रही थी। उस स्वर को सुनकर उस मार्ग से जाने वाला एक संन्यासी सहसा ही चौंक पड़ा और ठहर गया। उस तरुणी के गीत की पंक्तियों में उसे गोविन्द नाम अस्पष्ट-सा सुनाई पड़ा। वह भी मार्ग छोड़कर धीरे-धीरे उस झोंपड़ी के समीप पहुंच कर एक झाड़ी के पीछे छिपकर खड़ा हो गया। वह तरुणी भी अपने गीत के स्वर को धीरे-धीरे ऊँचा करती जा रही थी। और अब संन्यासी को स्पष्टतः उसके सुमधुर कंठ से यह गीत मुखरित होता सुनाई पड़ने लगा—
गोविन्द ! सुखकंदा ! मन्मन घे तव छन्दा।

संन्यासी सामने आ गया। उसे देखते ही वह तरुणी चौंक पड़ी। संन्यासी बोल उठा, "लड़की ! यह झोंपड़ी किसकी है ?" "एक मोपले की है।" "और तू यहाँ कैसे आ गई ?" परन्तु इन प्रश्नों के साथ-ही-साथ उस लड़की का चेहरा उतर गया तथा उसके नेत्रों से अश्रुकण छलक पड़े। किन्तु साथ ही आशा और उत्कंठा भी उसके मुखमण्डल पर स्पष्टतः उभर आई थी।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उसने मोपलों के मुख से सुना था कि कोई हिन्दू संन्यासी हिन्दुओं को शुद्ध कर उन्हें पुनः हिन्दू धर्म में वापस लेने का कार्य कर रहा है। मोपले उसे क्रोध में शैतान संन्यासी के नाम से ही पुकारते थे।

उस तरुणी का हृदय सहसा ही काँप उठा। कहीं यह वही संन्यासी तो नहीं है। उसने केवल रोना आरम्भ कर दिया।

'रो नहीं !" संन्यासी बोला, "लड़की, तेरे शरीर पर मोपला-स्त्रियों की जाखट है, परन्तु तू यह गोविन्द का गीत गा रही है। कहीं तू पहले हिन्दू तो नहीं थी ?"

युवती ने कुछ साहस करते हुए कहा, "भगवान्, भक्तों की परीक्षा गोविन्द जाखट से नहीं हृदय से करते हैं। मुझे मेरे माता-पिता ने यही सिखाया है। मैं हिन्दू थी, आपकी यह बात सत्य है। परन्तु मैं अभी भी हिन्दू ही हूँ। मेरे शरीर पर यह मुसलमानी जाखट चढ़ा दी गई मन पर नहीं। क्षमा कीजिए, मैंने सुना है कि धर्म-भ्रष्ट किए गए हिन्दू पुनः शुद्ध होकर हिन्दूधर्म व समाज में वापस आ सकते हैं। यह सत्य है क्या ?"

संन्यासी बोला, "यह सत्य है ! बलात्कार अथवा मूर्खतावश जो हिन्दू धर्मच्युत हुए हैं, वे सभी प्रायश्चित करके पुनः हिन्दू हो सकते हैं।"

"महाराज ! परन्तु मैं तो एक मसकुनी हूँ, नीच जाति की एक कन्या। फिर बलात् मुझे एक मुसलमान ने यहाँ अपनी पत्नी बनाकर रखा हुआ है। अभी भी मैं जीवित हूँ, क्या मैं भी शुद्ध हो सकती हूँ ?"

"हाँ, क्यों नहीं। तेरा चित्त जिस क्षण शुद्ध हो गया उसी समय वह प्रायश्चित्त हो गया। तू जीवित है इसमें सद्भाग्य मानता हूँ। यदि पतित होने वाला प्रत्येक व्यक्ति आत्महत्या करने लगेगा तो हिन्दू जाति स्वतः ही समाप्त हो जाएगी ! यदि ऐसा ही किया जाने लगा तो मोपलों को तुम्हें बलात् धर्मान्तरित करने का भी कष्ट नहीं उठाना होगा। यदि धर्म के प्रति हृदय से आस्था समाप्त न हो तो प्रत्येक बात क्षम्य है और जो कुछ हुआ है उसकी तुम्हारे द्वारा किए गए अपराध के रूप में गणना नहीं की जा सकती। ध्येय के बन्दरगाह तक पहुंचने के लिए अनेक बार नाविक को सामने से बहती वायु को चीर बढ़ने के स्थान पर मार्ग बदल कर भी चलना पड़ता है। तुम तो केवल यह बताओ कि तुम पुनः हिन्दू होना चाहती हो। यदि चाहो तो पुनः हिन्दू हो सकती हो।"

अप्रत्याशित रूप से यदि कोई शुभसमाचार मिलने पर जैसे मनुष्य क्षण-भर विश्वास ही नहीं कर पाता उसी प्रकार क्षण-भर अवाक् रहकर वह युवती बोली, "ऐसा है तो महाराज, क्या सचमुच ही में हिन्दू हो सकती हूँ। आपतुरंत ऐसा कीजिए और मुझे अभी ले चलिए। हिन्दू धर्म से च्युत किए गए हिन्दू यदि पुनः अपने धर्म में वापस जाते हैं तो मोपले उनकी हत्या कर देते हैं। अतः जल्दी चलिए। क्या मैं भी आपके साथ चलूँ ?"

"अवश्य, परन्तु तुम मुसलमानी पहनावा मत पहने रहो। यह जाखट उतार दो। तुम उस राक्षस से किंचित मात्र भी भयभीत न हो। मेरे साथी यहाँ समीप में ही हैं। ये बटन खोल दो, और निकाल दो इस जाखट को।"

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

यह अकल्पित मुक्ति-राक्षसों की बंदीशाला से यह अकल्पित मुक्ति—एक क्षण पूर्व तक तो इस मुक्ति की कहीं गंध भी न आ पा रही थी। वह युवती बटन खोलने लगी। किन्तु मैं पुन: हिन्दू होने वाली हूँ इस प्रिय कल्पना से उसके नारी-स्वभाव के अनुसार मृदुल ज्ञान-तंतु पुन: थर-थर कम्पित हो उठे और बटन न खुल पाए।

हिन्दू जाति के मातृपक्ष में वापस लौटने के मार्ग में एक मोपलों की जाखट-रूपी फाटक आड़े आ गया था और उस फाटक पर लगी साँकल शीघ्र ही नहीं खुल सकी !

परन्तु इसमें हो रहा विलम्ब भी वह सहन न कर पाई। जो बटन खुल नहीं पाये थे, उसने उन्हें तड़-तड़ तोड़ दिया और वह जाखट उतार कर फेंक दी ! जिस प्रकार पिंजरे में बन्द कोई पक्षी पिंजरे से मुक्त होते हुए पंख फड़फड़ाकर उड़ पड़ता है, और किसी वृक्ष पर जाकर आश्रय ले लेता है उसी प्रकार वह भी झट से आगे बढ़ी और उसने उस संन्यासी के बाहुपाश में आश्रय ले लिया।

संन्यासी चल पड़ा। उस कन्या सहित अभी वह कुछ ही दूर चल पाया था कि उसके साथी भी उससे आ मिले।

"यह कौन है ?" अरे मालती ! दामोदर आश्चर्यचकित होकर बोला। "ऐसा है तो हे भगवन् ! ऐसे जितने भी हिन्दू जिन्हें हम जानते थे और जिन्हें दुष्टों ने हिन्दू धर्म से पतित किया था, कितनी आनन्ददायक है यह बात।

संन्यासी बोला, "और जिन्हें मैं पहचानता था वे सब भी। अभी छः मास भी नहीं हुए होंगे उस मौलवी कुरमला ने खड़े होकर सगर्व गर्जना करते हुए कहा था कि 'आज हिन्दू धर्म मर गया है। इस खिलाफती राज्य में जितने भी हिन्दू थे, वे सभी मुसलमान बना लिए गए हैं। आज हम ऐसा कह सकते हैं कि मलबार में तो तुम्हारे खिलाफत राज्य का नाम-निशान तक भी नहीं रह गया है। धर्मभ्रष्ट किए गए सभी हिन्दू पुन: अपने धर्म में आ गए हैं और तेरे प्रयास विफल हो गए हैं।

"स्वामिन ! शकों और हूणों की तलवारों से लगे आघात जिस प्रकार समूल भर दिए गए थे उसी प्रकार आपकी कृपा से इस प्रहार को भी पूर्णत: विफल कर दिया गया है।"

"यह ठीक ही हुआ।" संन्यासी गम्भीरता-सहित बोला, "अपने किए गए आघातों को मिटा देना यह हिन्दू जाति की जीवन-शक्ति की गौरवपूर्ण विजय है इसमें तो कोई शंका ही नहीं। किन्तु अब इस जीवन-शक्ति से ऐसी क्रिया-शक्ति का निर्माण किया जाना अभीष्ट है कि किसी का हिन्दू जाति पर पहल करने का साहस ही न हो। घावों को भरकर उनके चिह्न मिटा देने की अपेक्षा अब हिन्दू जाति को अपने आप में ऐसा सामर्थ्य और चैतन्य उत्पन्न करना होगा कि अब किसी को इस जाति पर प्रहार करने का साहस ही न हो पाए और किसी को ऐसा करने का अवसर ही न मिल पाए। वह विजय इस विजय की अपेक्षा अधिक गौरवपूर्ण होगी। औरंगजेब का पराभव कर मुगल-साम्राज्य को धूलि धूसरित कर दिया गया यह तो विजय है ही परन्तु यदि बाबर अथवा महमूद गज़नवी और कासिम को। सिन्धु नदी को पार करने का प्रयत्न करते हुए ही उन्हें डुबाकर नष्ट कर दिया जाता तो वह विजय, इसकी विजय की अपेक्षा परिपूर्ण निरपवाद विजय सिद्ध होती। अब आगामी पीढ़ी को, जिसके तुम प्रतिनिधि हो ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि हिन्दूजाति का संगठित बल-

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रूपी हिमालय सगर्व यह चुनौती दे सके कि किस माता ने ऐसा पूत जना है जो मुझ पर अन्याय सहित आघात करने का धौंसा खाया है ?"

"इस प्रकार की विजय प्राप्त करने का कार्य, दामोदर तुम्हें, मालती और तुम्हारी पीढ़ी को ही करना है। ऐसा कहते हुए संन्यासी ने दामोदर और मालती के हाथों को एक-दूसरे से मिला दिया और गम्भीर स्वर में बोला, "हे युवक ! हे युवती यह तुम्हारा पाणिग्रहण तुम्हारे लिए तुम्हारी हिन्दू जाति के लिए सुखद एवम् शुभ हो।"

॥ समाप्त ॥

मँगाइए और बाँटिए

१, सत्यार्थ प्रकाश प्रचार संस्करण — सजिल्द मूल्य ३)
२२५) सैकड़ा

२. सत्यार्थ-प्रकाश (उपहार संस्करण) — मूल्य ४)
कपड़े की पूरी जिल्द : बढ़िया कागज ३२५) सैकड़ा

३. ऋषि जीवन २५० पृष्ठ—४० चित्र
मूल्य सजिल्द १५०) सैकड़ा। अजिल्द १००) सैकड़ा

आज ही आदेश भेजिए

आर्य समाज शताब्दी के उपलक्ष में

एक लाख सत्यार्थप्रकाश बांटने हैं

पांच लाख "ऋषि जीवन"—और ऋषि दयानन्द का संदेश और वेद भाष्य घर-घर पहुंचाना है

इस पवित्र कार्य में सहयोग के लिए हम उन्हें पुकारते हैं—जो "ऋषि दयानन्द की जय" चाहते हों

दयानन्द के वीर सैनिक उठें और घर-घर में सत्यार्थ-प्रकाश-ऋषि जीवन–वेद भाष्य पहुँचाएं

प्रभु के आशीर्वाद

व्यवस्थापक

जन-ज्ञान-प्रकाशन

१९९७ हरध्यान सिंह मार्ग नई दिल्ली–५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

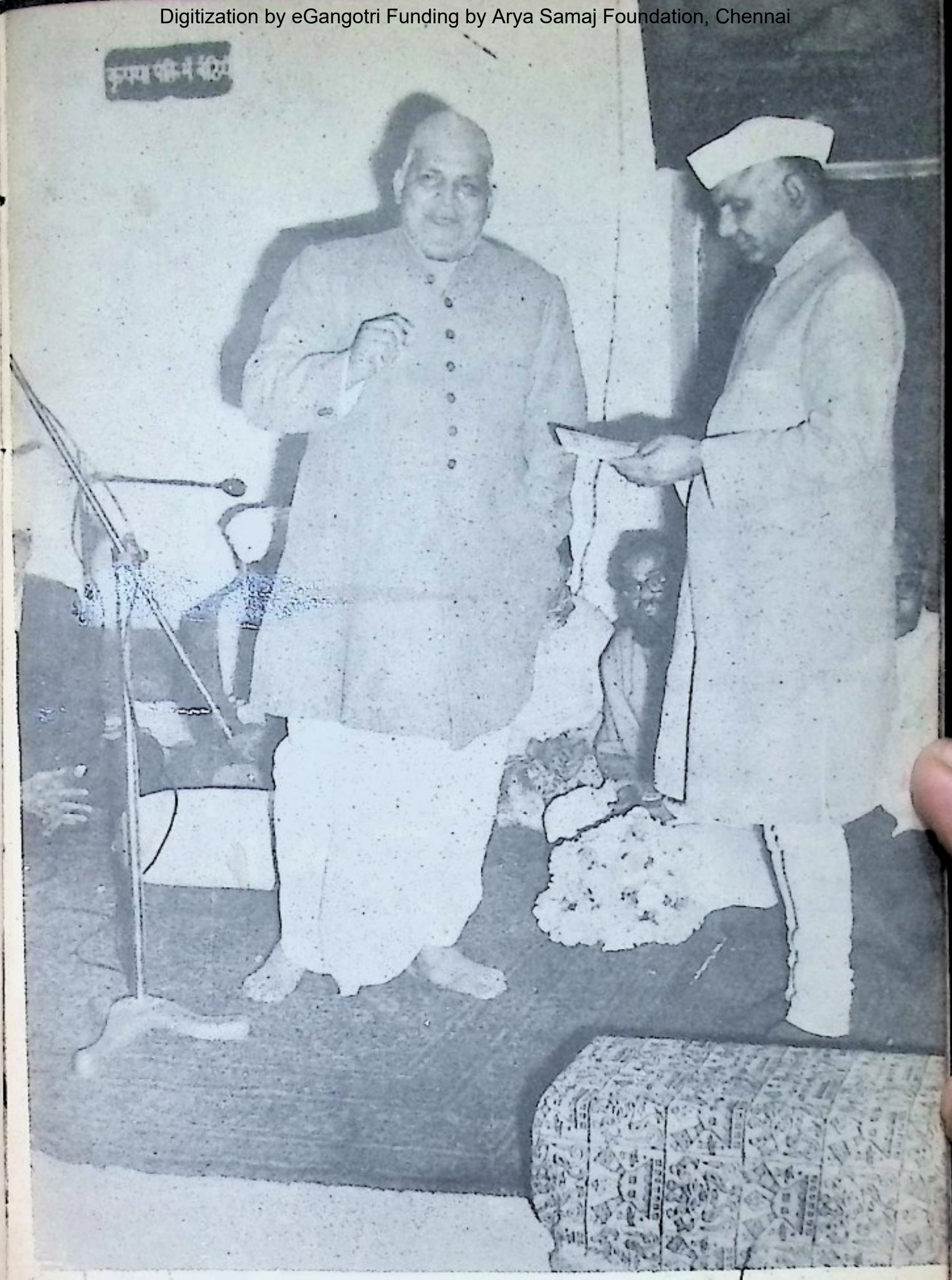

अंग्रेजी जनज्ञान (मासिक) की प्रथम प्रति दयानन्द संस्थान के अध्यक्ष प्रो० शेरसिंह (राज्य मंत्री कृषि विभाग भारत सरकार) को भेंट कर रहे हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

"दयानन्द संस्थान" की ओरसे संस्थान के प्रमुख रा० सा० चौ० प्रतापसिंह जी प्रो० शेरसिंह का स्वागत कर रहे हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

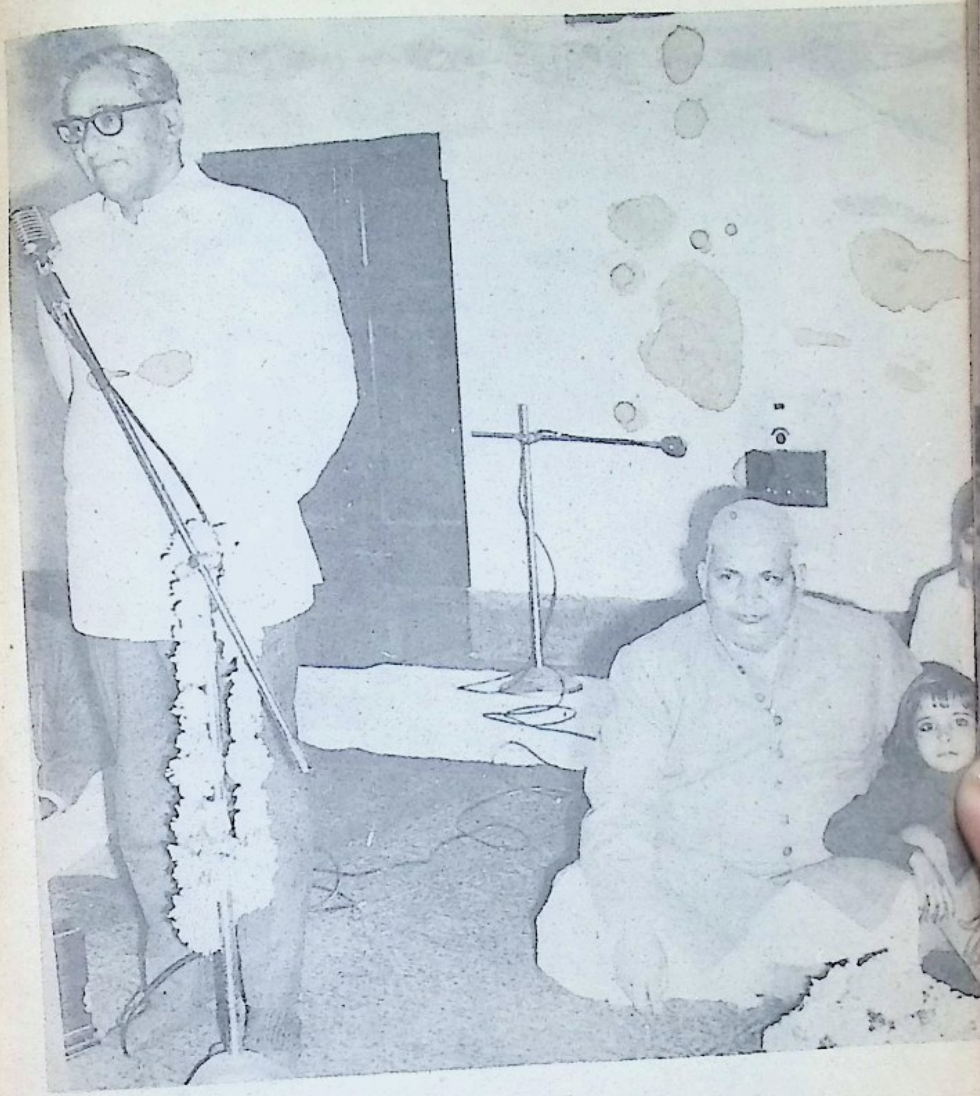

समारोह के अध्यक्ष श्री के० नरेन्द्र, सम्पादक वीर अर्जुन व प्रताप नई दिल्ली अध्यक्ष पद से भाषण दे रहे हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

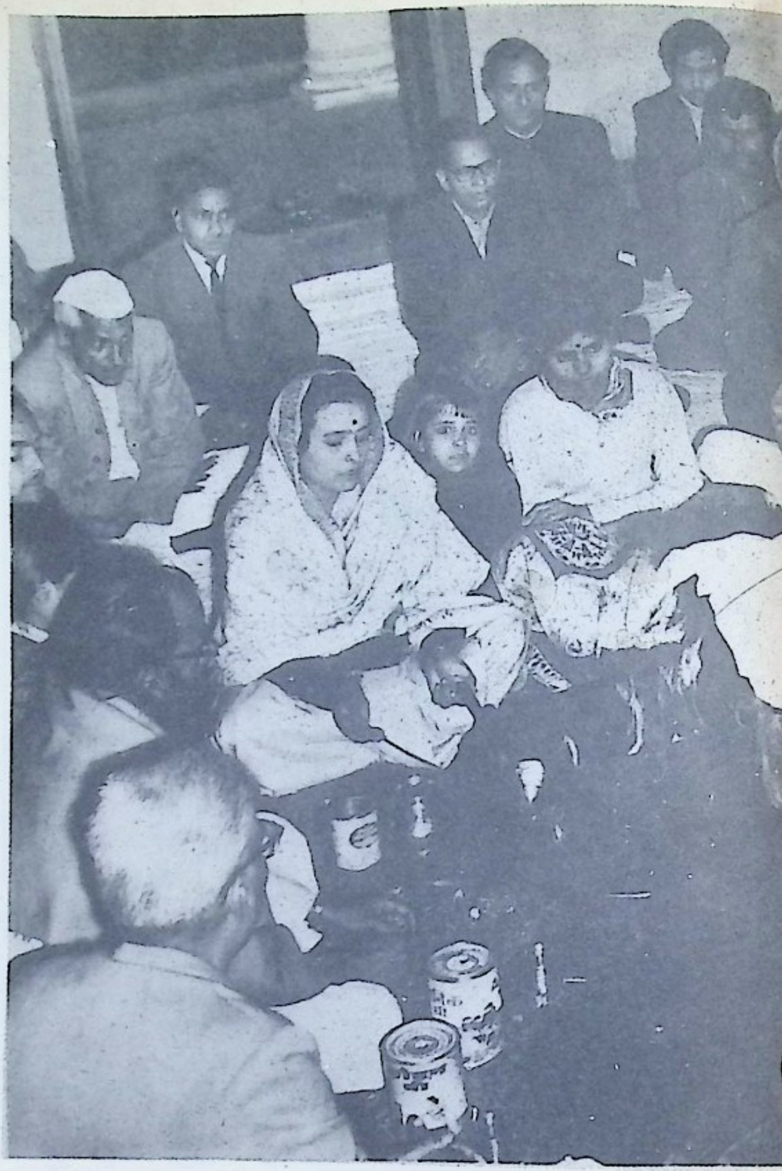

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

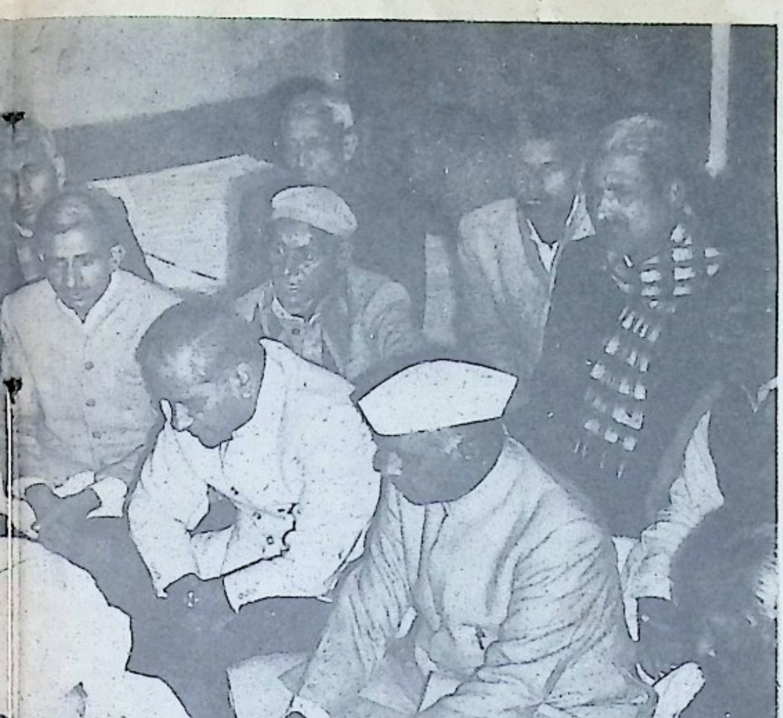

अंग्रेजी जन-ज्ञान (मासिक) का शुभारम्भ यज्ञ से हुवा। यज्ञ वेदी पर श्री० के० नरेन्द्र, प्रो० शेरसिंह, आचार्य जगदीश विद्यार्थी, पण्डिता राकेशरानी, रा० सा० चौ० प्रतापसिंह प्रभृति आर्यजन विराजमान हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

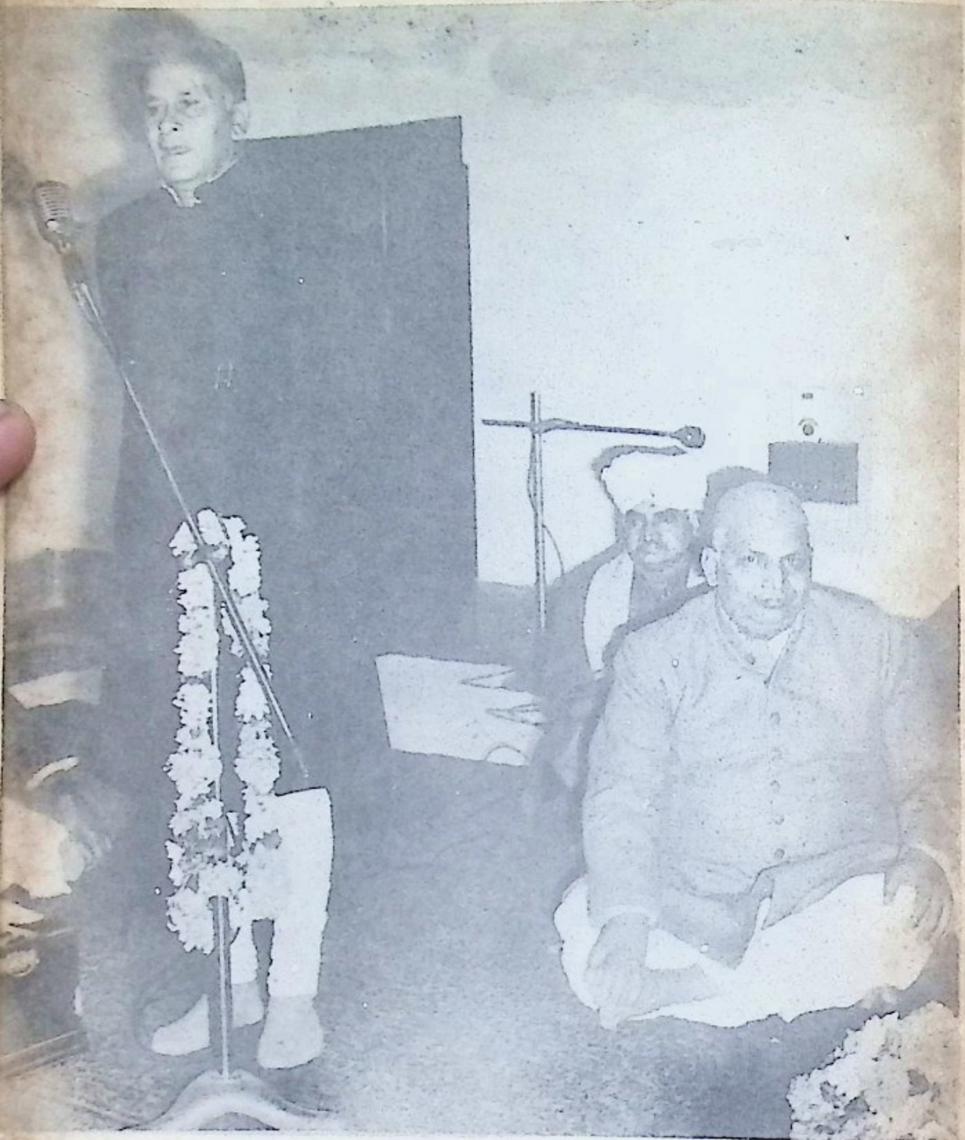

सार्वदेशिक सभा के उपप्रधान पंजाब के आर्य नेता श्री वीरेन्द्र जी। आशीर्वाद, बधायी और सहयोग का आश्वासन देते हुए।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दिल्ली के प्रमुख आर्य नेता श्री देसराज चौधरी दयानन्द संस्थान को अंग्रेजी मासिक के प्रकाशन पर बधायी देते हुए।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बिहार के प्रसिद्ध आर्य नेता श्री रामानन्द जी उपप्रधान आर्य
प्रतिनिधि सभा बिहार, सभा के मन्त्री श्री कुबेर नाथ जी के साथ अंग्रेजी
ज्ञान की संपादक कुमारी ज्योत्सना को आशीर्वाद देने कार्यालय में पधारें
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के उपमंत्री पं० सच्चिदानन्द जी शास्त्री

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ओ३म्

बोध-रात्रि

—महाकाव्य—

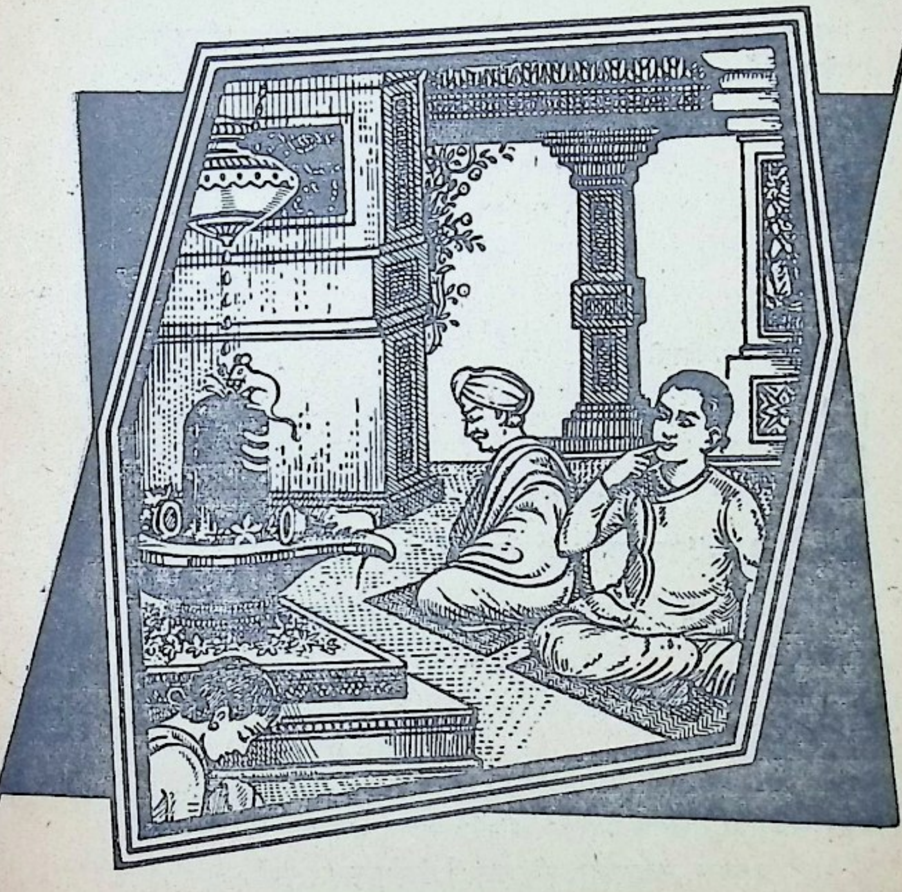

दयानन्द संस्थान

नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रकाशक :
जन-ज्ञान प्रकाशन
१५६७, हरध्यानसिंह मार्ग, नई दिल्ली-५

जन-ज्ञान-प्रकाशन का
६१वां पुष्प

दयानन्द संस्थान
नई दिल्ली का प्रकाशन

फोन—५६६६३६

सम्पादक
राकेश रानी

बढ़िया सफेद कागज पर
मूल्य—३.००

卐

लेखक—
विज्ञान मार्तण्ड वात्स्यायन

मुद्रक :
सैनी प्रिण्टर्स,
पहाड़ी धीरज, दिल्ली-६

संसार में वेद का संदेश फैलाने और वैदिक
साहित्य प्रकाशन के लिए
१—"दयानन्द-संस्थान" के सदस्य बनें
२—जन ज्ञान (मासिक) के सदस्य बनें
हिन्दी व अंग्रेजी में—
नमूना पत्र लिख कर बिना मूल्य मंगाएँ
वार्षिक मूल्य १२) = आजीवन मूल्य २०१)
३—वैदिक साहित्य व अंग्रेजी के ग्रन्थ प्रकाशन हेतु व ईसाइयत के प्रवाह को रोकने के लिए उदारतापूर्वक सहयोग दीजिए।
अध्यक्ष, दयानन्द संस्थान [पंजीकृत ट्रस्ट]
१५६७, हरध्यानसिंह मार्ग, करौल बाग, नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भूमिका

बोध रात्रि नामक यह महाकाव्य १९३९ में माँडले (बरमा) में छपा था। ३३ वर्ष पश्चात् हम इसे पुनः प्रकाशित कर 'जन-ज्ञान' के पाठकों व ऋषि भक्त जनता को अर्पित कर रहे हैं

श्री सत्येन्द्रसिंह आर्य एम. ए. धामपुर निवसी ने इसे प्रकाशनार्थ हमारे पास भेजा था, कई वर्ष बीत गए, इच्छा होते हुए भी अनेक कारणों से इस का प्रकाशन रुका रहा किन्तु इस बार प्रभु कृपा हुई और अब यह आपके हाथ में है।

यह कैसा है, इस का निर्णय तो विज्ञ पाठक ही कर सकेंगे, हम तो श्रद्धा और आदर से एक भावुक श्रद्धालु कवि की अमर कृति पाठकों की सेवा में भेंट करने के निमित्त मात्र हैं। ज्ञान, भक्ति, श्रद्धा और आदर से लिखी इन काव्य पंक्तियों में आप को ऋषि के मानस का सफल चित्रण मिलेगा और मिलेगी कुछ कर डालने की शाश्वत प्रेरणा।

पुस्तक के मुख पृष्ठ पर कवि ने लिखा था—

अभी नहीं मैं कुछ कहता हूँ,
क्योंकि समय है काफी दूर!
दिव्य दृष्टि से देख रहा हूँ,
फैल जायेगी क्रांति जरूर!

क्राँति तो हुई पर अभी अधूरी। पूर्ण क्रांति बलिदान माँगती है। लेखराम, श्रद्धानन्द जैसे प्राणों की आहुति देने वालों का। कब, कहाँ और कौन देगा बलिदान, यह कौन जानता है। फिर भी हम इतना अवश्य जानते हैं कि ऋषि दयानन्द का तप, त्याग, बलिदान क्रान्ति सफल करने में समर्थ होगा।

आओ ऋषि भक्तो, बोध रात्रि का पाठ कर हम भी श्रद्धा से ऋषि चरणों में नत होकर उसी के भावों में खो जाएँ, कल्पना सत्य हो और हम दयानन्द मय होकर उसी की राह पर चलपाएँ—प्रभु ऐसी शक्ति दे—

दयानन्द संस्थान
नई दिल्ली-५

भारतेन्द्र नाथ
अध्यक्ष

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

विषय-सूची

पहला सर्ग

"तमसो मा ज्योतिर्गमय" अर्थात् हमें अन्धकार से रोशनी की ओर ले चलो। इस सूक्ति को लक्ष्य में रखते हुए ग्रन्थकार ने इस महाकाव्य के प्रारम्भ में अन्धकार का वर्णन किया है। उस शिवरात्रि की मध्यम निशा में फैले हुए भौतिक अन्धकार के साथ भारतवासियों में व्याप्त मानसिक अन्धकार की तुलना आश्चर्यजनक है और अन्धकार के वर्णन में यत्र तत्र दार्शनिक सिद्धान्तों का समावेश है। उस सूचिभेद्य अन्धकार में समस्त संसार ओत प्रोत था केवल गुजरात के एक पुण्यश्लोक प्रदेश में स्थापित शिवमन्दिर में जलते हुए दीपकों का धुंधला सा प्रकाश नजर आता था। वैसे तो वहां पूजारी और अनेक भक्त लोग रात्रि जागरण के उपलक्ष्य में एकत्रित हुए थे पर दैवयोग से सभी की आँख लग गई। उस नीरव निशीथ में सिर्फ एक होनहार बालक जाग रहा था। कुछ देर में वह क्या देखता है कि एक चूहा शिव मूर्ति के निकट पहुँचा और उसने निर्माल्य का भक्षण प्रारम्भ किया यह दृश्य देखते ही उस बालक के हृदय में प्राचीन संस्कारों के उद्बोध से विलीन विचारों का स्रोत उमड़ पड़ा और वह दुरुत्तर तर्कों की स्वरतर धारा में वह चला। बालक मूलशङ्कर के हृदय में उत्पन्न हुए विचार वास्तव में ठीक थे या नहीं उनका प्रचार अब लाभदायक है या नहीं, इससे कोई मतलब नहीं, कवि ने तो केवल ऐतिहासिक दृष्टिकोण से पाठकों के सम्मुख उन्हें प्रस्तुत किया है।

अस्तु शिवरात्रि के बाद उस नवयुवक का हृदय सत्य विद्या के अन्वेषण में लगा और वह कुछ उद्विग्न सा रहने लगा। इतने ही में उस वीर बालक की बहन का स्वर्गवास हो गया इससे उसके दिल पर बड़ी चोट पहुँची और चन्द रोज में उसके चाचा भी इस असार संसार से चल बसे। इस प्रकार मृत्यु का अनर्गल अत्याचार देख कर उस युवक ने मृत्यु जीतने का पक्का इरादा किया और बहुत कुछ सोच विचार के बाद वह इस निश्चय पर पहुँचा कि ब्रह्मचर्य और योगाभ्यास से मृत्यु का दमन किया जा सकता है।

दूसरा सर्ग

(जिज्ञासु की खोज)

बालक मूलशङ्कर ने मृत्युञ्जय योग सीखने के लिये घर बार छोड़ दिया और

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

चन्द रोज इधर उधर घूम फिर कर गुजारे। बाद में उसने संन्यास ले लिया और उसका नाम दयानन्द सरस्वती रक्खा गया। वह योगियों की तलाश में उत्तरापथ की ओर बढ़ा और वहाँ एक मठ में एक प्रतिष्ठित महन्त का साक्षात्कार किया। उस योग मार्ग के जिज्ञासु ने महन्त जी से योगियों का पता पूछा तो उन्होंने जवाब दिया कि तुम इन बेकार झंझटों में मत पड़ो और यहीं रहो। मैं तुम्हें अपना उत्तराधिकारी बना लूँगा पर जिसने स्वयं ही पैतृक सम्पत्ति पर लात मार दी उस वीर आत्मा पर इस तुच्छ प्रलोभन का क्या असर पड़ता। अखिर वह त्यागवीर यात्री वहाँ से विदा होकर सिद्ध लोगों की खोज में हिमालय की ओर चल पड़ा। एक पहाड़ी नदी को उसने पार किया और वह धीर यात्री पर्वतराग के उत्तुङ्ग प्रदेशों में सिद्ध महात्माओं को खोजने लगा। जब वहां इसे कुछ न हाथ आया तो वह घोर निराशा से ग्रस्त होकर आत्मविसर्ग (Suicide) करने का सङ्कल्प कर बैठा पर किसी अदृष्ट शक्ति की प्रेरणा ने उसके हृदय को बल दिया और उस आर्य मुसाफिर ने भीषण सङ्कट से निर्भीक होकर अपने जीवन को बचाया।

तीसरा सर्ग

यमुना नदी का सौन्दर्य सचमुच लोकोत्तर है उसी नदी के किनारे बसी हुई मथुरा पुरी आज भी दर्शकों के चित्त को चकित कर देती है। ग्रन्थकार ने नदी के प्राकृतिक सौन्दर्य का अच्छा वर्णन किया है और नगर का वर्णन भी प्रशंसनीय है। महाकाव्य का नायक घूमता हुआ उस नगर में पहुँचा और वहां की एक संस्कृत पाठशाला में शिक्षा पाकर अपने गुरु पूज्य विरजानन्द जी से अन्तिम आदेश मांगा। गुरु ने उसे भारतवर्ष के उद्धार का आदेश दिया और शिष्य ने उसे सहर्ष स्वीकृत किया।

चौथा सर्ग

(हरिद्वार का कुम्भ)

प्रातःकाल का समय था। हरिद्वार में कुम्भ के मेले की धूम धाम थी। प्रभात और मेले का वर्णन निहायत दिलचस्प है। महर्षि ने वहां पाखण्डखण्डनी नामक पताका गाड़ दी और उसके नीचे एकत्रित हुए अगणित जनसमुदाय को उन्होंने अपना प्रथम वैदिक नाद सुनाया।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पांचवाँ सर्ग

(धर्मचक्र, प्रवर्तन)

यत्र तत्र घूमते हुए महर्षि बनारस पहुँचे और वहां उन्होंने पण्डितमण्डली को शास्त्रार्थ में परास्त किया फिर उन्होंने आनन्द बाग में एक क्रान्तिकारी उपदेश दिया जिसने भारत के दार्शनिक शरीर का पुराना चोला बदल दिया। यह सर्ग बड़ा ही जटिल और क्लिष्ट है।

छठा सर्ग

(क्षात्र धर्म का उपदेश)

भारत के विभिन्न प्रान्तों में प्रचार करते हुये महर्षि जयपुर पहुँचे और यहाँ के महाराज रामसिंह बहादुर ने उनका हार्दिक स्वागत किया वहाँ एक रोज महर्षि ने क्षत्रियों की विराट सभा में ओजस्वी भाषण दिया और वीर क्षत्रियों के हृदय में वीरत्व का आधान किया।

सातवाँ सर्ग

(विषय विष विनाश)

महर्षि ने शाहपुरा में जोधपुर महाराज का निमन्त्रण पाया और वे मारवाड़ की राजधानी में पधारे। उन्होंने एक बाग में अपना डेरा जमाया और जनता को सदुपदेश देते रहे। जोधपुर महाराज ने एक दिन अपने कुलपुरोहित के द्वारा महर्षि से प्रार्थना की कि वे नियत समय पर राजदरबार में पधार कर वैदिक उपदेश देने की कृपा करें। दयालु महर्षि ने यह सब कुछ स्वीकार किया और वे नियत समय से पहले ही उस राज भवन में जहाँ दरबार लगना निश्चित था पहुँच गये। वहाँ उन्होंने वन्वराज का एक वाराङ्गना से सहयोग देखा। इस जघन्य दृश्य से ऋषि के हृदय पर ठेस पहुँची और उन्होंने राजा को आदेश दिया कि आप विषयों व विषम विष के सम्पर्क से अपने जीवन धन और स्वास्थ्य का सर्वनाश न करें। उस वाराङ्गना का कल्पित नाम कल्पसुन्दरी रक्खा गया है।

आठवाँ सर्ग

(भीषण षड्यंत्र)

महर्षि के आज्ञाकारी राजा से परित्यक्त होकर कल्पसुन्दरी शोकसागर में डूब गई और उसका हृदय प्रतिहिंसा की आग में फूल की तरह झुलसने लगा। उसने महर्षि

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

से बदला लेने की ठानी और अपनी कोठी में रात्रि के समय एक गुप्त सभा की उस में पाँच मेम्बर थे। बहुत देर तक वाद विवाद होता रहा, कोई भी सदस्य किसी निश्चय पर न पहुँच पाया किसी का भी कोई प्रस्ताव पास न हो सका। सब लोग निराशा से ग्रस्त थे। आखिरकार सब की यह राय हुई कि महर्षि को उनका भृत्य जगन्नाथ शीशा घोल कर पिला दे और उनके जीवन को हमेशा के लिए इस संसार से मिटा दे। जगन्नाथ पहिले तो स्वामिघात का पाप अपने सिर पर लेने को राजी न हुआ पर उन धूर्तों के प्रपञ्च और प्रलोभन ने आखिर उसे पागल बना ही दिया और वह उस पापमन्त्रणा को क्रियात्मक रूप देने को उद्यत हो गया। इस सर्ग में वेश्याजीवन का चरित्रचित्रण बड़ा ही मनोमोहक और रोमाञ्चकारी है। हिन्दी साहित्य में इसकी समता अन्यत्र दुर्लभ है।

———

नौवाँ सर्ग

(मैत्री और करुणा का आदर्श)

जगन्नाथ ने महर्षि को रात्रि के समय दूध पिलाया और कुछ देर बाद वे सो गये। उनकी आँख झपक गई और स्वप्न में करुणा और भयानक रस के अनेक दृश्य दिखाई देने लगे वे सहसा जाग पड़े। बस फिर क्या था वमन और विरेचन का वेग बढ़ चला। हृदय और नाड़ी का स्पन्दन विषम हो गया। ऋषि ने तत्काल यह निश्चय कर लिया कि उन्हें विष दिया गया है। उन्होंने अपने भृत्य जगन्नाथ को अपने पास बुलाया और उसकी मुखाकृति से उसका मनोगत भाव पहचाना। उस पापात्मा की अन्तर्दशा का अनुभव तो वह स्वयं ही कर सका पर महर्षि के पूछने पर उसने अपने पाप को कबूल किया। उस नीच का कलेजा घृणा और ग्लानि से फटने लगा। बस फिर क्या था महर्षि के हृदय में भी दया का स्रोत उमड़ पड़ा और उन्होंने उसे कुछ धन देकर यह आदेश किया कि तू यथासम्भव शीघ्र इस स्थान से भाग जा अन्यथा मुझ से क्षमा पाकर भी तू जनता से अपना परित्राण न कर सकेगा। संसार का यह प्रथम आदर्श है जो मैत्री और करुणा का सन्देश संसार को देता है और देता रहेगा। अस्तु वह अभागा उसी समय वहाँ से भाग गया और महानायक ने जैसे तैसे वह रात बितादी और सवेरा होते हो अपने आवास में नैमित्तक होम करवाया।

यह सर्ग यमक में लिखा गया है। हिन्दी साहित्य में ऐसा शाब्दिक चमत्कार दुर्लभ है।

———

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दशम सर्ग

(स्वास्थ्य का ह्रास)

ऋषि की बीमारी का हाल सुनते ही जोधपुर महाराज को बड़ी चिन्ता हुई। चिकित्सा के लिए बड़ी दौड़ धूप की गई पर कोई दवा कारआमद न हुई। होती भी कैसे जब कि शीशा दाखिले शिकम होकर आन्तों को काट चुका था। ऋषि का आदेश पाकर महारानी को साथ लेकर जोधपुर नरेश उनके आवास स्थान में पहुँचे। वहाँ बहुत देर तक बातचीत होती रही। महानायक ने उपस्थित राजदम्पती को राजधर्म का रहस्य समझाया और परदा प्रथा की कुछ समालोचना की। सपत्नीक राजा के बहुत अनुनय विनय करने पर भी अस्वस्थ ऋषि ने प्रस्थान का इरादा न बदला और कह दिया कि मैं इस समय किसी भी औषधि को सेवन नहीं करना चाहता। अब चारा ही क्या था, राजा ने आचार्य के प्रस्थान का उचित प्रबन्ध कर दिया।

एकादश सर्ग

(अन्तिम सन्देश)

महर्षि अजमेर में आकर ठहरे। विष का प्रभाव प्रतिदिन बढ़ने लगा। पण्डित गुरुदत्त एम. ए. जिनका हृदय पाश्चात्य सभ्यता के कृत्रिम चमत्कार से प्रभावित था, ऋषि से मिले। रुग्णावस्था में भी आचार्य की नीरव सहन शक्ति को देख कर बड़े चकित हो गये। उन्होंने अनेक धार्मिक और दार्शनिक शंकायें ऋषि के सामने पेश कीं और उपदेश से सन्तोषजनक समाधान पाकर वे उनके अनन्य भक्त हो गये। ऋषि ने उन्हें अन्वेषण विभाग का कार्य करने की आज्ञा दी ठीक समय पर स्वनामधन्य ऋषि दयानन्द सरस्वती ने एक महाजन सभा में जो देश देशान्तरों से आए हुये जिज्ञासुओं से संघटित था अपना अन्तिम सन्देश दिया और ब्रह्म रन्ध्र से निकला हुआ ज्योतिः पुञ्ज सूर्यमडण्ल में लीन हो गया।

ऋषि दयानन्द का लक्ष्य पूर्ण करने में 'दयानन्द-संस्थान' पूर्ण शक्ति से लगा है। धरती पर धर्म पताका लहराने के लिए संस्थान को सहयोग दीजिए

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बोध-रात्रि

—:०:—

मध्यम निशा में उग्रतम तम का अचल अधिकार है,
कुछ कल्पना चाहे करे पर दृष्टि तो बेकार है।
निःस्तब्ध नीरव विश्व मानो शून्यवादी हो चला,
वर्ण-व्यवस्था कालिमा से लिप्त होकर खो चला ॥१॥

वैषम्य का क्षय हो गया छोटा बड़ा सब एक है,
क्या रूस का फैला यहाँ अविवेक या कि विवेक है।
अब भिन्नता कुछ भी न गोरों और कालों की रही,
अब म्लेच्छ काफिर भाव की भी भावना जाती रही ॥२॥

तम के लिए कवि क्या कहे यह द्रव्य है न अभाव है,
पर विश्व पर इस तत्त्व का पड़ता विचित्र प्रभाव है।
उत्तप्त विधवा-वृन्द का जीवन इसी ने रँग दिया,
आतुर अनाथों के वदन को श्याम इस ने ही किया ॥३॥

श्रुति-धर्म का क्षय देख कर मानो प्रकृति बेहोश है,
पाखण्ड-विष से जड़ हुई कुछ भी न इस में जोश है।
दुर्भेद्य तम की आड़ में उडुरूप कुसुमों से सनी,
बिखरी हुई कवरी पड़ी अञ्जन सदृश काली घनी ॥४॥

नव नारियों के साथ जा संन्यासियों की सुन कथा,
सहपाठिनी बन कर उन्हीं की सीख कर यह कुप्रथा।
उन मुफ्तख़ोरों के निवह में नाम अपना जोड़ के,
नैष्कर्म्य पाया दृष्टि ने क्या रूप का ग्रह छोड़ के ॥५॥

रवि-चन्द्र दोनों का यहाँ चलता नहीं कुछ भी पता,
वे भी भगे क्या कर्म तज कर साधुओं से एकता।
या काल के चल चक्र में दुर्भाग्य से वे पिस गये,
शत खण्ड उनके दीखते हैं हाल में तारे नये ॥६॥

श्रुति को शृगालों की परुष आवाज तो भाती नहीं,
वह दैन्य से खामोश है मृदु शब्द को पाती नहीं।
इस काल में क्या शाब्दिकों का भी दिवाला खुल गया,
या शब्द तम की रात्रि में जल में नमक-सा घुल गया ॥७॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जन का न पद-सञ्चार है चलना हवा का बन्द है,
उस नित्य चेतन की हुई क्या चेतना अब मन्द है।
इस वक्त कोई भी कहीं सजता न कुछ भी साज है,
देवी प्रकृति ने क्या किया सन्तान-निग्रह आज है ॥८॥

क्या देश की सौभाग्य-लक्ष्मी धर्म विप्लव मान के,
होने चली निर्वासिता है कृष्ण-चादर तान के।
मौक्तिक सदृश हिम-विन्दुओं का प्रस्रवण कुछ हो रहा,
दयनीय भारत की दशा पर व्योम मानो रो रहा ॥९॥

कलरव शकुन्तों का नहीं क्या ध्यान में वे मग्न हैं,
या नीड़ में दैनिक प्रलय से कर्म उनके भग्न हैं।
दिन भर उन्होंने गीति की हमने न ध्यान जरा दिया,
अतएव मानो मौन का अवलम्ब उनने कर लिया ॥१०॥

दो डाल सीसा कान में, जो शूद्र सुन लें वेद को,
छूने न वे पावें हमें, जानें न व्रत के भेद को।
इस भावना से पाप जो है चित्त में संचित हुआ,
इस घोर तम के रूप में क्या आज वह वाहर हुआ ॥११॥

आभा उषा की वह कहां, गुण वेद जिसके गा रहे,
यह और दारुण तम कहाँ हम त्रास जिसमें पा रहे।
इस भाँति क्या था क्या हुआ अब कुछ न इस का ध्यान है,
मानो अविद्या को मिला आधे जगत् में स्थान है ॥१२॥

यद्यपि प्रभाकर में तिमिर का कुछ नहीं अनुराग है,
इसके समर्थन में मगर लेता प्रभाकर भाग है।
वेदान्त ने भी तो इसे है भाव ही साबित किया,
सम्मान सत्ता का इसे विज्ञानभिक्षुक ने दिया ॥१३॥

पक्षी उलूक सदा तिमिर से प्रेम करते हैं वड़ा,
खण्डन मनुष्य उलूक ने फिर क्यों किया इसका कड़ा।
कण खोजने में यह हतक देता न किसको कष्ट है,
इससे अभाव कणाद ने माना इसे यह स्पष्ट है ॥१४॥

भूतल अतुल कागज पड़ा स्याही अंधेरे की बनी,
बीभत्स, करुणा और भय से हिन्द की गाथा सनी।
हो लेखिका कुदरत कहीं से रोशनी यदि पायगी,
तो लेख लिखने के लिये स्याही नहीं रह जायगी ॥१५॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कवि ने कहा निज कल्पना से ध्वान्त राशि अपार है,
कब तक फिरेगी तू भटकती कुछ न इस में सार है।
ओ दीख पड़ता दीपकों का दूर मन्द प्रकाश है,
आ हम चलें उस ओर ही होना न ठीक निराश है ॥१६॥

गिरिजा समेत गिरीश का यह एक मन्दिर है बड़ा,
पाखण्डकृत भारतविजय का स्तूप मानो है खड़ा।
भैरव नहीं है द्वार पर कविकल्पना भीतर गई,
हालत वहां की देख कर निर्वेद से हत हो गई ॥१७॥

कुछ टिमटिमाते दीपकों की रोशनी कम हो रही,
ज्यों वेद-विद्या देश में अपनी प्रतिष्ठा खो रही।
करता भ्रमण अब भी धुआं है धूप का आकाश में,
किस तत्त्व को यह खोजता है शान्तिपूर्ण प्रकाश में ॥१८॥

मिष्ठान्न दोनों में धरा शिवमूर्ति के सम्मुख पड़ा,
सहभोज उससे चींटियों का हो चला मानो बड़ा।
निर्माल्य लेना शम्भु का यद्यपि मना है धर्म से,
पर चींटियां शायद कहीं परिचित न हों इस मर्म से ॥१९॥

बिखरे पड़े ये अव्यवस्थित फूल हैं कुम्हला रहे,
मानो जुदाई से चमन की वेदना हैं पा रहे।
है स्वर्ग से भी जन्मभू जननी समान गरीयसी,
यह भावना भावुक हृदय में आदि से हो है बसी ॥२०॥

पुस्तक धरी है एक यह दिन में कथा जिसकी हुई,
विश्वास ऐसा है कि इसकी व्यास से रचना हुई।
जो बात हमको इष्ट हो वह व्यास के ही नाम से,
जैसे बने बस चल पड़े हमको गरज है काम से ॥२१॥

भगवान के प्रिय भक्तकुल की प्रेम से चक्खी हुई,
इस ओर लोटों में अभी तक भङ्ग है रक्खी हुई।
विज्ञान धर्म स्वतन्त्रता धन जन सभी का भङ्ग है,
हे भङ्ग ! करना चाहती तू और किस का भङ्ग है ॥२२॥

रक्खी हुई है भस्म संमुख किन्तु इसका हेतु क्या,
भवसिन्धु तरने के लिए बन जायगी यह सेतु क्या।
मच्छर न काटें इसलिए यह ठीक ही उपचार है,
पर आज कल तो वस्त्र का सर्वत्र पूर्ण प्रचार है ॥२३॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

चन्दन घिसा रक्खा हुआ ले कल्पने तू भी लगा,
क्या अन्त में यह शौर्य से यमदूत को देगा भगा।
जब भारतीय सिपाहियों पर ही न बल इसका चला,
तो यह विदेशी दूत पर क्या असर डालेगा भला ॥२४॥

जल झारियों के छिद्र से शिवशीश पर गिर कर बहा,
अतएव चारों ओर कीचड़ अक्षतों से हो रहा।
उसका फिसलना है नियत जो पैर रक्खेगा यहाँ,
शिवभक्ति का फल भक्त ऐसा शीघ्र चक्खेगा कहां ?।२५॥

है शूद्र का घुसना मना इस शिवसदन में सर्वथा,
शैतान ने कब से चलाई मानवों में यह प्रथा।
मैत्री तथा करुणा द्विजों की आज किस बिल में छिपी,
उनके हृदय पर यह घृणा की कालिमा क्योंकर लिपी ॥२६॥

है एक कोने में धरी माचिस छटा दिखला रही,
भगवान के इजलास को रोशन बनाती है यही।
क्या चीज रोगन में मिली किस देश का यह माल है,
इस बात का पूजारियों को लेश भर न खयाल है ॥२७॥

शिवरात्रि की शिवरात्रि में है जागरण करना लिखा,
पर द्विज इधर सोये पड़ें हैं खोल कर अपनी शिखा।
उपवास से कृशगात्र इनका श्वास यद्यपि श्रान्त है,
नव सोमरस के पान से अन्तःकरण कुछ भ्रान्त है ॥२८॥

है भान अपने आप का होता इन्हें इस काल में,
सिद्धान्त ऐसा मानते हैं ब्रह्मवादी हाल में।
नैयायिकों की राय में इनको न अपना ज्ञान है,
पर जागरण के बाद निजको सावता अनुमान है ॥२९॥

आनन्द भीतर है इन्हें यह कह रहा वेदान्त है,
है दुःख ही केवल नहीं यह न्याय का सिद्धान्त है।
विज्ञान आलय की यहां धारा निरन्तर बह रही,
विज्ञानवादी कह रहे, यों कौन-सा मत है सही ॥३०॥

ये बेखबर सोये पड़े तनु का न तनु भी ज्ञान है,
रक्षक यहां पाषाणमय इनका स्वयं भगवान है।
चिन्ता सरित के पूर में चिरकाल से पैठा हुआ,
पर एक बालक जागता है सामने बैठा हुआ ॥३१॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

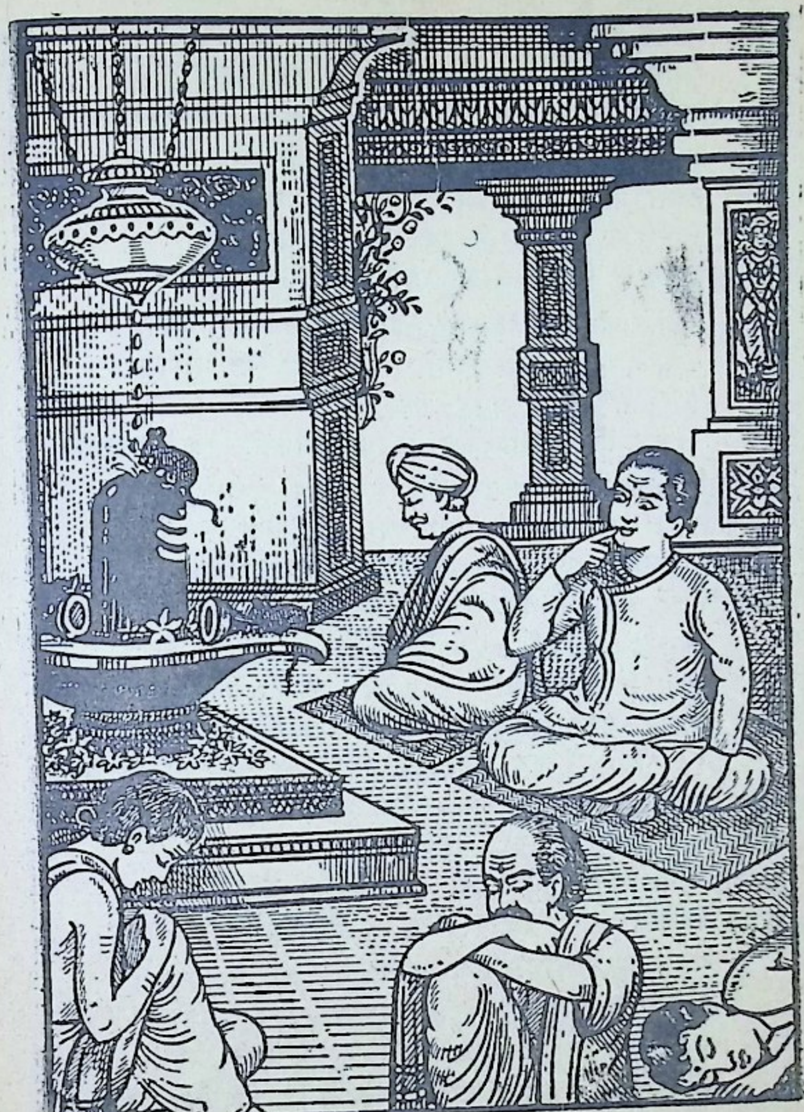

बोधरात्रि की वह घड़ी जब मूलशंकर जाग रहा था—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

है हृष्ट पुष्ट शरीर इसका स्कन्ध पर उपवीत है,
इसके वदन की कान्ति से मानो तिमिर अति भीत है।
नासा-पुटों से श्वास वटु का चल रहा गम्भीर है,
भवितव्य भारतवर्ष का क्या सोचता यह धीर है ॥३२॥

होता प्रशान्त कभी हृदय है और क्षुब्ध कभी-कभी,
नीचे कभी पड़ती नजर है देखता ऊपर कभी।
शिशु घूमता है कल्पना के चक्र में अति वेग से,
पाखण्ड को है खण्ड करता तर्क के खर तेग से ॥३३॥

कवि कल्पना आगे बढ़ी, शिशु के हृदय को चूमने,
उसकी प्रथम आराधना से क्षेमपथ में घूमने।
हे दीन हिन्दू जाति तेरे भाग्य का है फैसला,
शङ्करसदन में एक वटु की बुद्धि पर होने चला ॥३४॥

शिवमूर्ति के सम्मुख मधुरतर भोग रक्खा था जहां,
मूषक निकल कर एक बिल से आ गया सहसा वहां।
खा कर मिठाई प्रेम से वह नृत्य में, रत हो गया,
प्रभुभक्ति के आवेश से निःस्तब्धता निज खो गया ॥३५॥

मुंह में लिये निज पुच्छ को प्रस्राव से अभिषेक था,
उसने किया श्रीकण्ठ का दर्शक वहां वटु एक था।
वन्धन बना बैठा हुआ यद्यपि जटा में सर्प था,
तो भी वहां पर खेलता निर्भीक आखु सदर्प था ॥३६॥

शिव के मुकुट नव चन्द्र को वह चूमने सादर लगा,
मार्जार की आहट हुई त्यों प्राण ले अपना भगा।
घटना अनेकों वार ऐसी ही घटी होंगी वहां,
साक्षी मिलेगा किन्तु इसका आज के जैसा कहां ॥३७॥

यह दृश्य बालक देखकर आश्चर्यनद में बह गया,
निर्वेद के आतङ्क से संज्ञारहित-सा रह गया।
द्रुत रक्त का सञ्चार उसके देह में होने लगा,
सोते हुओं ने खो दिया पाया उसी ने जो जगा ॥३८॥

उसके कमल से लोचनों में ज्योतियां जलने लगीं,
सौदामिनी के वेग से सब नाड़ियां चलने लगीं।
निश्वास की गति वढ़ गई टपका पसीना भाल से,
बस मुक्ति उसको इष्ट थी आडम्बरोंके जाल से ॥३९॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पाखण्ड का डेरा हृदय से बाल के हटने लगा,
मानो कलेजा रूढियों का शोक से फटने लगा।
तत्काल ऐसे तर्क जिनका विश्व में उत्तर न था,
करने लगा एकान्त में शिशु सोच कर शिव की कथा ॥४०॥

जो बैठते हैं बैल पर देते किसी को शाप हैं,
वरदान से अनुकूल हो हरते किसी का ताप हैं।
जो मित्र हैं यक्षेश के जिनका कि शस्त्र त्रिशूल है,
क्या वे यही भगवान हैं या यह हमारी भूल है? ॥४१॥

करना सवारी बैल की है पाप यों मनु ने कहा,
नटराज से यह काम क्यों विपरीत इसके हो रहा।
भगवान का क्या अर्थ यह है छोड़ मानव धर्म को,
निश्चिन्त हो करता रहे अच्छे बुरे सब कर्म को ॥४२॥

लेपन चिता की भस्म का करना कहां का धर्म है,
नरमुण्ड की माला वनी किस वेद का यह मर्म है?
डाला गले में सर्प तो यह कौन ऐसी बात है,
जिसके लिए शिव की प्रतिष्ठा विश्व में विख्यात है ॥४३॥

कैलास में सर्दी बहुत है इसलिए रक्खी जटा,
दिखला रही है भक्त जन को जो अरुण अपनी छटा।
या साधु बन कर मूँडते हैं नित्य ही चेले नये,
या छोड़ वैदिक धर्म शायद सिक्ख शङ्कर हो गये ॥४४॥

कामान्ध हो वृषकेतु ने यह दारुवन में क्या किया,
मुनिपत्नियों को धर्म से कर भ्रष्ट क्यों अपयश लिया।
जो पारदारिक भोगलोलुप इन्द्रियों का दास है,
वह दाह मन्मथ का करे होता नहीं विश्वास है ॥४५॥

त्रैलोक्य में ईशान ने था बाण को दुर्द्धर किया,
दशकण्ठ को सन्तुष्ट हो साम्राज्य लङ्का का दिया।
तो एक छोटीसी लँगोटी क्यों इन्हें भाती नहीं,
क्या शैलबाला को हया इस दृश्य से आती नहीं ॥४६॥

मुँह पांच आंखें तीन यह कैसा भयंकर देह है,
सोचे बिना कैसे किया इससे शिवा ने स्नेह है।
या अतिचपल प्राकृतनियमवश शून्य अनुसन्धान से,
सुमुखी स्त्रियों की मति विमुख है पुरुष-गुण-विज्ञान से ॥४७॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कङ्कण बना है सर्प जिसका मरघटों में वास है,
जो भूत प्रेत पिशाच को रखता हमेशा पास है।
इस उग्र को देकर सुता गिरि-राज ने क्यों भूल की,
या वह फ़िदा खुद हो गई आभा निहार फकीर की ।।४८।।

क्या व्यास की प्यारी कलम का पागलों से मेल है,
सौ वर्ष तक रतिराग हर का स्थिर रहा क्या खेल है।
क्या पार्वती को साथ में ले नग्न फिरना योग है,
या इष्ट पशुपति को विगर्हित बन्दरों का भोग है ।।४९।।

क्या ही निराली गल्प है शिव-लिङ्ग जब कट कर गिरा,
अम्बर रसातल सब तरफ विस्तार से उसके घिरा।
जोड़ा उसे किसने पुनः कर सर्जरी में दक्षता,
या तो बता दें व्यास या शायद उमा को हो पता ।।५०।।

यह भंग पीने की इन्हें आदत कहां से लग गई,
धत्तूर खाने की कहां से सीख ली विद्या नई।
प्रतिभा प्रभा बल आदि का है नाश कर देता नशा,
शायद इसी से हो गई भगवान की ऐसी दशा ।।५१।।

है चन्द्र शिव के शीश पर तो क्यों अंधेरी रात है,
या व्यास ने निज कल्पना से ही गढ़ी यह बात है।
पीकर गरल श्रीकण्ठ ने भीतर उतारा ही नहीं,
होगी अधिक अद्भुत कहानी और क्या इस से कहीं ।।५२।।

अश्लीलता के दाग से हैं चित्र सब जिनमें सने,
शिव और लिङ्ग पुराण वे इनकी कथा से हैं बने।
पढ़ कर तथा सुन कर उन्हें होता नहीं सन्तोष है,
हर एक पहलू में करूँ क्या दीख पड़ता दोष है ।।५३।।

यों ही अनेक विचार वटु के चित्त में आने लगे,
इस बुत-परस्ती के विरोधी भाव बल पाने लगे।
उस काल में मृदु वेग से चलने लगी सुरभित हवा,
जो श्रम-विकल मस्तिष्क की थी शर्तिया मानो दवा ।।५४।।

जम्बुक न जाने किस लिए कुछ दूर वन में रो उठे,
पशुयोनि में आये हुए क्या पोप निज धृति खो उठे।
तब इन्दिरा के अश्व नभ में मस्त हो फिरने लगे,
सोती हुई करटावली की शान्ति को हरने लगे ।।५५।।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भगवान के घर में हुआ फिर विघ्न एक खड़ा नया,
आघात मारुत का हुआ दीपक अचानक बुझ गया।
शिव गौर हैं इस बात से यदि श्याम हरि को खेद था,
तो उस निविड़ तम ने मिटाया यह भयङ्कर भेद था ॥५६॥

घुड़दौड़ फिर भी मूषकों की जोर से जारी हुई,
मानो लुटेरों से तिमिर में खलबली भारी हुई।
धारा विचारों की कि जो वटु-चित्त से थी बह रही,
इस विघ्न से प्रतिहत हुई वह वेग अपना सह रही ॥५७॥

रहते हुए भी स्नेह के था बुझ गया दीपक जहां,
रवि-चन्द्र-लोचन से विभूषित शम्भु बैठे थे वहां।
हर-कण्ठ में था वह फणी थी मणिजटित जिसकी स्फटा,
पर ध्वान्त का आटोप रत्ती भर नहीं इन से घटा ॥५८॥

निज धीरता का प्रथम ही परिचय वहां शिशु ने दिया,
माचिस उठाई और उसने दीप फिर रोशन किया।
ऐसी अनेकों आफतें सिर पर जिसे थीं झेलना,
क्यों कर उसे यह तुच्छ-सी घटना बनाती उन्मना ॥५९॥

निस्सार पौराणिक कथा से खिन्न और अधीर-सा,
पर प्रौढ़ भावुक भावना से और भी गम्भीर-सा।
हो बद्धपद्मासन नियत शिशु पूर्ववत् निज स्थान में,
फिर तत्त्व पाने को लगा दुर्धर्ष अनुसन्धान में ॥६०॥

अति गर्व तूर्ण विचूर्ण कर पाखण्ड रूप पहाड़ का,
जारी नजारा फिर किया चिन्ता नदी ने बाढ़ का।
तब झाड़ियों-सी रूढ़ियों का क्या कहें क्या हाल था,
अद्वैतियों की खेतियों का आ गया बस काल था ॥६१॥

क्या मूर्ति यह भगवान है जिनकी सुनी हमने कथा,
विपरीत मैं तो देखता हूँ आज सब प्रभु की प्रथा।
श्रद्धासहित आकर यहां मिष्टान्न भक्तों ने दिया,
खाया न मृड ने एक कण क्यों सख्त दिल इतना किया ॥६२॥

कोई भला अथवा बुरा यदि जन अयाचित दे रहा,
उससे करो मन्जूर वह भिक्षा प्रयत मनु ने कहा।
इस धर्म के क्रम का अतिक्रम नीललोहित ने किया,
तो किसलिए सम्मान इनको धर्म-वीरों ने दिया ॥६३॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इनको क्षुधा यदि थी नहीं तो क्यों न गिरिजा को दिया,
रहते हुए भी सुतयुगल के क्यों न यह भोजन लिया।
उपवास इनका आज हो तो था उचित करना मना,
दोना पड़ा कब तक रहेगा चीटियों से यह सना ॥६४॥

जब दीन भारत आज है जाता कुली-खाना गिना,
इसके निवासी मर रहे हैं अन्न के दाने विना।
तो इस मिठाई का यहां क्यों हो रहा अपमान है,
है अन्न पहला ब्रह्म क्या इसका न शिव को ज्ञान है ॥६५॥

रहते हुए भी पाँच मुँह शिव अशन में असमर्थ है,
तो भक्त क्यों रखते यहां लाकर मिठाई व्यर्थ है।
खाता नहीं जो क्या उसे खाना दिखाना ठीक है,
देता कृपणता को तरक्की यह रिवाज अलीक है ॥६६॥

अपने लिए खाना पका कर पाप खाना है निरा,
अब याद आती है मुझे वह कृष्ण की मधुमय-गिरा।
वलि और सेवा अतिथियों की तत्त्व उर में है यही,
इसके विरुद्ध अमूल यह पाषाणपूजा हो रही ॥६७॥

देते चराचर को गिरिश यदि तुष्ट होकर अन्न हैं,
घरवार इनके सर्वथा यदि धान्य-धन सम्पन्न हैं।
तो हो रहा किस लक्ष्य से इनका असह्य मज़ाक है,
यह तीन पैसे की मिठाई कर रही क्या ख़ाक है ॥६८॥

पालन चराचर विश्व का निज शक्ति स जो कर रही,
जो तुष्ट होकर अन्न से घर पूजकों का भर रही।
उस अन्नपूर्णा से हुआ शयनीय जिनका पूर्ण है,
क्या इस जलेबी से न इनका मान होता चूर्ण है ॥६९॥

प्रभु ने मिठाई देख कर ही सार उसका ले लिया,
इस वात ने तो मूर्खता का खूब ही परिचय दिया,
है स्वाद ज्यों का त्यों न इसके रूप में कुछ भेद है,
निस्सार तब कैसे मिठाई हो गई यह खेद है ॥७०॥

रक्खी मिठाई देर से जल-पात्र किन्तु नहीं धरा,
पशु तुल्य ही पशु-नाश से क्या भोग जाता है चरा।
लेती मिठाई का अगर हो तुष्ट सार अदुष्ट है,
तो क्यों नहीं यह मूर्ति फिर होती दिनों दिन पुष्ट है ॥७१॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जागरण जिसकी सृष्टि है निद्रा प्रलय अति घोर है,
उसके लिए घड़ियाल घण्टा शङ्ख का क्यों शोर है ?
दिन की कथा भी भूतपति को अज अनादि बता रही,
निर्माण निज कारीगरों से मूर्ति किन्तु जता रही ॥७२॥

संसर्ग के गुण प्राप्त कर क्या असलियत भव खो गये,
पाषाणजा के सङ्ग से पाषाण ही खुद हो गये।
या पुत्र का चूहा बनाता रिक्त भिक्षापात्र है,
इस तीव्र चिन्ता से हुआ पाषाण इनका गात्र है ॥७३॥

रवि चन्द्र होते हैं प्रकाशित प्राप्त कर जिसकी प्रभा,
आभास जिससे पा रही भासुर सितारों की सभा।
दीपक जला उसको दिखाना एक भारी भूल है,
संसार का तो हो न हो इसका अविद्या मूल है ॥७४॥

क्या बुतपरस्तों के शिरोमणि अक्ल के मोहताज हैं,
या पेट पापी के लिए सजने पड़े ये साज हैं।
वह कर सकेगा त्राण क्या, जिससे न चूहा तक हटा,
मानसगगन में घिर रही पाखण्डमेघों की घटा ॥७५॥

कलिकाल में कम हो गई यदि मूर्तियों की शक्ति है,
तो काल की पूजा करो क्यों मूर्तियों में भक्ति है ?
साबित हुआ इस बात से तो काल ही सब से बड़ा,
जिसका अबाध प्रभाव प्रभु की मूर्तियों तक पर पड़ा ॥७६॥

मूसल उलूखल और चक्की आदि से मुँह मोड़ के,
क्या हिन्दुओं ने पा लिया दिल मूर्तियों से जोड़ के।
बादाम के भी फोड़ने में काम ये आतीं नहीं,
खाने नहीं देतीं मिठाई और खुद खातीं नहीं ॥७७॥

महमूद की वह गुरू गदा जब शीश पर आकर गिरी,
शितिकण्ड के अपमान की सीमा हुई वह आखिरी।
रक्खा त्रिशूल कहां रहा ? शिवमूर्ति ने तब क्या किया ?
जब गजनवी के सैनिकों ने प्राण लाखों का लिया ॥७८॥

गौरीश की यह मूर्ति जिसकी आज पूजा हो रही,
औरङ्गज़ेबी के ज़माने में किधर सोती रही।
गोवंश का अब ध्वंस प्रतिदिन हो रहा अन्धेर है,
क्या मूर्ति बैठी देखती है कर रही क्यों देर है ? ॥७९॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हिन्दू हजारों क्रिश्चियन हो कर मसीहा गा रहे,
लाखों अभागे भ्रष्ट हो इस्लाम को अपना रहे।
लोचन त्रिलोचन का अनलमय काम किस दिन आयगा,
इस मूर्ति के पीछे पड़े तो नाम ही मिट जायगा ॥८०॥

कुलदेवियाँ लाखों अनाथों शून्य घर में रो रहीं,
क्या पाप से कलुषित धरा को आंसुओं से धो रहीं।
इस अश्मभेदी दृश्य को शिवमूर्ति हो कर बेहया,
निश्चेष्ट बैठी देखती है ताक में रख कर दया ॥८१॥

बच्चे करोड़ों भूख से आशिक कज़ा पर हो रहे,
या छोड़ कर गोभक्ति को वे दीन अपना खो रहे।
इस दृश्य से तो रो पड़ेगा क्षुब्ध हो शैतान भी,
पर यह शिला किस काम की देती नहीं जो ध्यान भी ॥८२॥

अविचल मनोविज्ञान का निश्चय हुआ अब तक यही,
गुण पूज्य के ही पूजकों को प्राप्त होते हैं सही।
पाषाण के पूजक हुए हम आज जड़ पाषाण से,
हो जायँ शायद कुछ दिनों में मुक्त अपने प्राण से ॥८३॥

जयचन्द्र ने दिल्लीश की जब मूर्ति रक्खी थी अहा,
प्रतिफल हुआ उसका भयानक रक्त कितना था बहा।
तो ईश का जाता किया इस भांति क्यों अपमान है,
निस्सीम की सीमा बनाना क्या नहीं अज्ञान है ॥८४॥

मैं जग रहा हूँ रात में दिन भर न कुछ खाया पिया,
सोचे बिना यह मूर्खता से कष्ट क्यों शिर पर लिया।
या रात्रि में ही जागरण का यह विशेष महत्त्व है,
पाषाण-पूजा की विफलता का मिला जो तत्त्व है ॥८५॥

जब जागते हैं भूत सब तब योगियों की रात है,
भौतिक निशा में संयमी का जागरण विख्यात है।
यह गीत गीता का मुझे अविगीत ध्रुव फल दे चुका,
जिसकी प्रतिष्ठा के लिए यूरोप का भी शिर झुका ॥८६॥

यों सोचते ही सोचते वह रात पूरी हो चली,
शिशु के विचारों से मची कुलपालकों में खलबली।
नास्तिक समझ कर निज तनय को प्रेमसागर में पगी,
कुलदेवता गृहदीपिका माता विकल होने लगी ॥८७॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

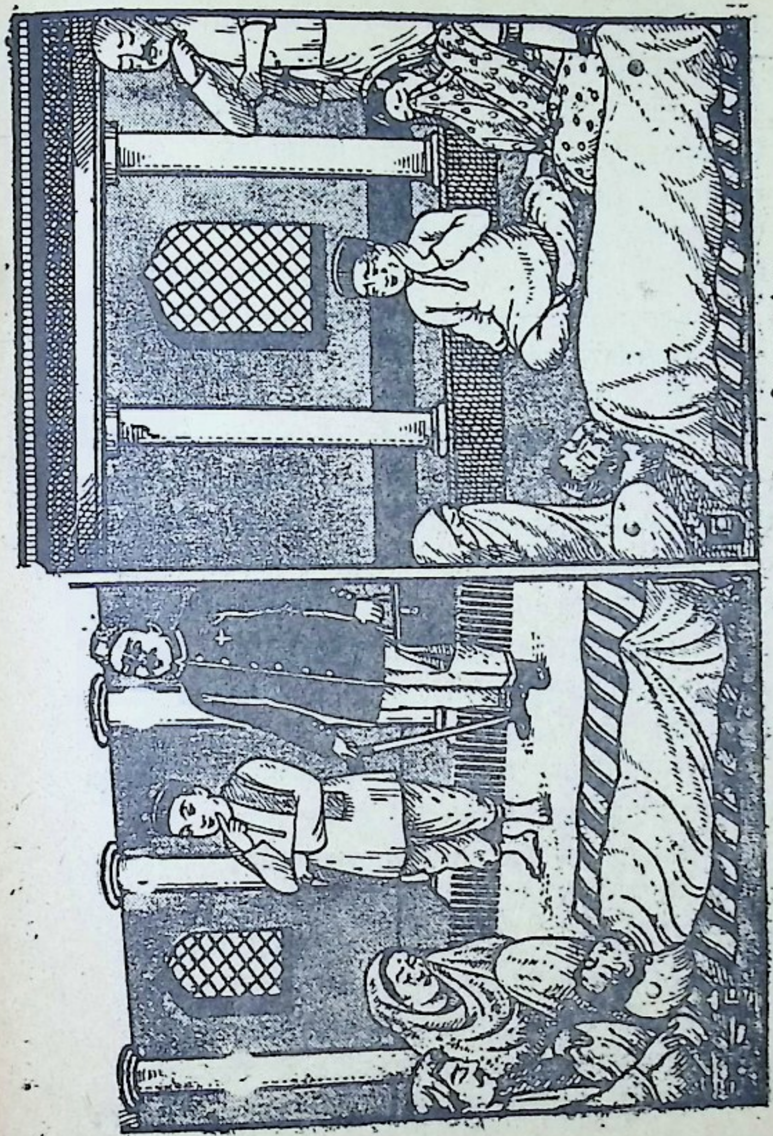

चाचा और बहन की मृत्यु पर चिन्तनशील मूलशंकर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कुछ रोज़ साधारण किताबें नवयुवक पढ़ता रहा,
सोपान पर उन्नति-शिखर के शान्ति से चढ़ता रहा।
पर आन्तरिक उसका न जाने रस किधर जाने लगा,
वह बुत्परस्ती की प्रथा से वेदना पाने लगा ॥८८॥

शिवरात्रि का वह प्रश्न जिसने जोश फैलाया नया,
गुजरात के गुरु पण्डितों के सामने रक्खा गया।
पर सब निरुत्तर हो रहे कुछ भी न कोई कह सका,
वाग्वीर यदि कोई हुआ तो दो मिनट कह कर थका ॥८९॥

शैशव-सुलभ आमोद से सम्बन्ध अपना तोड़ के,
चिन्तानिरत रहने लगा वह भान तनु का छोड़ के।
क्षत में लगाती क्षार को फिर एक घटना हो गई,
वात्सल्य रस की पूर्ति हा! भगिनी सदा को सो गई ॥९०॥

कुछ रोज़ में जाता रहा आनन्द जो कुछ था बचा,
क्षणभंगशाली देह तज कर चल बसे प्यारे चचा,
रख हाथ भाल विशाल पर तब मूलशंकर ने कहा।
यह काल का विकराल बल अब तो नहीं जाता सहा ॥९१॥

द्विजभवन में उस वक्त रोना पीटना जारी हुआ,
शोकाग्नि में सुख के हवन से शोर गुल भारी हुआ।
ढाती हुई निज वेग से आनन्दतरु के मूल को,
आपत्ति-सरिता वह चली कर व्याप्त कश्मल-कूल को ॥९२॥

नवयुवक का संबंध चचा के साथ में ही गत हुआ,
दृढ़ धैर्य का टूटा कवच दिल शोक से आहत हुआ।
आँसू न लेकिन एक भी उसके विलोचन से बहा,
पाषाण-भेदी शोक को पाषाण हो उसने सहा ॥९३॥

है निज जनों की अश्रुधारा प्रेत को देती जला,
इन धार्मिकों के सूत्र को वह तोड़ता कैसे भला।
अतएव सब रोते रहे वह शोक-विष से क्षीव-सा,
यों सोचते मन में लगा होकर अचल निर्जीव-सा ॥९४॥

माखन, मलाई, दुग्ध, दधि, मधु आदि पाकर पुष्ट हो,
रति-सेज में कामिनियों के स्पर्शरस से तुष्ट हो।
यदि मानवों का अन्त में यों ध्वस्त होता देह है,
तो क्षणभंगुर भोग से बेकार करना स्नेह है ॥९५॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

है रूप चंचल फेन-सा जल-बुद्बुदों-सी वेदना,
संज्ञा निरी मृगतृष्णिका संस्कार कदली-सा बना।
विज्ञान मायासदृश है इस बुद्ध के उपदेश से,
नर मुक्त क्यों होते नहीं दुर्वासना के क्लेश से ॥९६॥

जो सूत्र के हैं शत्रु जिनके स्थूल पेट विशाल हैं,
उच्छिष्ट देकर नारियों को प्राप्त करते माल हैं।
उन मण्डलीशों की कमाई काम कब तक आयगी,
जब मौत उनको भी उठा कर एक दिन ले जायेगी ॥९७॥

अतिमूल्य उद्यम से रसायन प्राप्त करते लोग हैं,
स्वर्णादि की आयुष्य करते भस्म का उपयोग हैं।
अक्षय्य इससे किन्तु फल मिलता नहीं है वाक़ई,
यह मौत धन्वन्तरि तथा लुकमान तक को खा गई ॥९८॥

इस मृत्यु के आतंक से होता कलेजा चाक है,
अमरत्व कैसे प्राप्त हो धन तो धरा की ख़ाक है।
अपने सिकन्दर ले गया चलते समय क्या साथ में?
क्या रह गया था अन्त में उस गजनवी के हाथ में ॥९९॥

पीयूष अधरों में स्त्रियों के वास करता है सही,
कविराज श्री श्रीहर्ष, माघादिक बताते हैं यही।
पर औरतों की पल्टनों से भीत होगा काल क्या,
उस लखनउ के था हुआ वाजि़दअली का हाल क्या ॥१००॥

दुष्कर्म जिनके हिन्द में क्या विश्व में विख्यात हैं,
जो वासना का नाच नंगा देखते दिन रात हैं।
वे साधु भण्डारे उड़ाकर धूल में मिल जायेंगे,
उन चेलियों के मुखकमल रक्षा नहीं कर पायेंगे ॥१०१॥

सहचर बना पत्नी प्रकृति का काल खुद यजमान है,
विश्वम्भरा ही वेदिका है प्राण हव्य प्रधान है।
तनुयष्टि समिधा सिद्ध है आर्त्विज्य करते रोग हैं,
यह यज्ञ कैसा है कि जिसमें पशु बने हम लोग हैं ॥१०२॥

गज अश्व मोटर पालकी रहते यहीं हैं सब धरे,
इस शायरी में कीमती जज़्बात कितने हैं भरे।
यों कह रहा है आसमाँ यह सब समां कुछ भी नहीं,
बस पीस दूंगा एक गर्दिश में जहाँ कुछ भी नहीं ॥१०३॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

यद्यपि मरण है प्रकृति तो भी हो रहा है भय मुझे,
पर यत्न करने से मिलेगी मृत्यु पर भी जय मुझे।
मुक्षीय मृत्योर्मामृतात् यह वेद का सिद्धान्त है,
फिर भी न जाने चित्त मेरा हो रहा क्यों भ्रान्त है ॥१०४॥

हा दीन पशु पर मारते हैं बेंत चमड़े के लिए,
निज पुत्रियां तक वेचते हैं धन कमाने के लिए।
चर्बी मिला घृत विक रहा है देख लो बाज़ार में,
पर मृत्यु इनको भी डुबो देगी अनन्त अपार में ॥१०५॥

जीवेम शरदः शतमदीनाः वेद का यह घोष है,
पर तीस साल नहीं बिताता आर्यजीवनकोष है।
भगवान मृत्युञ्जय हमारे हैं तदपि हम मर रहे,
निज को वचाने की न कोशिश मौत से हैं कर रहे ॥१०६॥

पाऊँ कहाँ से मैं सुधारस अमर होने के लिए,
या स्वर्ग में जा कर रहूँ यह कष्ट खोने के लिए।
पर स्वर्ग को तो क्या करूं जाता न कोई मेल है,
है भी कहीं कुछ स्वर्ग या यह कल्पना का खेल है ॥१०७॥

शिव-चरण में मैंने करोड़ों विल्वपत्र चढ़ा दिये,
दस लाख मृत्युञ्जय जपा शशिवार को व्रत भी किये।
अब भी अभागी मृत्यु पाकर त्रास यदि भागी नहीं,
तो आज से शिव-लिङ्ग का यह विप्र अनुरागी नहीं ॥१०८॥

अमरत्व सच्ची चीज है या आसमाँ का फूल है,
अब तक किसी को है मिला या मनचलों की भूल है।
विश्वास का संशयनिरत के नष्ट होता सत्त्व है,
पर लोक संशय विना पाता न कोई तत्त्व है ॥१०९॥

सङ्कल्प और विकल्प यों वहु भांति वह था कर रहा,
भावी प्रकाशक सत्य का अमरत्व पर था मर रहा।
कुछ देर में उस धैर्यधन की ध्यान-मुद्रा लग गई,
ध्रुव मृत्यु तक को मारने की धुन सवार हुई नई ॥११०॥

तब चित्त उसका वृत्तियों के विलय से अभ्रान्त था,
थे सुप्त मानो मीन सब निर्मल सरोवर शान्त था।
या वातहीन प्रदेश में वह जगमगाता दीप था,
भारत-मही के पुण्य-वल से दिव्य बोध समीप था ॥१११॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

यद्यपि युवक ने उचित शिक्षा योग में पाई न थी,
प्रतिभा अलौकिक दर्शनों की चित्त में आई न थी।
तो भी पुराने जन्म के संस्कार का उद्‌बोध था,
सो ध्यान से उसने किया बहिरिन्द्रियों का रोध था ॥११२॥

एकाग्रता से शान्तिमय अन्तर्जगत में घूमता,
निर्गुण निराश्रय तत्त्व को मलहीन मन से चूमता।
देखा गया वह दर्शकों से कपिल और कणाद-सा,
अव्यक्त भीतर गूंजता था दिव्य वैदिक नाद-सा ॥११३॥

अन्तर्जगत् को छोड़ उसकी दृष्टि जब बाहर लगी,
तब विश्व के कल्याण-हित सोई हुई करुणा जगी।
काली अविद्या की निशा में ब्रह्म के आलोक से,
देखा विबुध ने स्वप्नसम ब्रह्माण्ड आवृत्त शोक से ॥११४॥

ये क्रान्तिकारी वाक्य वह अव्यक्त स्वरमें कह उठा,
पार्विक शरद् के चन्द्र से मानो सुधारस बह उठा।
जय वेद की, जय धर्म की, जय भद्र भारतवर्ष की,
जय क्रान्ति की, स्वातन्त्र्य की, जय जाति के उत्कर्ष की ॥११५॥

अभ्यास श्रुति का छोड़ देना यह महा अज्ञान है,
आचार पालन पर नहीं जाता हमारा ध्यान है।
सत्कर्म से रुचि हट गई आलस्य के हम दास हैं,
सो मौत मानो है गधी उसके लिए हम घास हैं ॥११६॥

अब गव्य घृत के स्थान में है घृत वनस्पति का अड़ा,
शुचि सोम रस की ठौर में है मद्य का प्याला पड़ा।
अब होम के उपलक्ष्य में जाता पिया सिगरेट है,
आश्चर्य क्या यदि मृत्यु का होता यहां आखेट है ॥११७॥

इन कारणों से ही हमारे देश का यह ह्रास है,
विश्व का शासक रहा वह दूसरों का दास है।
आजादगी में मूर्खता का भी बड़ा सम्मान है,
परतन्त्रता पाण्डित्य की रहने न देती शान है ॥११८॥

सम्बुद्ध होकर बुद्ध ने क्षय कर दिया था क्लेश का,
उस सार्वभौम अशोक ने भी शोक खोया देश का।
मैं मातृ-भूपर क्यों न जीवन-पुष्प न्योछावर करूं,
ख़ाली पड़ा है कोष इसका क्यों न विद्या से भरूं ॥११९॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अच्छा समझ में आगया उपदेश जो श्रुति ने दिया,
हो ब्रह्मचारी देवगण ने मृत्यु को उपहत किया।
विषमय विषय का त्याग कर अमरत्व पाना है मुझे,
वैदिक सनातन धर्म का डङ्का बजाना है मुझे॥१२०॥

प्रथम सर्ग समाप्त

संन्यास की दीक्षा लेते हुए : मूलशंकर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दूसरा सर्ग

एक उत्तरापथ में स्थापित मठ की शान निराली है,
कवि ने अपनी क्रान्तदर्शिनी दृष्टि उसी पर डाली है।
इसकी ऊँची दीवारों पर गैरिक रङ्ग सजाया है,
या निर्धन हिन्दू जनता का लेकर खून लगाया है ॥१॥

बैठे हुए इधर कमरे में भंग घोटने वाले हैं,
कितने घरवालों के इनने कर डाले मुँह काले हैं।
भंग भवानी के गोलों से किला कौनसा तोड़ेंगे,
या स्मृति से वञ्चित होकर ये अपना हो शिर फोड़ेंगे ॥२॥

गंग भंग दोनों ही बहनें साथ शम्भु के रहती हैं,
गिरिजा के सापत्न्यदुःख को प्रणयमन्त्र से सहती हैं।
पाशमुक्त शिवरूप हुए ये भंग इसी से पीते हैं,
यजमानों के भोजन का ये महाप्रलय कर जीते हैं ॥३॥

इधर अखाड़े के भीतर उद्दण्ड दण्ड ये पेल रहे,
बारह मन के पत्थर अपने परुष वृक्ष पर झेल रहे।
बालक और वृद्ध पति जिनको मुदित नहीं कर पाते हैं,
उन प्रमदाओं के यौवन को ये सुखरूप बनाते हैं ॥४॥

(शकर काँटा लगे न कंकर) नाद इधर से आता है,
धुँआं सालता हुआ घ्राण को सुलफे के गुण गाता है।
(खूब लगे दम और मिटे गम) शब्द सुनाई देता है,
कोई साफी सहित मित्र के चिलम हाथ से लेता है ॥५॥

भोजन इधर बनाने वाला मुँह को खूब फुलाता है,
कभी सूंघता है पोता है और कभी कुछ खाता है।
पाचक ने षट्कर्म छोड़ कर शूद्रधर्म अपनाया है,
लेकिन भाल और कन्धे पर चन्दन सूत्र जमाया है ॥६॥

कस्तूरी केसर से सुरभित खीर आग में पकती है,
हलुआ की हालत लिखने में आप लेखनी थकती है।
शिरमुण्डों के खाकर इनको पेट बहुत तन जाते हैं,
इसी लिए उपवीतभार वे शायद नहीं उठाते हैं ॥७॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दीवारों पर चित्रकला का दृश्य दृष्टि में आता है,
जोकि कृष्ण को चोर और व्यभिचारनिरत बतलाता है।
नहीं बद्ध है मुक्त न कोई धर्म कर्म की नहीं प्रथा,
स्थूलाक्षर में अंकित है यह मोहमयी वेदान्तकथा ॥८॥

नृत्यभवन में हारमोनियम अपनी छटा दिखाते हैं,
पाँचों ही अध्याय रास के इन पर गाये जाते हैं।
ललनाओं के ललित हाथ से तबले भी बज जाते हैं,
मानो भोगवीर सन्तों को वे धिक्कार सुनाते हैं ॥९॥

वंशी की आवाज कान में पड़ जाती है कभी कभी,
केशव के कदम्बकानन की आ जाती है याद तभी।
खचित गलीचे पर मेहंदी का लगा हुआ रंग यहाँ,
पता नहीं किस भाग्यवती के हुआ खेद का भंग यहाँ ॥१०॥

देखो मनोहारिणी खुशबू कमरे से क्यों आती है,
नागिन सी अपनी वेणी को भीतर कौन सजाती है।
इसके विष का वेग रोकना वाम हस्त का खेल नहीं,
दोष साधुओं का क्या, उनका यदि संयम से मेल नहीं ॥११॥

इधर साधु शतरञ्ज खेलते हैं दुनियां का ध्यान नहीं,
हार जीत की धुन में इनको अपना भी कुछ भान नहीं।
व्यसन मृत्यु से भी बढ़ कर है मनु ऐसा फरमाते हैं,
ज्ञानानल से किन्तु कर्म की स्वामी भस्म बनाते हैं ॥१२॥

इधर स्वरूपानन्द पड़ा है विष के तुल्य वचन वाला,
उधर महिष सा पुष्ट खड़ा है सुखानन्द बिलकुल काला।
पुजारी लड़का सुडौल है बहुत मनोहर लगता है,
कौन कहे किसका नसीब इस मधुर मूर्ति से जगता है ॥१३॥

भोजन से उठ कोई अपना चीवर तङ्ग खोलता है,
अन्नपचनहित भीमसेन का जयजयकार बोलता है।
कुम्भकर्ण के गाकर कोई गुण प्रमोद से सोता है,
कोई भङ्ग छानने वाला निज रुमाल को धोता है ॥१४॥

किसी किसी के पास औरतें आकर हाथ दिखाती हैं,
पाणिग्रहण साधु से मानो अपना नया रचाती हैं।
जिसके धारण से जीवन है और पतन से मरना है,
साधुजनों को उसी सत्त्व का दान मठों में करना है ॥१५॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मठाधीश भूषित बैठक में श्री महन्त जो बैठे हैं,
पीकर भंग ब्रह्मचिन्तन में एकतान हो पैठे हैं।
रत्ती भर उपवीत हटा तो एक सेर की माला है,
मानो चिड़ीमार ने अपना जाल कण्ठ में डाला है ॥१६॥

ओष्ठपुटों को अरुण बनाते मुख से पान चबाते हैं,
जैसे कभी विडाल प्रेम से हत मूषक को खाते हैं।
एला और लवङ्ग हाथ में जो इनके दे जाती है,
उसे पूछने पर वह अपना परिचय नहीं बताती हैं ॥१७॥

छूने से घिस गये पैर पर पेट फूल कर ढोल हुआ,
कितनी सुन्दरियों से इनका विपुल अङ्ग अनमोल हुआ।
कक्षोपस्थ छोड़ कर इनने मुण्डन आज कराया है,
ढाई मन से गुरुतर तनु से मानो गुरुपद पाया है ॥१८॥

इनके चरणकमल छूने को नव वनितायें आती हैं,
जीवब्रह्म के ऐक्यवाद की शिक्षा अनुपम पाती हैं।
कभी कभी उच्छिष्ट भोग भी धन्य प्राप्त कर होती हैं,
लोक और परलोक भ्रष्ट कर धर्म अर्थ को खोती हैं ॥१९॥

मरने पर गड़ने वालों के बैठे हों सिरताज जहां,
रहने भला पायेगी क्यों कर ठाठ बाट की कमी वहां।
द्वारपाल बोला यति कोई दर्शन करने आया है,
आने दो भीतर स्वामी ने बड़ा हुक्म फरमाया है ॥२०॥

दण्डी हुआ उपस्थित आकर एक महावलशाली था,
पाप-दनुज के दलन हेतु वह सचमुच ही वनमाली था।
सम्भव है पिस जाय अचल भी सीने से टकराते हो,
कुण्ठित हों पञ्जे मृगेन्द्र के अंगुलियों में आते ही ॥२१॥

खोज रहा था कौन लक्ष्य वह पास एक मृगछाला थी,
प्रणवमन्त्र के जप गिनने को कर में हल्की माला थी।
तेज सफर से श्रान्त गात्र से बहुल पसीना ढलता था,
मानो भीतर दिव्य तेज से भौतिक पिण्ड पिघलता था ॥२२॥

निर्वासित होकर मानस से जाता कहाँ अनाथ हुआ,
इसी लिए कषाय चीवर में रहकर उसके साथ हुआ।
क्षौरकर्म से यति ने अपने शिर का भार उतार दिया,
किन्तु भार भारतमाता का भारी उससे उठा लिया ॥२३॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अभिवादन के बाद प्रथम तो आसन यति को उचित दिया,
कहो किधर से कैसे आये फिर महन्त ने प्रश्न किया।
सच्चे यतियों का अन्वेषक नम्र भाव से बोल उठा,
लोगों के श्रुतिपुट में मानो अमित अमृतरस घोल उठा ॥२४॥

भगवन् अजर अमर आत्मा क्या नाम रूप को पाता है,
पर यह क्षुद्र शरीर आपका दयानन्द कहलाता है।
पूर्णानन्द मस्करी से यह वेष भिक्षु का प्राप्त हुआ,
सरस्वती है योगपट्ट बस परिचय यहीं समाप्त हुआ ॥२५॥

भटक रहा हूँ पुण्यभूमि में लक्ष्य हुआ है सिद्ध नहीं,
क्या कुछ कर्मयोग में त्रुटि है अथवा भाग्य समृद्ध नहीं।
देहपतन से त्रस्त नहीं मैं नहीं ध्येय को छोड़ूंगा
कार्यसिद्धि के लिए सितारे तक अनन्त के तोड़ूंगा ॥२६॥

योगाभ्यास अमर होने का साधन है मैं सुनता हूं,
और उसी को मृत्यु-पिशाची से बचने को चुनता हूं।
कहां योगियों को पाऊँ मैं, पता नहीं कुछ चलता है,
इसी घोर चिन्ता से मेरा चित्त चिता सा जलता है ॥२७॥

निराधार नभ में फिरते जो नहीं क्षुधा से डरते हैं,
दक्ष देह के परिवर्तन में नहीं कभी जो मरते हैं।
ऐसे महासिद्ध लोगों का बनने को अनुगामी मैं,
दुर्गम शैल वनों में घूमा पर निराश हूँ स्वामी मैं ॥२८॥

अगर पता उनका निश्चित हो कृपया मुझे बता देना,
राह दिखा भूले भटके को महादान का फल लेना।
यदि पातञ्जल योग शास्त्र का तत्त्व आपने छाना हो,
शिक्षा दें कुछ मुझे आप ही मेरा कहीं ठिकाना हो ॥२९॥

इतना कह कर शहदजबाँ वह आगन्तुक खामोश हुआ,
तम्बाकू पहुंची कुछ मुँह में तब महन्त को जोश हुआ।
बीच बीच में भङ्ग भवानी अपना रङ्ग दिखाती थी,
अभ्यागत से विकट प्रश्न का उत्तर उचित सिखाती थी ॥३०॥

मठाधीश ने कहा आप को किसने मूढ़ बनाया है,
अथवा नियत अविद्या ने यह भारी भ्रम फैलाया है।
शश का शृङ्ग, भेक की रसना, दुग्ध कच्छपी का पाने,
होता है निराश चलता है पुष्प व्योम का जो लाने ॥३१॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आशा का जो दास बना वह सब का दास बनेगा ही,
आशा जिसकी दासी है वह दास्य विश्व को देगा ही।
याद करो पहले आशा से ग्रस्त पिङ्गला रोई थी,
लात मार कर वह आशा पर आखिर सुख से सोई थी ॥३२॥

एक बार भगवान बुद्ध से वृद्धा दीन पुकार रही,
मृत मेरा इकलौता बेटा जीवित हो यह बात कही।
ले आओ तण्डुल उस घर से जहाँ न कोई भी मृत हो,
गौतम का यह वचन-रसायन चखकर तुम भी स्वस्थ रहो ॥३३॥

अश्वत्थामा बली व्यास श्री परशुराम कृप नामी हैं,
और विभीषण हनूमान ये सात अमरपथगामी हैं।
अष्टम अमर नहीं हो सकता तुम कैसे हो जाओगे?
जो पाने की चीज नहीं है उसे कहाँ से पाओगे ॥३४॥

गला न सकता जल आत्मा को आग न इसे जलाती है,
नहीं काटते अस्त्र हवा भी नहीं सुखाने पाती है।
पञ्च भूत का पिण्ड बना जो यह पञ्चत्व पायेगा ही,
चार जनों के कन्धे पर चढ़ यह कमबख्त जायेगा ही ॥३५॥

आत्मा अपने आप अमर है इसके लिए यत्न ही क्या?
ध्वंस गात्र का निश्चित ही है चाहे लाख लगे टीका?
जो उत्पत्तिधर्म वाला है वह निरोध को पाता है,
तथागतों का धर्मचक्षु यह क्यों न तुम्हें मिल जाता है ॥३६॥

आत्मा शुद्ध बुद्ध निर्मल है इसका योग करेगा क्या,
यह शरीर अत्यन्त मलिन है इस में शुद्धि भरेगा क्या।
मित्र तुम्हारी चित्तवृत्ति क्यों तरफ योग के जाती है,
कहो तुम्हें किस फल की आशा इसकी ओर झुकाती है ॥३७॥

दर्शन के सौभाग्यविधाता भट्ट कुमारिल कहते हैं,
लोग योगियों के चक्कर में पड़ कर क्यों दुःख सहते हैं?
दूर सूक्ष्म आदिक के ग्रह में कुछ अतिशय है कहीं कहीं,
नहीं श्रोत्र का रूप विषय है और चक्षु का शब्द नहीं ॥३८॥

अगर मोक्ष की चाह हुई तो व्यर्थ योग का करना है,
ब्रह्मबुद्धि को नाव बनाकर भव-सागर को तरना है।
साक्षी मात्र एक चेतन है पाप पुण्य का स्पर्श नहीं,
अन्तःकरणधर्म कामादिक हैं क्या हुआ विमर्श नहीं ॥३९॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भिक्षुक से भय पाकर किस ने अन्न पकाना छोड़ा है,
मृग के डर से किस किसान ने खेती से मुंह मोड़ा है।
मृत्यु रोग की चिन्ता से भवभोग छोड़ क्यों भागे हो,
नव यौवन में बने भिखारी सचमुच बड़े अभागे हो ॥४०॥

दर दर भीख मांगने वाले कौन सिद्धि पा जाते हैं,
टुकड़खोर सौ सौ बातें सुन मुफ्त रोटियां खाते हैं।
होश करो तुम को माता ने इसी लिए क्या पाला था ?
आर्द्र वसन का परिवर्तन कर स्वच्छ शयन में डाला था ॥४१॥

यह शरीरसम्पत्ति तुम्हारी और वेष भिखमङ्गों का,
यह दैवी प्रतिभा का वैभव और ढङ्ग यह नङ्गों का।
उन्नति और पतन के तुम में धर्म विरुद्ध मिले हैं क्यों,
बेला और आक उपवन में उग कर साथ खिले हैं क्यों ॥४२॥

जैसे तुमने छोड़ दिया घर वैसे यदि सब छोड़ेंगे,
कामचोर हो बने मुखन्नस शादी से मुंह मोड़ेंगे।
बिना लोकसंग्रह के तनु का कुछ व्यवहार चलेगा क्या,
कर्म तैल से रहित विश्व में जीवनदीप जलेगा क्या ॥४३॥

जनकादिक ने भी तो देखो सिद्धि कर्म से पाई थी,
जैमिनि शबर कुमारिल ने भी कीर्ति इसी की गाई थी।
वनिताओं के मधुर अधर पर अमर आप ही मरते हैं,
तुम जैसे पागल हो उनका तिरस्कार यों करते हैं ॥४४॥

किन्तु नियत है फल कर्मों का नहीं कभी जो टलता है,
होनहार होकर रहती है वश न किसी का चलता है।
माता का दयनीय हृदय वह क्या आशीष तुम्हें देगा,
पुत्रविरह में अश्रुमुखीका हो हा अञ्चल भीगेगा ॥४५॥

मैं भी सन्तों के चक्कर में पड़ कर ही घर खो बैठा,
आवाहित अपनी दुलहिन से हाय हाथ मैं धो बैठा।
लेकिन दुःख विशेष नहीं मैं मठाधीश हूं बना हुआ,
काञ्चन सी कामिनियों के मैं जीवन में भगवान हुआ ॥४६॥

यद्यपि अभी तुम्हारे दिल की थाह नहीं मैं पाता हूं,
पर तुम को विश्वस्त मानकर सच्चा मन्त्र बताता हूं।
भोजन पान विहार लोक में तीन रत्न कहलाते हैं,
क्यों इनके विपरीत दूसरे सौगत रत्न बताते हैं ॥४७॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

यहीं रहो मैं तुम्हें आज से अपना शिष्य बनाता हूँ,
लो यह कण्ठवासिनी माला अभी तुम्हें पहनाता हूँ।
उत्तराधिकारी मठ के तुम हुए सभा में घोषित हो,
मत भटको भीषण जङ्गल में दिव्य भोग से पोषित हो ।४८॥

यों महन्त का भाषण सुनकर धन्य धन्य कह उठी सभा,
विस्मय से निहारते थे सब आगन्तुक की अतुल प्रभा।
भावी पट्टशिष्य के सम्मुख हुई उपस्थित आली थी,
कर में कुछ प्राशन देने को लिए स्वर्ण की थाली थी ॥४६॥

लेकर कुछ आशा आया था खो कर उसको चलता हूँ,
फिर भी मैं आशावादी हूं नहीं हाथ ही मलता हूँ।
अन्तिम बार नमो नारायण दयानन्द ने यही कहा,
दिव्य श्रोत्र से सुना वाक्य यह अब भी नभ में गूंज रहा ॥५०॥

मठजलधर की आड़ हटा कर पथिकसूर्य फिर चमक पड़ा,
पहले से भी दुस्सह उसका तेज हो गया अधिक कड़ा।
हिमपर्वत की ओर बढ़ा वह योगिजनों से मिलने को,
मानों अब तो दहशत से थीं जड़ें मृत्यु की हिलने को ॥५१॥

हुआ पसीना श्रम से उसकी तनु तरवतर हो रही थी,
दीन निराशा उसकी धृति से होकर भग्न रो रही थी।
लोहित से लोहित पग क्यों थे कांटों ने पीड़ा दी थी,
स्वयं धीरता ने आकर या मेहंदी वहां लगा दी थी ॥५२॥

दण्डी कर में निहित दन्ड से क्या कुछ सफर खर्च लेगा,
अगर कहीं मिल जाय मृत्यु तो उसका शीश कुचल देगा।
वृक्ष हवा के झोंके से हिल यति पर फूल चढ़ाते थे,
उन पर बैठे पक्षी उसकी हिम्मत के गुण गाते थे ॥५३॥

झुककर चला किसी स्थल में वह कहीं कूदकर शीघ्र बढ़ा,
और कहीं ऊँचे टीलों पर वीर उछल बेरोक चढ़ा।
उसके पैरों की आहट से सोते सिंह जागते थे,
देख हाथ में दण्ड भयंकर दुम को दबा भागते थे ॥५४॥

बेर झाड़ियों के वह यात्री कहीं कहीं खा लेता था,
दिन भर में दो चार कन्द भी किस्मत से पा लेता था।
सिंहवेग से पहुंच गया वह पर्बत की उपत्यका में,
जैसे हनुमान पहुँचे थे तज कर शंका लंका में ॥५५॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

एक पहाड़ी नदी वहां पर घरघर रव से बहती थी,
खबरदार छूना न मुझे यों मानो सबसे कहती थी।
उसका घोर शोर मृदु रव को स्थित नजदीक निगलता था,
नीति पड़ोसी मत्स्यसंघ की दीनघातिनी चलता था ॥५६॥

कहीं कहीं तो थाह नहीं थी कहीं हाथ भर पानी था,
कहीं बर्फ का ढेर शिला की दृढ़ता का अभिमानी था।
बहता था निर्बाध कहीं जल और कहीं टकराता था,
कहीं महाझष के मुँह में पड़ दीन मीन चकराता था ॥५७॥

दीनों की आशा सी लहरें उठ उठ कर मिट जाती थीं,
चपल चञ्चला की सत्ता का भू पर दृश्य दिखाती थीं।
लहर नदी से अलग चीज थी अथवा उनमें भेद न था,
इसका समाधान दुर्लभ था ऐसी थी यह जटिल कथा ॥५८॥

चञ्चल मीन नेत्र थे मानो पतंगराजि रशना सी थी,
विषम सलिल की खर धारा से आप लोलवसना सी थी।
धराधीश को नदी सुता क्या पावन नृत्य दिखाती थी,
या अपने प्रेमी सागर को प्रियता पाने जाती थी ॥५९॥

पर्वतेन्द्र की प्यारी पुत्री नदी खुली क्यों छूटी थी,
शादी में देरी होने से क्या कुनबे से टूटी थी।
अथवा पराधीन भारत के मलिन भाग को धोने का,
हुक्म दिया था उसे पिता ने ताप भूमि का खोने का ॥६०॥

पानी उसका चट्टानों को तोड़ फोड़ कर बहता था,
तुम भी विघ्न हटा दो पथ में यों दर्शक से कहता था।
शीतल जल की शक्ति देखकर चित्त चकित सा होता था,
दृष्टिमार्ग से निकल वहां वह उग्र वृत्तियां धोता था ॥६१॥

परियों के कपोल से जिनके चरणतलों की उपमा थी,
शायर के काल्पनिक जगत् में वर्णित जिनकी सुषमा थी।
वे उसके तट पर प्रमदाएँ जल भरने को आती थीं,
लहरों में निज दृष्टिसृष्टि की तरल भावना पाती थीं ॥६२॥

आस पास के पेड़ नदी के तीव्र वेग से गिरे हुए,
बहते थे उसके भीतर ही मृदु कुसुमों से घिरे हुए।
है शरीर का अन्त भस्म यों स्वयं वेद ने बतलाया,
तो उस वानस्पत्य देह ने जलविसर्ग क्योंकर पाया ॥६३॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उत्तर मुझ से रक्षित था पर खैबर ने क्यों पाप किया,
यवनों को प्रवेशपथ देकर क्यों शिर पर अभिशाप लिया।
इस चिन्ता से अश्रु विकल जो शैलराज ने बरसाये,
करुणा से मीठे होकर वे नदीरूप में जुड़ आये ॥६४॥
गोरी को गोरा यश देकर करने को निज मुँह काला,
विजयहीन जयचन्द्र भूप ने वह अनर्थ क्यों कर डाला ?
उसको पैदा कर धरणी ने हासिल किया कलंक बड़ा,
उसको सागर तक धोने का सरिता ने प्रण किया कड़ा ॥६५॥
उसके तट पर दयानन्द का सन्ध्यावन्दन हुआ सही,
किन्तु क्षुधा की हालत लिखते आज लेखनी कांप रही।
तरणकला से और प्लवन से यति ने काम लिया ही था,
सरस्वती ने सरस्वती को आखिर पार किया ही था ॥६६॥
कहीं गुहा में शायद होंगे सिद्ध तपस्वी छिपे पड़े,
या शिखरों पर बैठे होंगे महायोग में निपुण बड़े।
इसी लक्ष्य से प्रेरित होकर चढ़ा वीर गिरिवर पर था,
नहीं चेहरे पर जर्दी थी दिल में नहीं जरा डर था ॥६७॥
अमर धर्म के अन्वेषक ने लोचन विमल खोल देखा,
भारत और चीन की स्थापित सीमा की पर्वतलेखा।
परिस्तान था सजा हुआ या क्रीड़ापर्वत कुदरत का,
या कवियों की हृत्तन्त्री की कारण था वह हरकत का ॥६८॥
वहां पथिक ने क्या देखा मैं गीत प्रकृति का गाऊँ क्या,
अपने इस कमजोर हाथ से उसका चित्र बनाऊँ क्या ?
यहां कड़ाके की सर्दी से दहशत भी घबराती थी,
उन शृङ्गों पर मानव तो क्या नहीं कल्पना जाती थी ॥६९॥
बर्फीले रीछों पर उसका पैर कहीं पड़ जाता था,
और कहीं वह तुहिनपुञ्ज में घुटनों तक गड़ जाता था।
कभी नेत्र में हिमकण आकर क्षुब्ध हवा में गिरते थे,
योगिजनों की या तलाश में अणु मन कब से फिरते थे ॥७०॥

स्नानपान हित जनता को जो बुला रही थीं लहरों से,
जहां तहां था शोभित घर उन मनोहारिणी नहरों से।
लतालोलता के न व्याज से हूरों का न इशारा था,
मानो यवनों के बहिश्त का जीता हुआ नजारा था ॥७१॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

काले पीले लाल श्वेत फूलों का गिरि पर डेरा था,
मानो चारों ही रेसों का निर्भय वहां बसेरा था।
शाखा थीं शत शत धाराएं नदियां उसमें श्रुतियाँ थी,
उनसे निकली हुईं नालियां इधर उधर की स्मृतियां थीं ॥७२॥

पीत लता की जड़ में काला कुण्डल बांधे सर्प पड़ा,
चीन सुन्दरी के चरणों में लोहपाश क्या लगा कड़ा।
संन्यासी के मुण्ड सरीखे पत्थर गोल कहीं पर थे,
हूरों को तलाक देकर या आये वहां पयोधर थे ॥७३॥

ठौर नहीं पाई मुगलों ने नहीं ब्रिटिश का यहां पता,
विश्ववन्दिता पर्वतपति की वसुधा की है अनर्घता।
मारुत से पूरित रन्ध्रों से वंश गीत यह गाते थे,
या आगन्तुक के स्वागत में वंशी प्रथम बजाते थे ॥७४॥

चारों ओर वृक्ष मञ्जुल थे मानो दर्शकवृन्द खड़ा,
क्या दुकानदार करते थे खगरव-मिष से शोर बड़ा।
मध्य भाग में नीरव वल्ली मृदु समीर से हिलती थी,
वर्मी नृत्यकला से उसकी उपमा पूरी मिलती थी ॥७५॥

तप्त अछूतों की आहों से पत्थर वहां पिघलते थे,
शिलाजीत थी यः करुणा का वे रस भूरि उगलते थे।
पोंछ रहे थे उन्हें कहीं लंगूर हाथ से तन्मय हो,
मानो आश्वासन देते थे भद्र निकट है, निर्भय हो ॥७६॥

पितरों की मानसी सुता वह मेना गिरि की रानी है,
है मेनाक वीर इसका सुत प्यारी सुता भवानी है।
इसे प्रजापति ने शैलों का शहंशाह बनाया है,
दोस्ती है इसकी सुमेरू से वह पुराण की माया है ॥७७॥

महिषों के शृङ्गों की टक्कर से चट्टान टूटती थी,
कहीं कुञ्जरों के दन्तों से मूलक सदृश फूटती है।
उसका घोष मृगी के पातक गर्भपात का लेता था,
फिर भी पर्वतराज उचित क्यों दण्ड न उसको देता था ॥७८॥

वह पहाड़ था या कपूर का ढेर किसी ने लगा दिया,
नभ को छोड़ सितारे ने या धरणी का अवलम्ब लिया।
अथवा प्रियदर्शी अशोक का यशः पुञ्ज एकत्रित था,
या दर्पण भारतमाता के लिये बना वह चित्रित था ॥७९॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बद्रिनाथ पर पुच्छ हिलाकर चमरी व्यजन डुलाती थी,
या अपने हसीन ग्राशिक को ग्रपनी ग्रोर बुलाती थी।
चीनवधू के केशपाश से हार पुच्छने पाई थी,
इसी लिए वह उस कातर को वहां छिपाने लाई थी ॥८०॥

धुआंधार चारों भागों में दृष्टिविरोधी कुहरा था,
क्या सिगार पीकर पहाड़ वह धूम उगलता गहरा था।
आंखें फाड़ फाड़ कर फिर भी ग्रार्य मुसाफिर ने देखा,
सम्भव है मिल जाय कहीं पर योगिजनों की पदलेखा ॥८१॥

गरम ग्राब चश्मों से निकला गैरिक से मिल लाल हुग्रा,
सैकत कीट साथ में लेकर वही खून विकराल हुग्रा।
पराधीनता से भारत का नाश हेतु क्यों योग हुग्रा,
इस चिन्ता से क्या गिरीश को तीव्र उरः क्षत रोग हुग्रा ॥८२॥

कहीं दरिन्दे कहीं परिन्दे बेहद धूम मचाते थे,
उद्योगी अभियोगी योगी नहीं दृष्टि में आते थे।
मानो झरनों ने पहाड़ का मलिन अंश सब खो डाला,
दयानन्द की आशा तक को लेकिन उनने धो डाला ॥८३॥

पल्लव हस्त हिलाकर पादप कुछ निषेध सा करते थे,
पूंछ हिलाकर मानो उसकी हां में हां मृग भरते थे।
कलरव से कलरव नीड़ों में क्या वृतान्त बताते थे,
योगी यहां नहीं है कोई, यह संवाद सुनाते थे ॥८४॥

विष्णुचरण से शिव के शिर से गिरती गिरि पर गङ्गा है,
फिर दौरा भारत का करती रिङ्गत्तुङ्गतरङ्गा है।
माना इसे मृषा दण्डी ने क्यों कि कहीं सिर पैर न था,
नहर भगीरथ के प्रयत्न से निकली है यह ठीक कथा ॥८५॥

गहन गुहा में शेरों ने था स्थान् योगियों का घेरा,
डाला था गम्भीर बिलों में क्रूर भेड़ियों ने डेरा।
तरुतल में बैठे हरिणों का करता समज जुगाली था,
दृष्टि जहां तक जाती थी हिम से न हिमालय खाली था ॥८६॥

था पूजित कूजित करविक का कर्णमनोहर विशद कहीं,
क्रूर व्याघ्र की घोर गर्जना सुन पड़ती थी पास वहीं।
कहीं भयानक मांदें थीं तो कहीं लताओं के घर थे,
धर्म विरोधी भेद छोड़कर शामिल हुए वहीं पर थे ॥८७॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कहीं पवन से आन्दोलित मृदु पुष्प लता से टूट रहे,
या विराग से प्रेरित होकर वे जननी से छूट रहे :
क्या उस यात्री के जीवन को नाटक प्रकृति दिखाती थी,
या उस त्यागी का फूलों का वह अनुकरण सिखाती थी ॥८८॥
यात्री हिम के टुकड़ों से ही रिक्त उदर को भरता था,
लेकर जान हथेली पर वह खोज शैल में करता था।
छानबीन भरसक करने पर भी न वहां कुछ पाया,
योगी के बदले में बिल में भोगी उसे नजर आया ॥८९॥
कहीं किनारों पर ऊपर से दृष्टि पथिक की पड़ती थी,
और जंगली नग्न जातियों पर वह जाकर अड़ती थी।
देख अशिक्षा के विक्रम को उसका हृदय पिघलता था,
व्याकुलता के लक्षण वह होकर भग्नाश उगलता था ॥९०॥
डाला छान प्रदेश शैल का हाथ नहीं कुछ भी आया,
अन्धकार उसके जीवन में घोर निराशा से छाया।
छोड़ भगी धृति उस क्षण में उस चिन्ता के अनुयायी को,
जैसे कुलटा निर्धन को या निर्धनता व्यवसायी को ॥९१॥
यात्री लगा सोचने योगी कलि में भ्रष्ट हो गये हों,
कठिन बर्फ के अम्बारों में दब कर नष्ट हो गये हों।
आशिक हो हूरें जन्नत की उनको उठा ले गईं क्या ?
अन्तर्द्धानशक्ति से उनकी आकृति है अन्तर्हित क्या ॥९२॥
अथवा पूर्वजन्म के हम में पाप अभी तक सञ्चित हैं,
महायोगियों के दर्शन से इसी लिये हम वञ्चित हैं।
या योगी कुछ चीज नहीं यह केवल बनी कहानी हो,
मुमकिन है चण्डूखाने की गप्प एक मनमानी हो ॥९३॥
जितना मुझसे सम्भव था मैंने अन्वेषण कर डाला,
इस पहाड़ में दौड़ धूप की सभी तरफ देखा भाला।
प्राणशोषणी क्षुधा मुझे अब तो बेचैन बनाती है,
शीतल मारुत से फुप्फुस को जीवनशक्ति अघाती है ॥९४॥
ब्राह्मणकुल का अङ्कुर होकर छोड़ूं काम अधूरा मैं,
इससे अच्छा है कि यहीं पर करदूं जीवन पूरा मैं।
हे हतभाग्य जिन्दगी तेरा अन्तिम यही नजाराहै,
पल भर में सब तकलीफों का हो जाए निपटारा है ॥९५॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अगर कभी मरना ही है तो क्यों न अभी मर जाऊँ मैं,
देह छोड़ आपत्ति नदी को पल भर में तर जाऊँ मैं।
जिस्म लगा है गलने मेरा घोर वर्फ की सर्दी से,
मानो पाण्डुरोगपीडित हूँ लिप्त चर्म है जर्दी से ॥६६॥
अकड़ रहे हैं हाथ पैर अब वेग श्वास का रुकता है,
स्पन्दन मन्द हो रहा दिल का पूर्वकाय कुछ झुकता है।
असमय मृत्यु बुला बैठा मैं चला अमरपद पाने जो,
पड़ा रीक्ष पर उस का कर क्या कूदा कम्बल लाने जो ॥६७॥
भाग्य और पौरुष दोनों में भाग्य बड़ा है निश्चय ही,
अपनी दशा देख कर मैं यह मान रहा हूं बात सही।
रख छोड़ी न कसर कुछ मैंने लेकिन समुचित फल न मिला,
चला बवण्डर उद्यम का पर सिद्धिलता का दल न हिला ॥६८॥
नमस्कार है योगिजनों को जिन पर मैं हो रहा फिदा,
भारत वसुन्धरे यह तुझ से मांग रहा है पुत्र बिदा।
हे धरणीधर शीत गोद में मुझे समोद छिपा ले तू,
दीर्घ योग निद्रा से मेरा भौतिक ताप मिटा दे तू ॥६९॥
असफल होकर जीवित रहना इससे अच्छा मरना है,
भारभूत होकर भारत में नहीं पेट ही भरना है।
यह दिचार कर्त्तमूढ वह देहसर्ग के लिए बढ़ा,
पर्वत के मानो गौरव के उच्च शृङ्ग पर पथिक चढ़ा ॥१००॥
तम में भटके हुए विश्व को पाकर जिसे संभलना था,
धूर्तों को जिस में चापल से पड़ पतङ्ग सा जलना था।
शोकपवन से आहत हो वह दीपक बुझने वाला था,
उसे बचाने को लेकिन कुदरत ने परदा डाला था ॥१०१॥
पता नहीं किस दिव्य शक्ति से प्रेरित होकर पर्वत ही,
बोल उठा अव्यक्त नाद में बहा अमृत का शरबत ही।
चलना देख संभल कर स्वामी यह क्या सितम ढा रहा है,
अपने इस प्यारे भारत को तज कर किधर जा रहा ॥१०२॥
तू यदि माता के समान इस मातृभूमि को छोड़ेगा,
तो मनुष्यता से गिर कर संसग नरक से जोड़ेगा।
कड़ी मुसीवत मकतब है जो अक्लमन्द कर देती है,
धन से घर को नहीं इल्म से दिमाग को भर देती है ॥१०३॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दुःख जन्म से होता है और प्रवृत्ति जन्म की माता है,
तथा जन्मजननी प्रवृत्ति का उत्कट दोष विधाता है।
मिथ्याज्ञान हेतु दोषों का है तू इसे छोड़ स्वामी,
सत्य बोध से दुःख हटादे हो वेदों का अनुगामी ॥१०४॥

हम से भी ऊंचा ओ स्वामी निज यश का मीनार बना,
तुझे बहुत कुछ करना है तू क्यों होता है दीनमना।
सूर्य चन्द्र मिट जाय भले ही तेरा नाम रहेगा ही,
एक मात्र रक्षक वेदों का आलम तुझे कहेगा ही ॥१०५॥

तेरे विमल हृदय में कैसे आत्मघात का भाव हुआ,
मानस में काले पानी का क्यों कर प्रादुर्भाव हुआ।
ऐसे देहपात से क्या सन्ताप जन्म का टूटेगा,
कर्मबीज से जन्मवृक्ष का नूतन अङ्कुर फूटेगा ॥१०६॥

बर्मा श्याम अरब को तेरी धर्मकथा चमका देगी,
यवनों और क्रिस्चियन दल को तर्कों से धमका देगी।
सिन्धु लांघ इङ्गलैण्ड जायेगी और जर्मनी पहुंचेगी,
वेदों के निगूढ़ भावों को यौगिक बल से खोलेगी ॥१०७॥

बनकर कीर्ति मुसाफिर तेरी चन्द्रबिम्ब को चूमेगी,
सागर को गोष्पद कर देगी दश दिगन्त में घूमेगी।
गर्ज उठा तब सिंह गुहा में एवमस्तु यह ठीक हुआ,
आत्मविजय से मार मृत्यु को वीर पथिक निर्भीक हुआ ॥१०८॥

द्वितीय सर्ग समाप्त

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

तृतीय सर्ग

—:o:—

विशालशाला श्रुतकीर्तिशाली,
शत्रुघ्न की सुस्थिर वैजयन्ती।
मिष्टान्नवाली मथुरा परी का,
जरा नजारा लिख लेखनी तू ॥१॥

शराब के चूर हुए नशे में,
पड़े कहीं होश हवाश खो के।
पानी बिना खुश्क हुए गले से,
जिसे पुकारा बलराम ने था ॥२॥

पुराण में है जिस का पुराना,
माना गया बालिद आफताब।
प्रसिद्ध भाई यम दण्डधारी,
भैंसा सवारी जिस का बना है ॥३॥

उरोज की जो कुलगोपियों के,
खाती हुई चक्कर टक्करों से।
हंसी खुशी से दिन काटने को,
है झूलती क्या अनुकूल झूला ॥४॥

भागीरथी से जिसने किया है,
सलूक मानों हमजोलियों का।
शैवालवाली यह कूर्मपाबी,
काली निराली यमुना नदी है ॥५॥

साड़ी बनी दूब बनारसी है,
बक्षोज से हैं हिम विन्ध्य शैल।
विलोल श्यामा यमुना सुहाती,
है वेणि सी आर्यवसुन्धरा की ॥६॥

इसी नदी के ह्रद में भुजङ्ग,
नाथा गया कालिय कृष्ण से था।
काला उसी के विषयुक्त मानो,
फुङ्कार से पुष्कर दीखता है ॥७॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

गिरे हुए भारत को उठाता,
व्याख्यान जो भारत में दिया था।
लेखार्थ स्याही उसके बनाई,
क्या कृष्ण ने जो यह निम्नगा है ॥८॥

आकण्ठमग्ना पुरसुन्दरी के,
बिस्तार से आनन को छिपाते।
सहेलियां कुन्तलपाश को ये,
न देखतीं भी पहचानतीं ; ॥९॥

कहीं नितम्बस्थल से विशाल,
पाषाण से ठोस कहीं स्तनों से।
रुका हुआ वारि विहारशाली,
स्ववेग को खोकर है बढ़ाता ॥१०॥

घी दूध की थीं नदियां हजारों,
यहां न जाने अब वे कहां हैं ?
बेहाल सी हो इस सोच से ही,
काली पड़ी क्या सरिता बड़ी है ॥११॥

आधार है वैदिक धर्म का जो,
सर्वस्व है मानव जिन्दगी का।
हैं भोज्य जो दारुण दानवों का,
गायें जहां वे जल पी रही हैं ॥१२॥

बहे हुए फूल तरङ्गिणी में,
प्रवाह के साथ कहाँ चले हैं ?
स्वतन्त्रता के हित फाँसियों में,
टंगे हुए क्या सिर ढूंढ़ते हैं ॥१३॥

कसाईयों के हत जुल्म से हो,
रोती हुई पावन धेनुओं के।
दुर्भाग्य के सूचक हिन्दुओं के,
क्या आंसुओं से सरिता बनी है ॥१४॥

नैराश्य का पाकर रङ्ग श्यामा,
क्षारत्व से वर्जित है परन्तु।
जो दूध मीठा सब को पिलाती,
आंसू भला क्यों नमकीन देंगी ॥१५॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मनोज्ञ ये घाट बने हुए हैं,
जहां नहातीं कुलनारियां हैं।
सञ्चारिणी ये फुलवारियां हैं,
पीयूष की या पिचकारियां हैं ॥१६॥

पक्वान्न क्या क्या उनके बनेंगे,
यों सोचता चंचल भावना से।
पण्डा बड़ा लेकर एक डण्डा,
सभङ्ग भङ्गा यह घोटता है ॥१७॥

आभूषणों से धन जान काफी,
पण्डा किसी आस्तिक सुन्दरी का।
हो आप मेरे यजमान पक्के,
यों बोलता अंचल खींचता है ॥१८॥

था पक्ष तो शुक्ल परन्तु कोई,
संकल्प में पण्डित कृष्ण बोला।
रोका उसे तो उसने कहा कि,
है कृष्ण का पक्ष यहां हमेशा ॥१६॥

यों बुद्धि का वैभव देख दिव्य,
प्रसन्न हो के यजमानपत्नी।
दही मिला के दस सेर पेड़े,
देती उसे है स्मित को छिपाती ॥२०॥

महानदी के तटवञ्जुलों में,
भृङ्गावली मञ्जुल गुंजनों से।
अपायकारी परयन्त्रणा का,
स्वतन्त्रता मन्त्र सुना रही है ॥२१॥

तरङ्गिणी की चल भङ्गियों ने,
कदम्ब के कोमल कुड्मलों ने।
सन्तान का कौशल शब्द से क्या,
सीखा कि पाया उसने इन्हीं से ॥२२॥

प्रस्ताव रक्खा कुछ कोकिला ने,
समर्थिका भृङ्गवधू बनी है।
दरख्त शाखामय हाथ मानों,
ऊंचे उठा सम्मति दे रहे हैं ॥२३॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पूछी गई राय महाधुनी से,
प्रस्ताव के आखिर मामले में।
हुई बताती अपनी अनास्था,
फैला रही है यह भङ्गहस्त ॥२४॥

यमस्वसा की तटवाटिका में,
या विश्व की प्राकृत नाटिका में।
भाती लुभाती दिल गोपियों का,
वंशी बजाई भगवान ने थी ॥२५॥

स्रोतस्वती के तट से प्रतिष्ठा,
पाती हुई या उसको बढ़ाती।
भरी चतुर्वेदविशारदों से,
पुराणधन्या मथुरा पुरी है ॥२६॥

अजीर्ण से पीड़ित विप्र से था,
कहा किसी ने यह चूर्ण खा लो।
क्रोधान्ध हो के उसने बताया,
कि मैं कहां पागल ! चूर्ण डालूं ॥२७॥

खाली जरा भी यदि पेट होता,
तो एक पेड़ा फिर क्यों न खाता।
शरीर को मान विनाशशाली,
परान्न से क्यों न मैं अघाता ॥२८॥

मरा वही आखिर कष्ट पा के,
आनन्ददाता हलवाइयों का।
सवेग आता इस ओर को है,
महापुरी से उसका जनाजा ॥२९॥

आ कल्पने भीषण भीड़ से तू,
थकी न हो तो निज को बचा के।
बाजार को भी पुल पार हो के,
निहार ले है यह ठीक मौका ॥३०॥

है साफ सीधी सड़कें यहां की,
मानो उपन्यास कहानियां है।
जाते चले दर्शक सादगी से,
न भूलते और न डोलते हैं ॥३१॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

न राह में नीरवता निरी है,
न मोटरों की भरमार ही है।
दूकान कोई उजड़ी नहीं है,
न ग्राहकों को भरमा रही है ॥३२॥

मानो पुरी ने अतियोग छोड़ा,
अयोग से भी मुंह मोड़ बैठी।
समत्व योगीश्वर कृष्ण ने क्या,
इसे सिखाया उस वक्त में था ॥३३॥

सुमध्यमा मध्यमभाग जैसी,
बनी कहीं तो पतली गली है।
कहीं वधू के वर ऊरुओं की,
विशालता को अपना रही है ॥३४॥

क्या मन्दिरों की सुषमा कहूँ मैं,
जहां हजारों कुलदेवियों के।
मञ्जीर के मंजुल शिञ्जितों में,
अमन्द घण्टा रव मन्द होता ॥३५॥

ला के यहां गर्हित मन्त्रणा से,
प्रेमी जिसे छोड़ भगा अभागा।
अनाथ हो मन्दिर में अकेली,
आपन्नसत्त्वा यह रो रही है ॥३६॥

अनेक तीर्थाटन का बहाना,
आये बना कृत्रिम प्रेमियों की।
पूजारियों के मद को बढ़ाती,
भारी यहां भीड़ लगी हुई है ॥३७॥

देखो अनाड़ी रणछोड़ जी को,
ये मालतोमाल्य चढ़ा रहे हैं।
अपूज्य का पूजन मूर्खता है,
धिक् है उसे जो रण छोड़ भागा ॥३८॥

धरी हुई मूर्ति घृणा बढ़ाती
कुब्जाविहारी भगवान की है।
क्या औरतों की इतनी कमी थी,
या व्यास के गौरव बुद्धि का है ॥३९॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रूमाल मेरा किसने चुराया,
पूछा वधू ने यह पूजकों से।
कहा उन्होंने दिल देखने को,
तेरा उसे माधव ले गये हैं ॥४०॥

बोली नवोढ़ा परितुष्ट हो के,
मैं कृष्ण का दर्शन चाहती हूँ।
तो रात को आकर देख लेना,
जबाब यों पूजक दे रहे हैं ॥४१॥

गुथे हुए माथुर सुन्दरी के,
हैं फूल क्या ये अलकावली में।
घिरी हुई वारिद की घटा में,
मानों सितारे कुछ दीखते हैं ॥४२॥

बैठे हुए दर्शक छात्र से हैं,
अध्यापिका भूषित नर्तकी है।
अपाङ्ग की भंगुर भङ्गियों से,
सिखा रही है क्षणवाद मानो ॥४३॥

न स्वर्ग में और न चन्द्र में है,
न सिन्धु में और न काव्य में ही।
पीयूष है केवल माथुरी की,
कल्याणशीला वचनावली में ॥४४॥

प्रत्यक्ष से ही यह सिद्ध है तो,
यहाँ प्रमाणान्तर व्यर्थ ही है।
क्या भारती माथुर गायनी की,
न आरती में तुम ने सुनी है ॥४५॥

आ कल्पने तार्किक भावना से,
यों घूमना ठीक नहीं अवारा।
ऐसा न हो शासक कम्पनी की,
दफा अनोखी लग जाये कोई ॥४६॥

जो चित्त में है करती उजाला,
जहां नहीं है कुछ दाग काला।
सजीव हीरा जिसने निकाला,
है सामने संस्कृत पाठशाला ॥४७॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

खुला हुआ है दर कल्पना ने,
जा के वहाँ भीतर दृश्य देखा।
यथार्थ में चित्रित हो रहा था,
विचार ऊंचा व्यवहार सादा ॥४८॥

चटाइयां सिर्फ बिछी हुई थीं,
न मेज का नाम न कुर्सियां थीं।
दीवार ही अङ्कित अक्षरों से,
विज्ञान का बोर्ड बनी हुई थी ॥४९॥

भगी महापण्डित कुञ्जरों को,
घटा अनूठी जिन की छटा से।
वे एक पातञ्जल भाष्यवेत्ता,
बैठे वहां शाब्दिक केसरी थे ॥५०॥

न दृश्य वे बाहर देखते थे,
संसार से क्या उनको घृणा थी?
घेरे हुए थे उनको अनेकों,
विद्यानुरागी शिशु ब्राह्मणों के ॥५१॥

लवङ्ग का लेकर एक थैला,
जिसे बनाया उस ने स्वयं था।
आया वहां तत्क्षण एक दण्डी,
सजीव आभूषण भारती का ॥५२॥

प्रणाम के बाद गंभीरता से,
हस्ती मिटाता अविनीतता की।
श्रद्धेय के सम्मुख पण्डितों का,
भावी विजेता कहने लगा यों ॥५३॥

आराध्य के पादसरोरुहों के,
पराग का एक चिरानुरागी।
श्रीमान का बालक क्षुद्र कोई,
प्रणामशीलो गुरुभक्ति से है ॥५४॥

समग्र पातञ्जल भाष्य मैंने,
श्रीमान के श्रीमुख से पढ़ा है।
सभाष्य पूरा विधिवत् सुना है,
पाना हुआ दर्शन योगियों का ॥५५॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

है वस्तु ऐसी वह विश्व में क्या,
जिसे कि पा के मुझ सा भिखारी।
अमूल्य विद्याधन के प्रदाता,
करें हवाले गुरु के पगों के ॥५६॥

अशिष्टता के डर से तथापि,
लवङ्ग लाया कुछ साथ में हूँ।
हे दिव्यशब्दागमचक्रवर्तिन्,
स्वीकार हो नम्र निवेदना है ॥५७॥

जो आप का चित्र विचित्र मेरे,
संस्कार से मानस में खिंचा है।
धोया करेगी उसको हमेशा,
प्रेमाश्रुधारा अतिशीत मेरी ॥५८॥

रहस्य मैंने अमरत्व का है,
जाना भगी दारुण मृत्युभीति।
प्रणाम है वार हजार मेरा,
प्रस्थान का हुक्म मुझे विभो! दो ॥५९॥

उदास होके सहपाठियों के,
तत्काल भावी विरहव्यथा से।
समाज की नीरवता भगाते,
बोले विरजानन्द विमृश्यकारी ॥६०॥

अगम्य विद्या मति से तुझे मैं,
संयुक्त पा के खुश हो रहा हूँ।
भागीरथी और कलिन्दजा से,
प्रयाग को ज्यों खलताण्कारी ॥६१

आवाज तेरी मधुमाधुरी से,
सुरूर देती दिल को बड़ा है।
परन्तु मैं रोनक चेहरे की,
न देख पाया अफसोस तेरे ॥६२॥

दुर्धर्ष तेरी स्मृति ले चुकी है,
प्रबोध मेरे मुख से प्रकाम।
समुद्र से ज्यों जल मेघमाला,
या सूर्य से पङ्कवनी प्रकाश ॥६३॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

गुरु विरजानन्द से शिक्षा ग्रहण करते हुए

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

परन्तु तू ने गुरुदक्षिणा का,
नहीं उतारा गुरूभार वीर।
अदा किये कर्ज विना कहां तू,
लवङ्ग ये दे देकर जा रहा है ॥६४॥

हैं दे चुके और अनेक देंगे,
लवङ्ग तो हे निजवंशहंस।
सामर्थ्य वाले तुझ से अतः मैं,
हूं चाहता एक अनर्घ्य वस्तु ॥६५॥

जिज्ञासुओं के उपजीव्य मेरे,
हैं पास ऐसी वह कौन वस्तु।
जिसे चढ़ा के गुरु के पगों में,
नजात पाऊँ इस कर्ज से मैं ॥६६॥

है धृष्टता यद्यपि बोलना तो,
तथापि खामोश रहा न जाता।
आदेश हो तो इस जिन्दगी को,
जहां कहो तत्क्षण वार दूं मैं ॥६७॥

यथार्थ वाणी प्रिय शिष्य की यों,
पीयूषधारा सम तृप्त पीके।
नीचा दिखाते घन घोष को यों,
गम्भीरता से गुरू देव बोले ॥६८॥

धरा उठाती गुरूभार को है,
सन्तृप्तिकारी जल गैर का है।
पका रहा पावक दूसरों के,
लिए हवा भी चलती परार्थ ॥६९॥

आकाश ने शब्दवितान को है,
दिया सहारा किस लालसा से।
परार्थ के ही व्रत की महत्ता,
बता रहे हैं जड़ भूत पांचों ॥७०॥

निदान में व्याप्त हुए गुणों का,
है कार्य में भी अनिवार्य आना।
इसी लिए भौतिक देह को भी,
परोपकारी वनना पड़ेगा ॥७१॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जो आप पाके अमरत्व को तू,
किसी कुटी में चुपचाप बैठा।
तो क्या पशेमान जमीं न होगी,
फर्जन्द को काहिल जान के यों ॥७२॥

सर्वंसहा के सुत हैं करोड़ों,
है किन्तु आशा इसको तुझी से।
तारे हजारों चमका करें तो,
क्या चन्द्र के काम बिना चलेगा ॥७३॥

चढ़े हुए तस्करसाधुओं के,
अखण्ड पाखण्ड महाविषों से।
बेहोश होते निज देश को भी,
स्वदेशना से अमरत्व दे तू।।७४॥

अगाध पाखण्ड समुद्र सा है,
बने हुए हैं घड़ियाल साधु।
स्वधर्म की और स्वसभ्यता की,
स्वराज्य की नाव डुबो न देना ॥७५॥

न औरतों का अपवर्ग होता,
सिद्धान्त ऐसा निज आगमों में।
उपासकों ने जिन के बनाया,
मनुष्यता के विपरीत ही है ॥७६॥

अफीम खाते बहु मद्य पीते,
नहीं अघाते मदनोत्सवों से।
कृती बने ताम्रक छोड़ कैसे,
हैं दीखते सिक्ख शिखी सरीखे ॥७७॥

हिस्सा जलाना कुछ जिस्म का जो,
नजात देता तकलीफ से है।
तो भाड़ में ही पड़ना भला है,
चक्राङ्कितों का हत अज्ञता से ॥७८॥

उपस्थ के घातक नग्न साधु,
हैं फाड़ते जालिम नाथ कर्ण।
ऊंचा उठा के कर घूमते हैं,
कोई दशा है यह साधुओं की ॥७९॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ताबीज देके कुलनारियों को,
बन्ध्यत्व को जो करता रफा है।
गिरी हुई भारत की दशा को,
गिरा रहे हैं फिर भी अभागे ॥८०॥

सर्दी यहाँ है न विशेष तो भी,
नक्काल हो के परदेशियों के।
लादे हुए दुर्द्धर वस्त्र बीसों,
खरत्व पाते नर देह में ही ॥८१॥

यूरोप की नूतन रोशनी में,
भूले हुए भारत की प्रभा को।
हैं घूमते मानव तात ! लाखों,
सुधार दे तू उनकी दशा को ॥८२॥

गोघातकों के अभिषङ्ग से तो,
विदीर्ण होता दिल सङ्ग का भी।
चले कहीं धार्मिक चक्र तेरा,
तो ठीक हो नीयत जालिमों की ॥८३॥

बन्दे खुदा के गुमराह हो के,
किसान हो जङ्गम खेतियों के।
कुल स्त्रियों को फुसला भगा के,
देते तरक्की निज कोम को हैं ॥८४॥

पाषाण का तैल बने भले ही,
मिले कहीं शक्कर निम्ब की भी।
इस्लाम का और मनुष्यता का,
न हो सकेगा सहवास किन्तु ॥८५॥

वैधव्यदग्धा नव नारियों की,
चिन्तामयी रौरव यातना को।
हे वीर पत्यन्तर योजना से,
मिटा न हों ताकि विनष्ट हिन्दू ॥८६॥

अनाथ लाखों शिशु घूमते हैं,
शिकार होते पर धर्म के जो।
उन्हें बचा ले अतिपुण्य होगा,
क्यों साथ तेरा जनता न देगी ॥८७॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मुझे भरोसा भरपूर तेरा,
तू ही हरेगा जग का अंधेरा।
करे न अज्ञान यहां बसेरा,
तू पातकी का कर दूर डेरा ॥८८॥

हैं वेद चारों यदि पास तेरे,
निर्बाध हैं तो पथ साफ चारों।
आखण्डपाखण्डविमर्दकारी,
झण्डा उड़ा धीर दिगन्त में तू ॥८९॥

अन्धेर है देर वृथा लगाना,
भविष्य मैं उज्ज्वल देखता हूँ।
यों बोल खामोश हुए कृती ने,
स्वशिष्य का उन्नत शीश सूंघा ॥९०॥

आनन्द के वर्द्धक सज्जनों के,
व्रती दयानन्द सरस्वती ने।
विनम्रता और प्रवीणता की,
जवाब देते हद तोड़ दी क्या ॥९१॥

श्रीकृष्ण ने मध्यम पार्थ को ज्यों,
वैधात्र ने नारद संयमीं को।
वन्दा बली को गुरू अन्त्य ने ज्यों,
है आप ने त्यों मुझ को जगाया ॥९२॥

मैं आप की संस्कृत भारती के,
महत्त्व की बावत क्या बताऊं।
सम्मान्य ऐसे उपदेश की तो,
स्पृहा सुधर्मा करती रहेगी ॥९३॥

नहीं पदों ने स्फुटता तजी है,
न स्थान पाया पुनरुक्तता ने।
छूटा नहीं गौरव अर्थ का है,
सामर्थ्य का है न कहीं अपोह ॥९४॥

जो आप ने हुक्म मुझे दिया मैं,
तामील पूरी उस की करूंगा।
व्याख्यान को अन्तिम आप के तो,
मैं मानता हूँ उपवेद सा ही ॥९५॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

नाना मतों के विकराल फोड़,
जो देह में भारत के उठे हैं।
मैं तर्क को शल्य बना करूंगा,
इलाज जल्दी उन का यथेष्ट ॥९६॥

मोती करोड़ों बिखरे पड़े हैं,
पिरो इन्हें धार्मिक सूत्र में ही।
आशीष दो मैं फिर भी दिखा दूं,
खोई हुई भारत की प्रभा को ॥९७॥

फैले हुए मानवमानसी में,
छोटे बड़े धर्मजलाशयों का।
आरम्भ है वैदिक स्रोत से ही,
समायेंगे आखिर वे इसी में ॥९८॥

गाना पुराना पशुपालकों का,
बता रहे हैं श्रुतिमन्त्र को जो।
यूरोपवासी उन पण्डितों के,
अभेद ताला मुंह में लगेगा ॥९९॥

कलिन्दजा को लहरावली से,
भेजी मिली पुष्पित वाटिका से।
जुल्फें हिलाती परधर्मियों की,
चली हवा और हुआ तथास्तु ॥१००॥

तीसरा सर्ग समाप्त

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

चतुर्थ सर्ग

आसन्न रवि के उदय से तम हो रहा अवसन्न है,
हैं हीन दीन उलूक लेकिन कोकलोक प्रसन्न हैं।
उत्पत्ति और विनाश का क्रम है अटल संसार में,
अपकार हैं स्थित दूसरे का एक के उपकार में ।।१।।

गतयौवना के कुचसदृश विधवा वधू के हार से,
तपशुष्क तरु के पुष्पसम हो खिन्न जीवनभार से।
तारे गगन के झड़ गये अतिशय जरठ के दन्त से,
पाया जिन्होंने जन्म वे क्यों कर बचेंगे अन्त से ।।२।।

आमोदहेतु चकोर का होता सुधाकर अस्त है,
तारावधू के शोक से मानो हुआ यह ध्वस्त है।
या रात में रतिराग से इस को हुआ क्षय रोग है,
अथवा पुराने जन्म के दुष्कर्म का यह भोग है ।।३।।

मधुपान उत्पल पात्र में कर सब तरफ को घूम के,
मुक्तावलीद्युतिहारिणी तारावली को चूम के।
मानो निशाकर सो गया है खिन्न हो रतिखेद से,
या देख भङ्ग अनङ्ग का निष्प्रभ हुआ निर्वेद से ।।४।।

तारामुखासव पान से ताराविलासी क्षीव हो,
खाकर कहीं ठोकर अभागा गिर पड़ा निर्जीव हो।
शबनम नहीं यह फेन का मुंह से निकलता जान है,
व्यसनी पियक्कड़ का सदा होता यही तो हाल है ।।५।।

हे हिन्द के वीरो उठो अब तो उजाला हो गया,
अब ढङ्ग भारतवर्ष का सचमुच निराला हो गया।
जो दीन और गुलाम था वह मानवाला होगया,
सन्देश यह कृकवाकु का विश्रुत हुआ मानो नया ।।६।।

मुखचन्द्र फीका पड़ रहा तारा दृगों की दीन है,
विखरा तिमिरकचपाश छवि नयनोत्पलों में हीन है।
प्रासाद से यह पांसुला रजनी सरीखी जा रही,
है सुस्त और उदास फिर भी लोचनों को भा रही ।।७।।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अभिनव उषा के योग से नीरूप नभ है लाल क्या,
सिन्दूर से भूषित हुआ प्राचीवधू का भाल क्या।
या घोर तम के साथ रवि का युद्ध भारी हो रहा,
सो रक्त यह बहता हुआ समरस्थली को धो रहा ॥८॥

नीहारहार लतावधू का बाग में चोरी गया,
कोमल करों से सूर्य शिशु उस को उठा कर ले गया।
क्या आर्द्र बेंतों से हुई बेहाल इस की खाल है,
अम्बर पिता की गोद में मूर्छित पड़ा यह लाल है ॥९॥

क्रीडासमय में चञ्चलासम चञ्चला सुषमायुता,
मार्तण्ड के उत्सङ्ग से क्या गिर पड़ी धरणी सुता।
अपने मृदुल कर से इसे यह दे रहा है सान्त्वना,
आंसू तुहिन के पोंछ कर कुछ देर में लेगा मना ॥१०॥

ले दासता से दासता को मोल खुश हो कर बड़े,
हे हिन्दुओ कब तक रहोगे खाट पर सोये पड़े।
तुम काहिलों को गोद में रख दीन भारत रो रहा,
यों पक्षियों की घोषणा से व्याप्त क्या नभ हो रहा ॥११॥

कैसा नसीब जगा हुआ था चाल थी जादू भरी,
आये यहां थे धन कमाने मिल गई धरती खरी।
गौराङ्गगण के भाग्य की तारीफ यों करती हुई,
क्या गा रही भृङ्गावली पर जेल से डरती हुई ॥१२॥

कोई शयन को छोड़ हुक्का गुड़गुड़ाने लग गया,
विषधूम से बाधित मशक उस के सदन से भग गया।
वह विप्र हो कर होम से कैसे भला मुंह मोड़ता,
होकर गृहस्थ कृशानु से सम्बन्ध क्यों कर तोड़ता ॥१३॥

मुंह से निकल कर धूम बढ़ता एक ओर सदर्प है,
बिल से निकल काला चला क्या पक्षधारी सर्प है।
यों बालिका की बात सुन ले हाथ में लम्बी नली,
जब तक उठे वह वृद्ध तब तक यह गली में भग चली ॥१४॥

जो रात को वरवर्णिनी के दन्त से क्षत हो गया,
अत्युष्ण जल कर चाय से जो और भी हत हो गया।
अब उस अधर को छू रहा है धूम दीप्त सिगार का,
क्या अन्त है व्यसनी जनों के दुःखमय उपचार का ॥१५॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सोये हुए धनवान को घर में जगाती है प्रिया,
पति को उठाने में हुई पर व्यर्थ सब उस की क्रिया।
जिन को कुमारिल और शङ्कर आदि भी न जगा सके,
बाला अकेली होश में उन को कहाँ तक ला सके ॥१६॥

नृपकीर्ति गाने के लिए वरवेष से चारण सजे,
आगम उषा का जान, बाजे राजमहलों में बजे।
प्राणेश के सो कर अनन्तर पूर्व हो उस से जगीं,
तज पुष्पशय्या कुट्टिमों पर रानियाँ फिरने लगीं ॥१७॥

कोई अफीम उड़ा रहा है खोल कर डिबिया बड़ी,
कोई समय को देखता है जेब से ले कर घड़ी।
कोई अभी सोया पड़ा बीमार अपने को बता,
रजनीमहोत्सव का नहीं निज मित्र को देता पता ॥१८॥

मेरी जहां है गति नहीं जाता वहां तक है कवि,
व्यवसाय मेरा व्यर्थ है यों सोच कर मानो रवि।
संन्यासियों के फेर में पड़ ले रहा संन्यास है,
काषाय चीवर राग का प्रत्यक्ष ही आभास है ॥१९॥

अंगरेज मुंह धोये बिना बिस्कुट मुदित खाने लगे,
फिर चाय पी कर शीघ्र मुंह से धूम बरसाने लगे।
धन दीन भारत का सहज में फूंक देना धर्म है,
सीखा इन्होंने आज तक यह सभ्यता का मर्म है ॥२०॥

नाई उठा कर पेटियां फिरने लगे बाजार में,
हस्ती कचों की मिट रही पड़ कर छुरे की धार में।
यदि राज्य सिक्खों का कहीं होता हमारे देश में,
तो केश बेचारे कभी पड़ते नहीं यों क्लेश में ॥२१॥

कोई प्रथम निज प्रेयसी को चाय का प्याला पिला,
पी कर उसी में आप फिर कहने लगा कुछ शिर हिला।
मीठी बनाता चाय को तेरे अधर का योग है,
फिर क्यों अपव्ययहेतु शक्कर का हुआ उपयोग है ॥२२॥

लो देखते ही देखते बाजार है यह सज गया,
डङ्का विदेशी माल मानो बेचने का बज गया।
जो पेट के फैलाव में हेरम्ब से भी हैं बड़े,
दल्लाल से बेडोल हैं ये सेठ गद्दी पर पड़े ॥२३॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ले कर बगल में पुस्तकें लड़के इधर पढ़ने चले,
इङ्गलैण्ड के गुणगान में या गैर से बढ़ने चले।
यूरोप की ही शान पर यह देश लट्टू हो रहा,
टोचर किराये का इसी से आज टट्टू हो रहा ॥२४॥
बङ्गालियों के मत्स्य को पञ्जाबियों के प्याज को,
त्यों मारवाड़ी औरतों के मूर्खता के साज को।
प्रत्यक्ष मानो देखने मार्तण्ड अब आगे बढ़ा,
आ कल्पने हम भी कहीं घूमें फिरें दिन चढ़ा ॥२५॥
है हरिद्वार प्रसिद्ध पत्तन क्षेत्र पुण्यों का जहाँ,
अतिलम्ब पथ को पार कर कविकल्पना पहुंची वहां।
ग्रहयोग से घोषित यहाँ है कुम्भ का मेला लगा,
उत्साह जिस को देखने में विश्व भारत का जगा ॥२६॥
तन मन तथा धन सौंपने को साधुओं के हाथ में,
उपदेश के अपदेश से रहने उन्हीं के साथ में।
आईं यहां है औरतें क्या पुण्य पाने के लिए,
या भ्रूणहत्या आदि के पातक बढ़ाने के लिए ॥२७॥
देखो मिठाई और पूरी बिक रही इस ओर है,
दस सेर हम को तौल दो यों ग्राहकों का शोर है।
खा कर पुराना माल ये बेहाल सब हो जायेंगे,
हैजा अगर फैला कहीं तो प्राण निज खो जायेंगे ॥२८॥
इस ओर मण्डलनायकों के मण्डपों का साज है,
आओ चलो दर्शन करो आती यही आवाज है।
सेठानियों की भीड़ है हमजोलियों के साथ में,
नीराजना का थाल है इन के मृदुलतम हाथ में ॥२९॥
सेठानियों के सामने लवली लताएं तुच्छ हैं,
हैं बाहु ही कोमल विटप कुच उच्च सुम के गुच्छ हैं।
वानर सरीखे साधुओं के हाथ में ये पड़ गईं,
या धर्म पर यौवन तथा धन वारने को अड़ गईं ॥३०॥
फँसती कभी कचपाश में अलबेलियों की दृष्टि है,
वक्षोज रूप पहाड़ पर चढ़ देखती मुखसृष्टि है।
रोमाञ्चकण्टकयुक्त फिर कर देहवन में जब थकी,
तब वह जघनरथ पर चढ़ी लेकिन न आगे चल सकी ॥३१॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

निज उरु पर रख साधु के कोई दबाती पैर है,
कोई यती के साथ करती वाटिका में सैर है।
ले सव्य कर में थाल कोई स्थूलतनु यतिराज को,
है दे रही मुंह में कवल स्मित के दिखाती साज को ॥३२॥

कोई यती के साथ फिरती नाव में बेरोक है,
कोई पकड़ कर हाथ करती मस्करी से जोक है।
एकान्त में जिस के किसी ने गण्ड पर रोली मली,
वह सन्त के रूमाल से मुंह पोंछने अपना चली ॥३३॥

जा छोड़ता जिस चीज को मिलती उसे आ कर वही,
अध्यात्मवादी योगियों ने बात यह सच्ची कही।
घर में प्रिया को छोड़ कर योगी बने ये लोग हैं,
पाते हजार गुना इसी से आद्य रस का भोग हैं ॥३४॥

कोई पुरी के साथ बैठी तल्प पर निर्भीक है,
कोई उदर की वेदना गिरि से कराती ठीक है।
ऐसी घृणास्पद वासना से भ्रष्ट भिक्षुकलोक है,
कर से खिसकती लेखनी है शोक को भी शोक है ॥३५॥

हैं परमहंस कहीं उदासी नग्न बैरागी बड़े,
जूना अटल निर्वाणियों के ये अखाड़े हैं खड़े।
पेड़ा जलेबी आदि का भीतर बड़ा ही शोर है,
मिष्टान्न पर ही लग रहा सब साधुओं का जोर है ॥३६॥

देखा हया को बेच कर नङ्गे इधर नङ्गे खड़े,
इस सभ्य भारत में अहो हवशी कहां से आ पड़े ?
अवधूत बालाएं कहीं उन्नत कुचों की कान्ति से,
निश्चल हृदय को भी हटातीं दूर संयम शान्ति से ॥३७॥

इस ओर यह नङ्गा खड़ा है भस्म मलकर देह में,
चारों तरफ इस के स्त्रियाँ डूबी खड़ी हैं स्नेह में।
कुल मारवाड़ी नारियां धर्मान्ध हो जय कह उठीं,
मानो नगर की नालियाँ कर्दम सवेग उगल उठीं ॥३८॥

बामन इधर यह जा रहा है हाथ में खप्पर लिये,
कर जोड़ लोगों ने इसे भरपूर पैसे दे दिये।
कोई अभागी सोचती है यह मुझे पति प्राप्त हो,
तो क्यों न ऐसे पुत्र से ही अङ्क मेरा व्याप्त हो ॥३९॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इस ओर धूनी साधु की उस ओर पति का बाग है,
सेठानियों से पूछ लो किस में तुम्हारा राग है।
या सब यहां प्रत्यक्ष है तो प्रश्न ही बेकार है,
बस पञ्चशर सरकार की सर्वत्र जयजयकार है ॥४०॥

कवि ने कहा निज लेखनी से पृष्ठ मत काले करो,
संन्यासियों के दोष लिख कर पाप के घट मत भरो।
इस ने दिया उत्तर कि पाणिग्रहण पाकर आप से,
मैं क्यों छिपा कर सत्य को होऊं कलङ्कित पाप से ॥४१॥

तब लेखनी की चाल को मानो पलटने के लिए,
कवि कल्पना ने दृश्य कुछ नूतन उपस्थित कर दिए।
कुछ दूर पाख़ण्डखण्डन नाम का झण्डा गड़ा,
जमघट्ट चारों ओर जिस के यात्रियों का था बड़ा ॥४२॥

उन पोपरूप कबूतरों पर व्यक्त होते बाज से,
पाखण्डगज के नाशहित शोभित हुए मृगराज से।
ध्वज के समक्ष खड़े हुए ऋषिराज के आवेश को,
सब देख कर सन्तुष्ट थे था क्लेश होता क्लेश को ॥४३॥

पढ़ते हुए थी हो गई जब भाष्य में गलती बड़ी,
अतिरुष्ट हो गुरु देव ने तब मार दी पतली छड़ी।
द्विजराज में उस का निशां था साफ काला दीखता,
गुरुभक्ति का आदर्श कोई क्यों न उस से सीखता ॥४४॥

शैतान भारतवर्ष को तू ने डुबोया पाप में,
तो डूब कर तू भी मरेगा कर्मगति से ताप में।
यों सोचते ऋषिराज के लोचन अनल बरसा रहे,
पुजारियों को दिव्य अपनी भावना दरसा रहे ॥४५॥

शिक्षार्थ मानव जाति के प्रस्तुत सनातन शास्त्र है,
तिस पर करे उद्दण्डता जो दण्ड का वह पात्र है।
यों सोच ऋषिवर ने लिए थे वेद चारों साथ में,
ऋजु और व्रण से हीन था आषाढ़ उन के हाथ में ॥४६॥

उन के मनोहर जिस्म में थे रोम चमकीले खड़े,
मानो सुवर्णस्तम्भ में अनमोल हीरे थे जड़े।
वे दर्शकों की दृष्टि में थे निगहबान जहान के,
अतएव परिचय के बिना ही पात्र थे सम्मान के ॥४७॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अश्लील ग्रन्थों से समेंधित दुर्व्यसन के ज्वाल से,
आक्रान्त पा कर हिन्द को यतिराज थे बेहाल से।
मानो कहीं से आग आ कर आशियाने में लगी,
पत्ते हवा थे दे रहे चिन्ता परिन्दे में जगी ॥४८॥

बेजोड़ हूरों के नजारों की वृथा थी भावना,
वैराग्य यति का देख कर थी रो रही दुर्वासना।
मोटा रहा सोटा मगर छोटा लंगोटा था अहा,
कौपीनधारी को न किस ने पुण्यशाली था कहा ॥४९॥

पाखण्ड घन की आड़ सेकर मुक्त भारतवर्ष को,
जिज्ञासुसरसिज में करेंगे जो निवेशित हर्ष को।
ऋषि आफताब अजीव थे वे नूर का तड़का हुआ।
बीती जहालत की निशा क्षय मानसिक तम का हुआ ॥५०॥

अविचल प्रणव के वाच्य की कर चित्त से हमदोसना,
अपने अकेले कदम से जिस ने दिया आलम वना।
अलफाज महफिल में ऋषीश्वर यों अदा करने लगे,
गोया श्रवण में वे तरो ताजह शहद भरने लगे ॥५१॥

जिन को पदार्थविवेचकों ने है दिया अध्रुव बता,
है सत्य विद्या दे रही जिन का हमें नियमित पता।
उन वस्तुओं का आदि कारण एक ही वह तत्त्व है,
सर्वत्र जिस का सर्वदा अज्ञेय पूर्ण महत्त्व है ॥५२॥

जो जन्म लेता ही नहीं मरता नहीं है जो कभी,
जो है नहीं हम में मगर जिस में समर्पित हम सभी।
त्रैगुण्यविषयक शब्द ने पाया न जिस का पार है,
उस शक्ति की आराधना से ही सुलभ उद्धार है ॥५३॥

जिस से अधिक प्राचीन पुस्तक है नहीं अब तक मिली,
जिस की प्रशंसा में कलम है मोक्षमूलर की हिली।
उस वेद का पढ़ना पढ़ाना आर्य जन का धर्म है,
सादर उसे सुनना सुनाना सभ्य जन का कर्म है ॥५४॥

जो बोलता है सच सदा वह ही असल में देव है,
है अनृतवादी ही मनुज श्रुति ने कहा स्वयमेव है।
अतएव तज कर झूठ को तुम सत्य का धारण करो,
कुहना नटी का हिन्द के वर मञ्च से वारण करो ॥५५॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

करना तुम्हें होगा वही जो धर्म के अनुकूल है,
उस मार्ग से बच कर चलो जो वेद के प्रतिकूल है।
पहले क्रिया से ज्ञान है इस बात को सत् मान लो,
क्या सत्य और असत्य है यह बुद्धिबल से जान लो ॥५६॥

प्रस्तर तुम्हारे देह हों व्यायाम के आयाम से,
निर्मल तुम्हारी रूह हो परहेज रक्खे काम से।
गुणशील आर्यसमाज का शुभ सङ्गठन में पक्ष हो,
संसार का उपकार करना लक्ष्य सिद्ध समक्ष हो ॥५७॥

देखो घृणा को तुम घृणा से रोक सकते हो नहीं,
क्या आग के उत्ताप से भी आग बुझती है कहीं?
सो तुम अदू के साथ भी करना मुहब्बत सीख लो,
सर्वस्व दे संसार से शुभ भावना की भीख लो ॥५८॥

अश्लील ग्रन्थों से कभी सहयोग जो करते रहे,
उद्वृत्त विप्लुत गीत से जो व्योम को भरते रहे।
वे आज खुद पछता रहे हैं और भी पछतायेंगे,
अध्यात्मविद्या को नहीं जब तक पुनः अपनायेंगे ॥५९॥

तुम दूसरों के लाभ में ही लाभ निज माना करो,
उपकार में ही स्वार्थ के तादात्म्य को जाना करो।
सन्तुष्ट हो बैठो न तुम अपनी समुन्नतिमात्र से,
परहित सतत साधन करो जब तक बने इस गात्र से ॥६०॥

स्वातन्त्र्य सब को इष्ट है इस का न बोध हुआ कहीं,
पर पूर्ण उच्छृङ्खल परिस्थिति अर्थ इस का है नहीं।
सो देशहितकारी नियम में लोग सब परतन्त्र हैं,
हां व्यक्तिगत आयोजना में सब प्रकार स्वतन्त्र हैं ॥६१॥

ये दश नियम मैंने चुने हैं लोकसंग्रह के लिए,
दौर्बल्य और अबोध के अश्रान्त निग्रह के लिए।
आगे बढ़ो शुभ कर्म में इन को यथाविधि ध्यान में,
रख भद्र आस्तिक भाव से अनुपम बनो विज्ञान में ॥६२॥

सोचे बिना कुछ पुस्तकों का दास होना पाप है,
जो रूढ़ियों के भक्त हैं उन के लिये अनुताप है।
ऐसा लिखा है इस लिए ऐसा करो यह बात क्या,
है देश काल विशेष की तुम को नहीं गति ज्ञात क्या ॥६३॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कीड़े बने हो पुस्तकों के और कुछ करते नहीं,
पाश्चात्य विद्यापीठ के अपमान से डरते नहीं।
साहित्य इङ्गलिश का पढ़ा तो कौन सा फल पा लिया,
अनुवाद जो उस का न अब तक आर्य भाषा में किया ॥६४॥

प्रभु के भरोसे पर पड़े रहना महा अन्याय है,
इन हाथ पैरों से तुम्हें करना उचित व्यवसाय है।
क्या स्वावलम्बन छोड़ कर जीना तुम्हें स्वीकार है,
जो कर्म से वञ्चित करे उस धर्म को धिक्कार है ॥६५॥

जो खाक का पुतला बना वह खाक में मिल जायगा,
निस्सार यह संसार फल अपने किए का पायगा।
यह सूत्र जिस के पास है उस को किसी का त्रास क्या,
हिलता नहीं यदि हाथ तो मुंह में पड़ेगा ग्रास क्या ॥६६॥

किस धर्म के उद्देश्य से गङ्गा नहाते हो यहां,
इन मुफ्तखोरों के लिए क्यों जर बहाते हो यहाँ।
है पास पानी के अगर अपवर्ग दर की चाबियां,
तो मुक्त क्यों होती नहीं हैं तैर कर मुरगावियां ॥६७॥

भागीरथी के तीर का जो नीर और समीर है,
पी कर उसे नीरोग होता और पुष्ट शरीर है।
पर वारि से निर्वाण की आशा दुराशामात्र है,
निष्काम करता कर्म जो इस क्षेम का वह पात्र है ॥६८॥

यह लोकसृष्टि अनादि है यह दर्शनों का सार है,
विद्वान हो या मूर्ख हो मदनान्धता दुर्वार है।
चपलासदृश चल चित्त वाली भामिनी कुलमूल है,
तो जाति की देना दुहाई तर्क के प्रतिकूल है ॥६९॥

अच्छा यही माना सही यह विश्वरचना सादि है,
आदिम पुरुष के वर्ण का तब भी अनिश्चय आधि है।
माता पिता उस के न थे तो वर्ण का निर्णय कहां,
ले कर प्रथम से अन्त तक है अव्यवस्था भय यहां ॥७०॥

क्या देह के सन्ताप से चित पातकों का हान है,
अघ को तरक्की और यों देना निरा अज्ञान है।
भगवान ने ऐसे जनों की आसुरी खसलत कही,
दुष्कर्म को सत्कर्म फिर भी मान क्यों खलकत रही ॥७१॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हिंसा समर को छोड़कर अन्यत्र समझो त्याज्य है,
मलिका यही है पापपुर में कर रही जो राज्य है।
कमजोर को देना मिटा परिवाद है बलवान का,
नर भूतहिंसानिरत ही प्रतिरूप है शैतान का ॥७२॥

जिस से हयात मिली हमें वह शक्ति ही देगी कजा,
अधिकार क्या है गैर को जो प्राणघातक दे सजा,
अतएव फांसी पर चढ़ाना यह भयानक बात है,
यह न्याय की ही आड़ में इन्सानियत का घात है ॥७३॥

बस घात घातक का हुआ तो टल गई सिर से बला,
पर दोष के आधार पर क्या दोष करना है भला।
जिस से सुधार न हो सके देता न जो अनुताप है,
क्षत को न जिस से तोष हो वह दण्ड भारी पाप है ॥७४॥

परनारियों के हुस्न में दिल को लगाना है मना,
दशकण्ठ ने दशकण्ठ दे कर सिद्ध की क्या साधना।
मिथ्याचरण के सामने शिर मृत्यु तक का झुक गया,
जब साथ ही धन धर्म के बिल जिन्दगी का चुक गया ॥७५॥

हर्सो हवा को छोड़ कर तुम दान के रागी बनो,
अस्पृश्य कर अस्पृश्यता को मान के भागी बनो।
कज्जाक तुम को लूटते हैं साधुओं के रूप में,
संभले न तुम तो ये गिरा देंगे अजल के कूप में ॥७६॥

मख में निधन हैवान को यदि स्वर्ग देता हो कहीं
निज तात का हो घात तो यजमान क्यों करता नहीं।
जब शाक से ही यह अभागा पेट जा सकता भरा,
तो घोर हत्याकाण्ड यह किस हेतु है क्या माजरा ॥७७॥

मृत जन्तुओं की तृप्ति में यदि श्राद्ध कर्म समर्थ है,
तो फिर मुसाफिर को सफर का खर्च देना व्यर्थ है।
यमलोक की दारुण कहानी धूर्त जन का गीत है,
सुन कर पुरोहित से जिसे यजमान होता भीत है ॥७८॥

तुम दूसरों को दे रहे हो रत्न निज यह है बुरा.
प्रक्षिप्त स्मृतियों के पदों का गीत गा कर बेसुरा।
तुम को अशुद्धों ने बिगाड़ा शुद्ध करता हूँ अतः,
शुभ दृष्टि के हित शुद्ध हो यह हुक्म है श्रुति का स्वतः ॥७९॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जब आग लेने को गये तो बखश दी पैगम्बरी,
ईसा खुदा का पुत्र था सुनलो कथा कौतुक भरी।
मिलने खुदा से थे गये हजरत कहानी क्या गढ़ी,
आई मुझे सहसा हंसी जब बात यह मैंने पढ़ी ॥८०॥

ऐसी कथा पर जाहिलों की तुम न ध्यान दिया करो,
सच्ची प्रकृति अध्यापिका से सत्य ज्ञान लिया करो।
त्रैगुण्यविषयक वेद में तीनों गुणों का सार है,
कर्तव्यनिर्णय के लिए वह लोक का आधार है ॥८१॥

विद्वज्जनों की चाहिए करनी उचित आराधना,
हो ब्रह्मचर्यविशिष्ट शुचिता और आर्जव साधना।
उद्भिज्ज का ही अशन में करना उचित उपयोग है,
यों देहसंयम की विधा स दूर करना रोग है ॥८२॥

जो सत्य हो हित और प्रिय जो क्लेशनिष्पादक न हो,
वाग्मित्व पा कर वाक्य वह गृह या सभा में तुम कहो।
स्वाध्याय के अभ्यास से करना भला न प्रमाद है,
वाचिक तपों का इस तरह स्मृति ने किया अनुवाद है ॥८३॥

संशुद्धि भावों की तथा मन की अबोध प्रसन्नता,
दृढ़ आत्मनिग्रहयोग से सब काल में सम्पन्नता।
सौम्यत्व आकृति और मन में मौन की आयोजना,
यह मानसिक संयम तुम्हें देगा बना उन्नतमना ॥८४॥

शम दम तपस्या शौच आर्जव शान्ति जिस में देख लो,
आस्तिक्य ज्ञान तथा अतुल विज्ञान जिस में लेख लो।
उस व्यक्ति को ब्राह्मण कहो निर्णीत कर्मविधान से,
वह जब मिले संमान्य है निर्व्याज अभ्युत्थान से ॥८५॥

घृति शौर्य से सम्पन्न हो जो दक्ष तेजस्वी बड़ा,
रण में अचल सा जो अचल निर्भीक रहता हो खड़ा।
ऐश्वर्यशाली और जिस को दानगौरव प्राप्त हो,
उस धीर क्षत्रसमाज से फिर क्यों न भारत व्याप्त हो ॥८६॥

कृषि के बिना नरजाति का जीवन निराशाग्रस्त है,
गोवंशवर्द्धन के विना मानवमहत्ता ध्वस्त है
व्यापार हाय अपार वह जाता रहा इस देश का,
उन वैश्यरत्नों की कमी कारण बनी इस क्लेश का ॥८७॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जो योगिजन की शेमुषी का भी अगोचर कर्म है,
वह पेट पापी के लिए ही आज सेवाधर्म है।
टूटे हुए हैं पंर तो हो किस तरह भारत खड़ा,
स्मृति के सहारे हो रहा है जुल्म यह तुम से कड़ा ।।८८।।

मैं वहुत कहने के लिए दिल को नहीं करता कड़ा,
यह वक्त भी है तङ्ग हम को काम करना है बड़ा।
प्राचीन ग्रन्थों का करो आदर यही है इल्तजा,
जो काम नाजेवा करे देगी उसे कुदरत सजा ।।८९।।

इस के अनन्तर मुद्रणा ऋषिराज के मुख की हुई,
या हिन्द के दुर्भाग्य की या दस्यु के सुख की हुई।
शतधार और सहस्रधार उदार उस व्याख्यान की,
धारा अनेकों बह रहीं जनता नहा ले आज की ।।९०।।

चतुर्थ सर्ग समाप्त

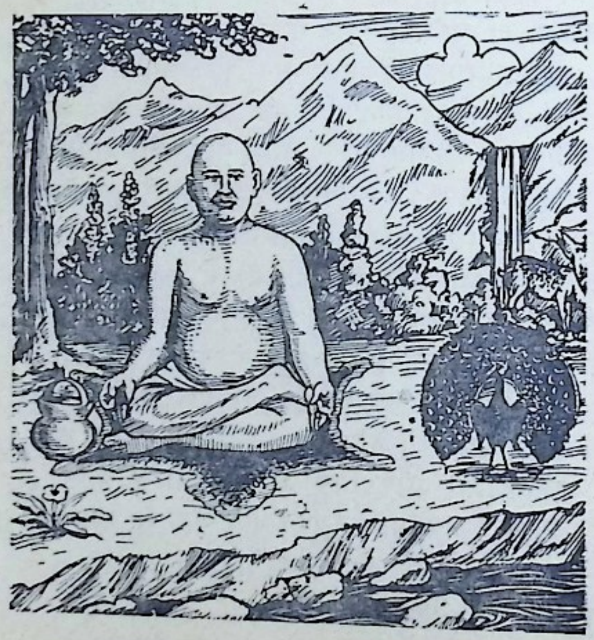

तपस्या में लीन : स्वामी दयानन्द

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

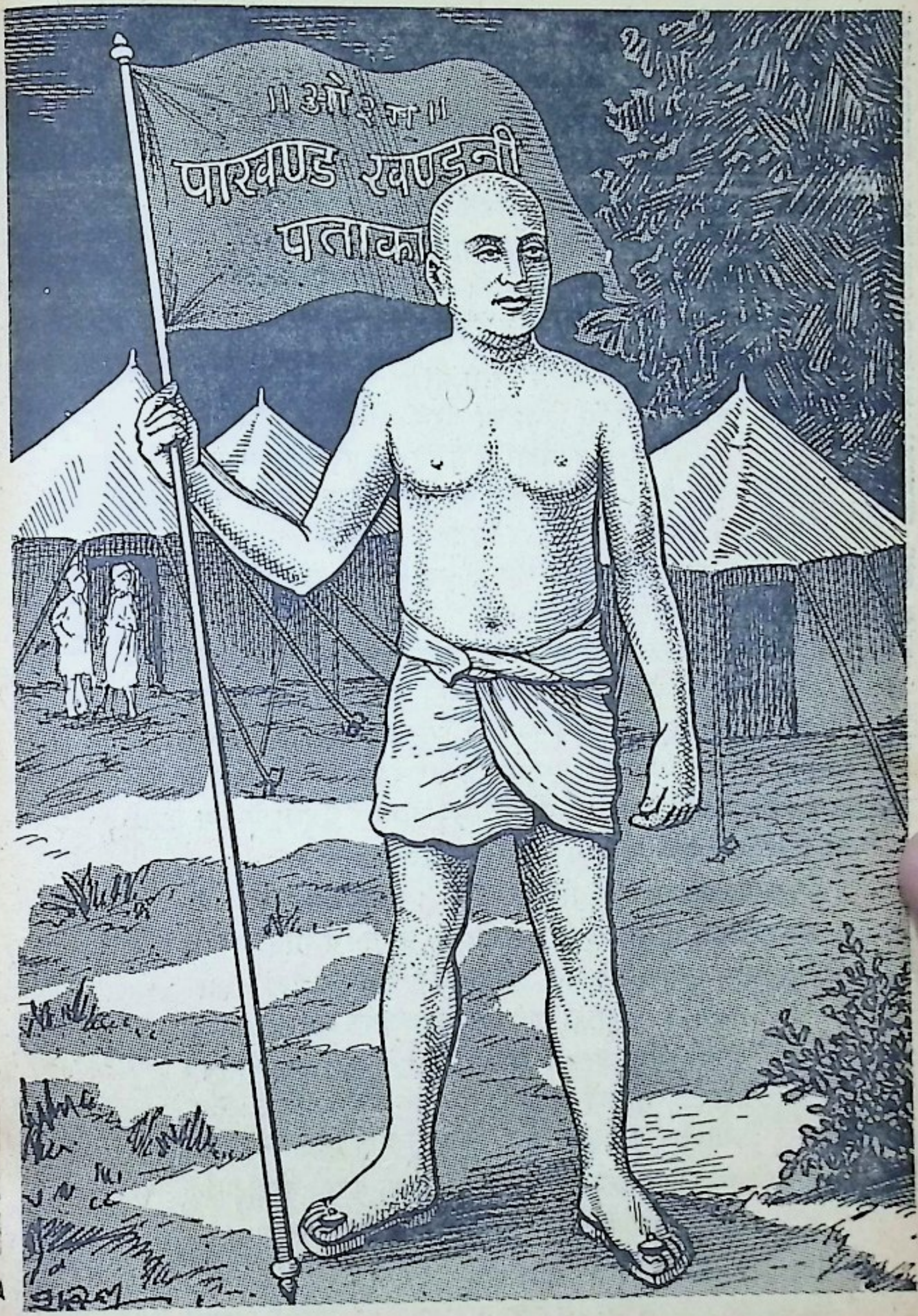

पाखंड खंडिनी पताका लिए ऋषि दयानन्द

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

लोग घरों से निकल कहीं स्पृहणीय भाव से जाने को,
खयालात के मुवादले से नई नसीहत पाने को।
उत्कण्ठित थे सुन कर महिमा किसी अजय्य यतीश्वर की,
शुभ अवसर पर साथ उन्हीं के चली कल्पना कविवर की ।।१६।

पहुंचे सब आनन्दबाग में जहां वक्तृता निश्चित थी,
वक्ता के व्यापक प्रभाव से मोहित जनता विस्मित थी।
पेश हुआ प्रस्ताव सभा में अनुमोदित हो पास हुआ,
विजय घोष से सभाधीश का तब आसन पर न्यास हुआ ।।१७।।

सभ्यों के बहुमान से विनत हो बठे हुए क्षेम से,
वक्ता के वदनारविन्दमधु को पीते हुए प्रेम से।
आविर्भूत हुई प्रशान्त मुख से गाथा सभानाथ के,
गाने में जिसकी प्रशस्ति न कभी वाणी नदीना थके ।।१८।।

वक्ता का गुण वाक्य के नियमतः प्रामाण्य में इष्ट है,
मेरी तो यह बात ही समझ में आती नहीं क्लिष्ट है।
कोई भी कह दे प्रमाण वह है जो बाध से मुक्त हो,
जो प्रत्यायक हो जिसे न सुन के सन्देह से युक्त हो।। १९।।

खोजें कारण की विशुद्धि तब तो होगी व्यवस्था कहां,
सोना भी दुशवार है कि परतःप्रामाण्य माना जहां।
भाट्टों के हम क्यों चलें न पथ में जो ज्ञान से प्रोत है,
जो आधार ससार वेद मत का आस्तिक्य का स्रोत है ।।२०।।

जो आगे चल आंख मूंद कर ही है मानना एक को,
तो विश्वास करें नहीं प्रथम ही क्यों पूर्व विज्ञान में।
निष्ठा है अनुमान में पर नहीं विस्रम्भ प्रत्यक्ष में,
तर्कों की यह देख कौतुककथा आती मुझे है हंसी ।।२१।।

ऐसी हालत में विशेष कहना मेरा यहां व्यर्थ है,
वक्ता के गुणगान का कुछ नहीं उद्देश्य या अर्थ है।
व्याख्याकौशल और शास्त्रपटुता जो सर्वथा स्पष्ट है,
तो बेकार विचार से समय को खोना महा कष्ट है ।।२२।।

वेदों के प्रतिकूल वादमत के जो ध्वंस में दक्ष है,
धूर्तों के जिनके समक्ष जमने पाते नहीं पक्ष हैं।
देखी थी जिन की असीम तुमने शास्त्रार्थ में धीरता,
देंगे ये ऋषिराज आज कृपया शिक्षा ऋता सन्मता ।।२३।।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

यों दो चार गंभीर वाक्य कहके सम्पन्न सद्भाव से,
वाग्मी ने उपदेशहेतु ऋषि से की प्रार्थना चाव से।
तत्कालीन अदम्य हर्ष रव ने त्रैलोक्य में व्याप्त हो,
भावी वैदिक बोध के विजय का सन्देश मानो दिया ॥२४॥
विकट पातक के विनिपात के, निकट नाटक की कर योजना।
विनय से नय के जय के लिये, अब उठे ऋषिराज समाज में ॥२५॥
श्रुतिमनोहर वैदिक मन्त्र के, विशद अर्थविवेचन में कृति।
अघविहीन तपोधन विप्र ने, वचन का विनियोग वहां किया ॥२६॥
निगम आगम के उपदेश में, निपुण वादिमतङ्गजकेसरी।
बिबुधतल्लज के रसनाग्र में, कर चली मृदु नर्तन भारती ॥२७॥
प्रकृति जीव तथा जगदीश ये, श्रुतिविनिश्चित तीन पदार्थ हैं।
समझ के इनको मृतिबन्ध से, खिसकते सकते तुम हो सुखी ॥२८॥
अखिलशक्तिसमेत प्रधान से, नियत जो त्रिगुणात्मक भाव है।
इस चराचर कार्यविधान का, कपिल ने उपादान है किया ॥२९॥
प्रथम उद्भव से निज हेतु में, निहित कार्य न हो यदि शक्तितः।
तब उसे न कृति कर पायेगा, गगन के सुम की रचना कहां ॥३०॥
पट नहीं बनता पय से कभी, दधि नहीं सकता बन तन्तु से।
अखिल में यदि तुल्य असत्त्व हो, नियम है किस हेतु निदान का ॥३१॥
अखिल कारण से सब कार्य हों, यदि विशेष कहीं कुछ भी न हो।
विगत है सब ठौर तदात्मा, यदि वृथा फिर कारणकल्पना ॥३२॥
नियत हैं सब में निज शक्तियां, इसलिये अवकाश न दोष का।
यह जवाब असत् प्रतिपक्ष का, अधम की धमकी सम तुच्छ है ॥३३॥
नहीं पता हो यदि लक्ष्य का तो, हजार भी लक्षण क्या करेंगे।
समर्थ भी हो यदि हेतु तो भी, पैदा करेगा वह शक्य को ही ॥३४॥
निरूप होता न विकारवाला, विशेष कोई उसमें न होगा।
अरूपता क्या यदि विक्रिया हो, अतः उसे कारण क्या करेंगे ॥३५॥
नहीं ठिकाना यदि कार्य का तो, किसे बना कारण धन्य होगा।
कैसे कहेंगे उसको पिता जो, त्रिकाल में सन्ततिहीन है ॥३६॥
प्रमोद देती हृदयेश को है, तथा सपत्नीजन को तपाती।
पद्मावती आतुर आशिकों को, विमूढ़ है यौवन से बनाती ॥३७॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रमोद का कारण सत्त्व ही है, सन्ताप की है रज से प्रसूति ।
विमोह होता तम से हमेशा, तमाम ऐसा बुध मानते हैं ॥३८॥

ऐसी दशा में सब वस्तुओं को, त्रैगुण्य का मिश्रण मान लेना ।
विचारणा के अनुरूप ही है, प्रत्यक्ष का बाधक कौन होगा ॥३९॥

सुखादि से अन्वित व्यक्त सारा, पैदा हुआ तन्मय सेतु सेही है ।
विस्पष्ट होंगे अवधान से ये, प्रधान के साधन हैं प्रधान ॥४०॥

प्रधान संज्ञा उस हेतु की, सत्त्वादि का है वह संनिवेश ।
जड़त्व से है वह अन्ध किन्तु, उसे दिखाता पथ जीव पङ्गु ॥४१॥

निचोड़ के कपिल तन्त्रपुष्प का, प्रवीणता से यह अर्क आपके ।
प्रविष्ठ मैंने श्रुतिमार्ग से किया, दिमाग में है मत भूलना इसे ॥४२॥

कहा तभी यों एक धूर्त ने, नहीं मिली जो यह बात साङ्ख्य में ।
पडे गहीं क्यों तब घ्राण आपका, महाछुरी की इस तेज धार में ॥४३॥

हुई रसज्ञा अपराधिनी यदि, व्यथा सहे दारुण दीन घ्राण क्यों ।
विडम्बना है यह दण्ड की सखे, ऋषीन्द्र से यों सुनके सभा हँसी ॥४४॥

पड़ी कहां से निज नाश के लिए, अनार्य मक्खी यह दुग्धपात्र में ।
सभेश के यों अविचार्य हुक्म से, प्रबन्धकों ने उसको हटा दिया ॥४५॥

ऋपीश के चित्तसमुद्रमध्य से, यथेष्ट लेके उपदेशवारि को ।
प्रसादकारी मुलमेघ दृष्टि का, सभामही को फिर सींचने लगा ॥४६॥

तनोज्ञविन्यासविशिष्ट विश्व को, परन्तु कैसे जड़ने बना दिया ।
जवाब में है इस प्रश्न के किया, गया वही पेश परेश सर्ववित् ॥४७॥

स्वकीय आरम्भक जो प्रतीक के, निवेश से संयुत है विशेषतः ।
सबोध होगा उसका निमित्त ज्यों, घटादि में है कृति कुम्भकारकी ॥४८॥

गृहीत है इन्द्रिययुग्म से तथा, विवाद का आस्पद जो अगम्य है ।
अभीष्ट है चेतन पूर्व में उसे, विधर्मता से परमाणु मान लो ॥४९॥

आदि कारण चराचर का जो, है अधिष्ठित सचेतन से ही ।
रूप आदि युत है इस हेतु, तन्तु कार्य करते निज जैसे ॥५०॥

पाप पुण्य यदि वा परमाणु, है नियन्त्रित सचेतन से ही ।
चूं कि हैं गति अनन्तर पाते, स्थान के विदित ज्यों तुरि तन्तु ॥५१

आदि में भुवन की रचना के, घूमते सदृश ही पशुओं के ।
थी नसीहत कहो किसने दी, मान मेय मित में पुरुषों को ॥५२॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बुद्धिशील इस कारण से ही, हो अधिष्ठित चराचर व्यक्त।
दुःख और सुख का बनता है, लोक के हित निमित्त विशेष ॥५३॥
क्यों कि कार्य यह है जग सारा, चेतनारहित और विनाशी।
क्या नहीं विदित है तुम को कि काटती खुद कटार नहीं है ॥५४॥
कर्तृता जगत् की जिसमें है, सर्वबोध उसमें ध्रुव होगा।
क्या कुविन्द पट को बुन लेगा, तन्तु से अगर हो अनभिज्ञ ॥५५॥
भूमि चन्द्र रवि और सितारे, व्योम में अनवलम्ब खड़े हैं।
ये जरूर सहसा गिर जाते, थामता न इन को यदि कोई ॥५६॥
सिद्ध है इस प्रकार अबाध, युक्ति और शुचि आगम से भी।
विश्व के उस नियन्त्रणकारी, तत्त्व की नियत वाहिद सत्ता ५७॥

ऋषिराज का उपदेश सुन कर एक द्विजवर ने कहा,
तुम मूर्ख हो या विज्ञ हो मुझको न निश्चय हो रहा।
गम्भीरता से सोच उत्तर धीर वक्ता ने दिया,
मुझको विषय के भेद ने है वाच्य दोनों का किया ॥५८॥

बोला सभाधिप बीच में व्याख्यान का यों टूटना,
अंकुर गुलिस्तां में कहीं मानो स्नुही का फूटना।
बेकार हस्तक्षेप करना सह्य है मुझको नहीं,
रक्खें सभासद् ध्यान यह छेड़े न शठ ऋषि को कहीं ॥५९॥

ऐसे क्षणिक प्रतिकार से वाणी नदी वह डगमगी,
श्रुतिविज्ञ की निज मार्ग को कुछ छोड़कर बहने लगी।
दृढ़ तर्क जिसका पार था आगम अबाध अवार था,
अभिगम्य जिसका अन्तमें निर्वाण पारावार था ॥६०॥

कुछ लोग कहते हैं कि नर का वानरों से मेल है,
क्रमबद्ध ह्रास विकास से मखलूक का यह खेल है।
आचार्य तो थे ही मगर पशु पूज्य पूर्वज भी बने,
इसका रहस्य सुनो तनिक तुम क्या लगे हो सोचने ॥६१॥

क्रम से विकास हुआ जगत् का सत्य यदि यह जल्प है,
कच्छप तथा सर्पादि से क्यों आयु नर की अल्प है।
कुछ का विकास हुआ तथा कुछ ह्रास भी यदि यों कहो,
तो सिद्धसाधन मन्त्र से ही मुख तुम्हारा मूक हो ॥६२॥

क्यों हैं अजा के स्तन गले में ध्यान इस पर दीजिये,
वह अश्वनर में क्यों नहीं इसका समन्वय कीजिये।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वैचित्र्य है यह कर्मगति का दूसरा चारा नहीं,
इस बात में प्राक्तन बुधों ने व्यर्थ शिर मारा नहीं ॥६३॥

कारण बिना ही कार्य की उत्पत्ति हैं कुछ मानते,
अन्वय तथा व्यतिरेक के होते हुए हठ ठानते।
गोकण्टकों में तीक्ष्णता का हेतु दुर्लभ है यथा,
दुःखादि कादाचित्क का भी कुछ नहीं कारण तथा ॥६४॥

राजीव केसर आदि को वैचित्र्य किसने है दिया,
फिर केकियों के चन्द्रकों को चित्र किसने है किया।
जल शीत आग गरम हवा में स्पर्श का समभाव है,
किसने रचा यह बस नियामक एक मात्र स्वभाव है ॥६५॥

प्रत्यक्ष ही से सिद्ध है जब कार्यकारण की प्रथा,
तो यह निरास्पद कल्पना निर्मूल ही है सर्वथा।
यदि हेतु कोई साध्यसाधन के लिये अनुकूल है,
तब तो अकारणवाद पर वह हूल देता शूल है ॥६६॥

उद्दण्ड एक शठ ने उठ बीच में ही,
व्याख्यान में कुशल वेदधनाग्रणी से।
श्रीकण्ठ के प्रणत हो अभिषेकहेतु,
रक्खा हुआ निकट में जलपात्र माँगा ॥६७॥

गाम्भीर्य से सरलता गुण को मिलाते,
वाग्मी जरा ठहर के कहने लगे यों।
है आप के वदन भाजन पास ही तो,
क्यों गैर का मुंह भला फिर ताकते हो ॥६८॥

तत्काल हाजिरजवाब गुणाग्रणी ने,
यों धूर्त के वदन में कर वन्द ताला।
उत्साह से तरफ आर्य सभासदों की,
प्रेमाकुला नजर हो स्मयमान डाली ॥६९॥

भूलोक के धरण पोषण में प्रवीण,
हामी बने अमित पार्वत सभ्यता के।
दुर्भेद्यवीर ऋषिराज धरेन्द्र ने लो,
वाणीमयी सुरधुनी फिर से बहा दी ॥७०॥

आभाकरादि जिसको जड़ मानते हैं,
चैतन्य और जड भाट्ट जिसे बताते।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कर्तृत्व से रहित साङ्ख्य जिसे बताता,
आत्मा वही विषय है अब वक्तृता का ॥७१॥
आत्मा सनातन तथा विभु वस्तु है जो,
भोक्ता कृती स्वकृत कर्म भले बुरे का।
बुद्ध्यादि से नवनिकायविशिष्ट होना,
संयोग जन्म उसका श्रुति ने कहा है ॥७२॥
विज्ञान चाह कृति के समवाय को ही,
कर्तृत्व दार्शनिक हैं उसमें बताते।
सन्ताप और सुख की बुध मानते हैं,
संवेदना नियत भोग अद्वष्टजन्य ॥७३॥
इच्छासुखादिक कणादमतानुसार,
हैं भावरूप कृतिजन्य गुणत्वशाली।
रूपादि के सम विना अवलम्ब के वे,
कैसे रहें इस लिये ध्रुव एक मानो ॥७४॥
भावत्व निश्चित विशेषण हेतु में है,
सो ध्वंस में निहित है व्यभिचारशङ्का।
है ध्वंस का नियत कारण किन्तु कोई,
विद्वान भाव उसको न कभी कहेगा ॥७५॥

अन्य के देखे हुए को अन्य करता याद क्यों,
जान कर भौतिक अपक्रम हो न गत जडवाद क्यों।
वासनासङ्क्रम नहीं आत्मा नियत अभिधान है,
है नहीं गति अन्य स्थिर में यह प्रवल अनुमान है ॥७६॥

निगम के उपदेशकरत्न की, इस प्रकार मनोरम भारती।
सुन समाज समागत हर्ष से, अभय था भय था पर पक्ष में ॥७७॥
सुजनता जनता विनता उन्हें, कर प्रणाम वहाँ दिखला रही।
तज दिया जिसने भवभोग को, वह सभाजनभाजन क्यों न हो ॥७८॥
विजय हो श्रुति की ऋषिराज की, अचल हो स्थिति आर्य समाज की।
तुमुल हो यह घोष विपक्ष के, श्रवण में विष सा भरने लगा ॥७९॥
जब समाप्त हुई वह जल्पना, चल पड़ी उस शब्दसमूह को।
वितत सन्तत क्या करती हुई, मृदु हवा जग के हित के लिये ॥८०॥
इस पदार्थविवेचनयुक्ति को, समझना जिसका दुशवार है।
लिख दिया जिसने वह धन्य है, कविशिरोमणि की वर लेखनी ॥८१॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

छटा सर्ग

—:o:—

नभ में घन के घटापोट से आवृत है तारों का व्यूह,
ज्यों भारत में अंगरेजों से दवा हुआ था क्षत्रसमूह।
कालघटा ने अन्धकार का दिया जमाने को है रङ्ग,
ज्यों दुर्दम गोराशाही का हर सू फैल रहा है ढङ्ग ॥१॥

बिजली है या सुरबालाएं मुंह निकाल झट करतीं बन्द,
उन्हें विकल जब कर देती है मार्शल ला की भीति अमन्द।
टपक रहीं हैं कुछ कुछ बूंदें करने को क्षिति से संयोग,
या सिगार के सविष धूम से हुआ व्योम को पीनस रोग ॥२॥

पल भर में कर घोर गर्जना लगा बरसने घन विकराल,
या शराब ज्यादा पी कर है हुआ वमन से यह बेहाल।
या अपने काले अञ्चल को शोकचिह्न सब तरफ पसार,
देख क्षत्रियों की दुर्गति को रोती है कुदरत लाचार ॥३॥

पत्र आक के सूख सूख कर झड़ते हैं सुन कर घननाद,
रजवाड़ों की जनता जैसे होती है दिन दिन बरबाद।
क्षुद्र सिपाही दल से जुगनू घूम रहे हैं चारों ओर,
पादरियों की शैली से क्या मचा रहे हैं मेंढ़क शोर ॥४॥

पेड़ों पर बन्दर बैठे हैं ठिठुर रहे हैं किन्तु जनाब,
गद्दी को रौनक देते हैं ज्यों महफिल के धनी नवाब।
नाच रहे हैं मोर प्रिया के साथ प्रमद से हो कर पुष्ट,
टुकड़खोर नौकरशाही के होते हैं ज्यों क्लब में तुष्ट ॥५॥

जल धरणी पर गिर कर होता कलुष और शुचिता से हीन,
ज्यों पश्चिम से मिल कर भारत आज हुआ है दुर्विध दीन।
पुष्टि रुग्ण की बुद्धि मूर्ख को और क्लीव की जैसे सृष्टि,
वैसे ही फलशून्य हुई है अन्धकार में मानव दृष्टि ॥६॥

बूंद बूंद को ही सञ्चित कर भर जाते हैं विपुल तलाब,
रिश्वत यथा कम्पनी वाले लेकर बन गये नवाब।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

घर में लोग नीड़ में पक्षी गहन कन्दराओं में शेर,
और म्यान में लेट रही है वीर क्षत्रियों की शमशेर ॥७॥

मेघपटल में छिपी हुई है तारावलि किस लिये तमाम,
क्या उसने बुरका डाला है अपनाकर गर्हित इस्लाम।
या यवनों के घृणित वेष पर नजर नहीं उसकी पड़ जाय,
इस खयाल से छिपा लिया है परदे में उसने निज काय ॥८॥

कृषिकारों के कोमल दिल में उठती है कुछ नई उमङ्ग,
टैक्स और ऋण की स्मृति से पर होता है द्रुत उसका भङ्ग।
धन से दैन्य मोल लेने में है उनका पुरुषार्थ समाप्त,
घर में तो है ही तम उनके पर जीवन में भी है व्याप्त ॥९॥

कुम्भकार ने कुम्भ सुखाये हुए वृष्टि से लेकिन नष्ट,
धोबी के अवदात वस्त्र भी भीग गये हैं कैसा कष्ट।
पर मालिन के मालिक की तो दिलकी कली खिली है आज,
हैं खानाबदोश चिन्ता में महलों में खुश हैं नरराज ॥१०॥

घनाघनों में व्यक्त जगमगी होती है बिजली की धार,
क्या कर में काली पलटन के चमक रही नङ्गी तलवार।
इनकलाब की चिनगारी का नभ में क्या हो गया प्रचार,
प्रकृतिवधू के केशपाश में गुम्फित है क्या चम्पकहार ॥११॥

होने लगी वेग से देखो ओलों की कैसी बौछार,
ज्यों सुधार करने वालों पर पड़ती है पत्थर की मार।
भाग रहे हैं लोग घरों को सिर पर काला छाता तान,
पर खेतों में कृषक डटे हैं करने को सुख का बलिदान ॥१२॥

फैला है कुहरा दिगन्त में परदे का कर रहा मजाक,
या ब्रिटेन के शासन की यह उड़ती है भारत में खाक।
जोर शोर से सुनते हैं जब लोग घरों में घन का नाद,
क्लाइव की बन्दर घुड़की की आती है रह रह कर याद ॥१३॥

तप्त देह में जलसेचन से हुआ भूमि को है ज्वर साफ़,
पराधीनता से उकता कर उगल उठी यह अथवा भाफ।
सन्नाटा सब ओर छा रहा चारों का न कहीं सञ्चार।
तो भी जयपुर चमक रहा है जो है वस्तुकलाभाण्डार ॥१४॥

इसके पूर्वरूप अम्बर को दिया मान ने था सम्मान,
अकबर की भुजबल से जिसने फैला दी काबुल में शान।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

विद्याधर के नकशे पर था किया गया जिसका निर्माण,
आदिवीर जयसिंह भूप ने स्थायी जिसे दिया था प्राण ॥१५॥
वीर और शृङ्गार कला का करने को सम्मिलित प्रयोग,
होता है कोकिल कूजन से जिसमें सिंहनाद का योग।
कुदरत के चित्रों का जिसमें है सङ्कलित हुआ आभास,
दुनिया में विश्रुत है इसका बाग मनोहर रामनिवास ॥१६॥
इसकी समता का भारत में शहर नहीं है कोई अन्य,
और हाल में यह होता है रामसिंह शासन से धन्य।
बौद्धों के दिल से भी चौड़ी सड़कें हैं इसकी दिलचस्प,
मरकत की किरणों से इसके आपण में विरूढ़ है शष्प ॥
यहाँ तानतीं हैं महिलाएँ भृकुटिभङ्ग से नाहक चाप,
जब उनके प्रेमी पैरों पर गिर पड़ते हैं दिल से आप।
जब उनके लोचनशर से ही बिंध जाता है चित्तकुरङ्ग,
तो इसको वे क्यों देती हैं अञ्जनरूप जहर का रङ्ग ॥१८॥
राजमहल में बन्दूकों का पहरा है...कुछ देर विचार,
कवि की सूक्ष्म कल्पना पहुंची खिड़की से कर पथ को पार।
देख वहाँ की छटा निराली विस्मित भला न होगा कौन,
नृत्यगीत की धूम नहीं थी रखता था मुख सब का मौन ॥१९॥
बिछे हुए रेशमी गलीचे जिन पर बैठे थे सरदार,
लगा हुआ था रामसिंह का आलीशान बड़ा दरबार।
लेकिन वहां अमृत के प्याले हुए नदारद क्या थी बात,
औरसुनहरी परियों का भी नजर नहीं आया सङ्घात ॥२०॥
महफिल में मौनी बाबा क्या बन बैठे सितार के तार,
बाहुलता के हार देवियां नहीं दे रहीं थीं उपहार।
शतरञ्जों की चालों में था बाकी नहीं एक भी रङ्ग,
थे हताश हो रहे ताश भी देख वहां का अद्भुत ढङ्ग ॥२१॥
था वीरत्व यही सभ्यों में नहीं कटी थी अब तक मूंछ,
हिन्दू तो थे ही वे शिर पर चूंकि शिखा थी पशु की पूंछ।
चमक रहा था किसी किसी के कर में कङ्कण सा करवाल,
तिलकरूप में दास्यलेख से था लोगों का भूषित भाल ॥२२॥
वृद्ध क्षत्रियों के कण्ठों में कण्ठी से थी बनी लकीर,
जकड़े हुए उन्हें थी मानो जटिल गुलामी की जञ्जीर।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उनकी अंगुलियों से माला करती थी अजर्य सहयोग,
आजादी के दिन गिनते थे क्या उत्सुक हो कर वे लोग ।।२३।।

क्षत्रिय युवक वहां बैठे थे धरे हुए निज शिर पर हाथ,
क्या पुरुषार्थ करें वे उनका भाग्य नहीं देता था साथ।
अगर विदेशी हथकड़ियों से हाथ पाँव उनके खुल जायँ,
तो उनके प्रताप विक्रम से धरणीधर तक भी घुल जायँ ।।२४

नजर सभी की लगी हुई थी खुले हुए फाटक की ओर,
जोह रहे थे बाट किसी के आने की वे तज कर शोर।
आकृति से न विदित होता था उन्हें हर्ष था अथवा कष्ट,
किस इच्छा से एकत्रित थे भाव नहीं होता था स्पष्ट ।।२५।।

पूर्व नृपों के चित्र अनेकों सभाभित्ति पर थे संसक्त,
उबले बिना नहीं रहता था जिन्हें देख क्लीवों का रक्त।
इधर किसी का खड्ग टङ्गा था उधर किसी की स्थित थी ढाल
कहीं अशस्त्र किसी के करसे निहत सिंह की रक्खी खाल।।२६

उधर पास हो परदे में थीं बैठी हुईं रानियां शान्त,
बीच बीच में हो पड़ते थे बालक उनके कुछ सम्भ्रान्त।
किन्तु दासियां कर लेतीं थीं प्रेमाकुल मुख से पुचकार,
झट पट उनको अपने वश में शिरपरकोमलहाथपसार ।।२७।।

बजे घड़ी में आठ उसी क्षण विश्रुत हुए शब्द कुछ दूर,
आ पहुंचे ऋषिवर्य समय पर वादयुद्ध में दुर्जय शूर।
श्रद्धाप्रेरित सभ्यवर्ग ने झुक कर उनको किया प्रणाम,
छोड़ दिया गद्गद राजा ने अपना सिंहासन अभिराम ।।२८।।

श्रौत धर्म के विजय घोष से फटने लगा विपुल आकाश,
रोने लगीं दिशाएं मानो सह न सकीं सुख का उल्लास।
नीरवता ने पाया अपना खोया हुआ पुनः साम्राज्य,
क्यों इङ्गिलश सौभाग्यरमा ने बाद सैन्यविप्लव के प्राज्य ।।२६।।

वादिसिंह को रामसिंह ने सिंहासन पर कर आसीन,
कहा सुनो सब सावधान हो ऋषिवर का उपदेश अदीन।
बस फिर क्या था रङ्गमञ्च पर लगी दिखाने रसना नृत्य,
अनुगृहीत भारत भूलेगा जिसके नहीं प्रलय तक कृत्य ।।३०।।

वीर क्षत्रियो! देशदशा का तुम्हें नहीं है जरा खयाल,
रहते हुए तुम्हारे क्यों है हुआ हिन्द इतना बेहाल।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

तुम सुन्दोपसुन्द के नय से कर अपने दल बल को क्षार,
सोते हो मुचुकुन्द तुल्य क्या तन मन धन का भान बिसार ॥३१॥

अलक्षेन्द्र ने घेर लिया जब पोरस को पौरुष के साथ,
रहे देखते तुम नाटक सा नहीं बटाया उसका हाथ।
पहले ही यदि तक्षशिला का मिला न होता उससे भूप,
तो भारत में नहीं चमकता ग्रीक राज्यलक्ष्मी का रूप ॥३२॥

गिरफ्तार करके गोरी को छोड़ दिया क्यों बीसों बार,
अहो तुम्हारी करुणा का क्या बनता है रिपु ही आधार।
उस चौहानवंशभूषण को सिंहासन से कर यों दूर,
क्या पाया कन्नौजनाथ ने वह द्रोही था यदि वा शूर ॥३३॥

मानसिंह भी जम्बुक बनकर भूल गये निज कुल की शान,
उदयपुत्र के रोक उदय को क्षुद्र बने वे या कि महान।
वीर शिवाजी को तुमने थी दिखला दी दिल्ली की राह,
विजयशील जयसिंह नृपति की कौन पूर्ण करने को चाह ॥३४

दुख्तर को दाखिले हरम कर क्यों जीवित हो तजकर लाज,
छूना नहीं चाहता तुमको अथवा पतित जान यमराज।
यों मुगलों की घोर यन्त्रणा सह कर सँभल गये तुम खैर,
अन्दलीव बन अंग्रेजों के भाई तुम्हें कफस की सैर॥

महाराष्ट्र के शौर्यसूर्य को छिपा ब्रिटिशवादल के बीच,
तुमने ही अपने कुलपट में लगा दिया अपयश का कीच।
अन्तिम शाह चला वर्मा को जब कैदी का पढ़ने पाठ,
कहो तुम्हारो राजभक्ति को तब क्यों मार गया था काठ ॥३६

बचे डङ्क से बिच्छू के तो पड़े सर्पमुख में निरुपाय,
जिससे तुमने आग बुझाई उसी आब में डूबे हाय।
छुटकारा पाकर यवनों से कर उनके शासन का अन्त,
तुम गौराङ्ग महाप्रभुओं के पूजारी बन गये तुरन्त ॥३७॥

खड्ग शतघ्नी चाप आदि को करते थे जो पहले साफ,
बने पालिशर वे जूतों के सख्त कहूं तो करें मुआफ।
जिन से पहले बद्ध हुए थे महासमर में दानवराज,
वारवधू के केशपाश में उनके चित्त फंसे हैं आज ॥३८॥

जिनसे टकरा कर टूटे थे दन्त दिग्गजों के प्रत्यक्ष,
वनिताओं का स्तनाघात ही सह सकते हैं अब वे वक्ष।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जो मित्रों की रक्षा करने पहले जाते थे परदेश,
वे रणमें पशु सम कटते हैं पाकर मालिक का आदेश ॥३९॥

शत्रुहृदय फटते थे जिनके रौद्र धनुष की सुन टङ्कार,
पागल उन्हें बना देती हैं आज चूड़ियों की झङ्कार।
अमृत पान करने वालों को क्यों भाती है आज शराब,
दुग्ध और दाडिम के प्रेमी चखते हैं क्यों कलुष कबाब ॥४०॥

सूकर ऋक्ष सिंह आदिक के वध में नहीं तनिक पुरुषार्थ,
गोघातक के घातक बन कर क्षत्र शब्द को करो यथार्थ।
भेंट चढ़ाते हो देवी को पशु जीवन का कर अतिपात,
जो तकलीफ दीन को देते हैं उनका होगा अपघात ॥४१॥

तेग बहादुर ने था अपना शिर दे डाला दिया न सार,
चोटी के बदले यवनों की हम कटार के बने शिकार।
धन्य वीर बैरागी की भी खिंचो लाल चिमटों से खाल,
क्या इतने शोणित से रञ्जित हुआ नहीं देवी का भाल ॥४२

क्या पुत्रों के शोणित से ही देवी भरती है निज पेट,
हाय अभागे पशुओं का वह क्यों करवाती है आखेट।
अपनी रसना के लालच से दुर्गा को करना बदनाम,
इस शैतानपरस्ती का है हृदयविदारक ही परिणाम ॥४३॥

कितना भी मीठा हो चाहे सुन्दर शान्त विदेशी राज्य,
वह तो भी धर्मार्थविरोधी मधुमिश्रित घृत सम है त्याज्य।
अच्छा है गँवार उससे जो श्वानसमान परों के चाट,
पैरों को अपने जीवन के दिवस सरीढ रहा है काट ॥४४॥

सूत्रवयनकौशल के जिनको देती थी दुनियाँ सम्मान,
काटे गये अँगूठे उनके तुम्हें नहीं है इसका ध्यान।
नहीं प्रजा के पास अस्त्र हैं शून्य पुस्तकालय आज,
गद्दी को शोभा देते हैं कठपुतली बन कर नरराज ॥४५॥

तुम्हें कुचलने को रखते हैं ले कर खर्च तुम्हीं से सैन्य,
इसी लिये तो राजकोष में बढ़ा हुआ है इतना दैन्य।
रोदन प्रजा घरों में करती महलों में विलास के गीत,
ये बातें इस पुण्यभूमि में राजधर्म के हैं विपरीत ॥४६॥

ऐसी अगर जरूरत हो तो मैं सौ बार बोल दूं झूंठ,
साफ कहा था यों क्लाइव ने गया भाग्य जब उससे रूठ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सो असत्य कहने वालों का प्राप्त किया है तुमने सङ्ग,
इस कारण तुम पर भी अब क्या चढ़ने लगा झूठ का रङ्ग ।।४७।।

एक दूसरे को छूना भी शोक हो गया तुम्हें हराम,
मेरा हृदय सिहर उठता है देख धर्म का यह परिणाम।
आपस में अभियोग चलाना और कहाना फिर भी आर्य,
लड़ना और झगड़ना ही क्या शेष रहे वीरों के कार्य ।।४८।।

शैत्य धूप वर्षा का सह कर जर्जरकाय विषम आघात,
खेतों में किसान बेचारे खून सुखाते हैं दिन रात।
बेरहमी उन पर दिखला के करते हो इङ्ग्लैण्डविहार,
धन भारत का फूंक रहे हो जा कर सात सिन्धु के पार ।।४९।।

तुम यूरोपनिवासी हो या इसी हिन्द के हो फर्जन्द,
नहीं पहुंचता हूँ निर्णय पर देख तुम्हारी गति स्वच्छन्द।
अभी नहीं मैं कुछ कहता हूं क्यों कि समय है काफी दूर,
दिव्य दृष्टि से देख रहा हूं फैल जायगी क्रान्ति जरूर ।।५०।।

अम्वर का वहुमूल्य खजाना भरे हुए हैं जिसमें रत्न,
भाग न जायँ लुटेरे लेकर रक्षा का तुम करो प्रयत्न।
मनुकुलभूषण कुश से तुम को प्राप्त हुआ है जो करवाल,
कोहनूर हीरे का सा ही कर न बैठना उसका हाल ।।५१।।

अव यदि तुम यह नहीं करोगे कर देगी कुदरत लाचार,
तुम को इसी तरह करने को जिसका मैं कर रहा प्रचार।
नहीं रुकेगी हवा किसी से शीत न होगा रवि का धाम,
दव न सकेगी आग तूल से अब न रहेगा हिन्द गुलाम ।।५२।।

आड़ धर्म की लेकर मैंने वोया यहाँ क्रान्ति का वीज,
हिन्दू इसको निज शोणित से सींचेंगे जल क्या है चीज।
सत्याग्रह की जड़ के बल पर कुर्बानी का लेकर फूल,
आजादी का फल कर देगा यह उत्पन्न मधुर रसमूल ।।५३।।

तुच्छ गुलामी के गुलशन में इनकलाब को डालो आग,
आँच नशेमन को लगत ही पक्षी विकल जायगे भाग।
होली के नजदीक पर्व में वना मलिन वस्त्रों की खाक,
वोकर गङ्गा की धारा से पुण्यभूमि को कर दो पाक ।।५४।।

वेदों ने यह स्पष्ट कहा है दस्युवर्ग का करदो नाश,
वदिक हिंसा पाप नहीं है दुर्वलता हो जाय हताश।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

श्रद्धा मूर्तिपूजा के केवल खण्डन का है नहीं विचार,
सिर्फ यहां पर मैं आया हूँ जड़ता का करने संहार ।।५५।।
उसके लिये वही अच्छा है जिस पर जिसका हो विश्वास,
मेरा तो मतलब इतना है बनो रूढ़ियों के मत दास।
कूप पिता ने खुदवाया था पानी उसमें निकला क्षार,
जो उसको ही पीकर रहते जीवन है बस उनका भार ।।५६।।
शीघ्र सङ्गठन कर लो अपना पड़ी हुई है तुम में फूट,
इसी लिये तो मचा रहे हैं आकर यहां विदेशी लूट।
रोटी पर बिल्लियां लड़ें तो क्यों न गले बन्दर की दाल,
आपस में कुत्ते लड़ते हैं ले उड़ते हैं कौवे माल ।।५७।।
हैं सब के मस्तिष्क अलग तो कैसे होगा एक विचार,
अपना भाव प्रकट करने का रहे किन्तु सबको अधिकार।
देख संतरे को भी तुम यह कर सकते हो उचित विवेक,
भीतर उसके फाँकें हैं पर बाहर से दिखता है एक ।।५८।।
अतुल दया से दयानन्द ने इस प्रकार देकर आनन्द,
लोगों की इच्छा रहते भी विमल वक्तृता कर दी बन्द।
नव जलधर का गर्जन सुन कर होते हैं ज्यों मुदित मयूर,
त्यों ही उनके दिव्य वाक्य को पीकर फड़क उठे सब शूर ।।५९।।
एक वृद्ध ने कहा बात तो भगवान् है यह सब कुछ ठीक,
किन्तु पुराणों की गाथा को क्यों कहते हैं आप अलीक।
इसी बिना पर समझ रहे हैं लोग आप को कतिपय हेय,
भजन करो बैठे कुटिया में यहीं रहो तुम हे श्रद्धेय ।।६०।।
आशिक बहन हुई भाई पर यमीसूक्त में है यह सांच,
स्पष्ट महाभारत कहता है कृष्णा के प्रेमी थे पाँच।
ब्रह्मा का अपनी दुहिता से पाया जाता है अनुराग,
और विभाण्डक ने दे डाला हरिणी को यौवन का भाग ।।६१।।
बहुत सोचते हैं हम फिर भी आती नहीं समझ में बात,
मेरी इस भारी शङ्का का समाधान करिये हे तात।
अक्ल बेचकर—गर्ज उठे ऋषि आये हो सुनने, व्याख्यान,
या अफीम खाने वालों की होती है यों ही पहचान ।।६२।।
यम से है तात्पर्य जीवका यमी प्रकृति का है उपनाम,
सङ्गहीन आत्मा को देखो बना रही है प्रकृति सकाम।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ब्रह्मा का आदित्य अर्थ है दुहिता उसकी उषा उदार,
हरिणी नाम कुमारी थी वह जिस पर था उस ऋषि का प्यार ।।६३।।

अगर पांच पति थोड़े हों तो सौ पूरे गिन लो हे तात,
कृष्णा तो आकर बेचारी नहीं कहेगी सच्ची बात ।
ब्रह्मा वह कविवर है जिसने मानस सर्ग किया ईजाद,
सरस्वती है कविता उसकी चखता है वह जिसका स्वाद।।६४

मेरी निन्दा करने वाले करते हैं मुझ को मशहूर,
जो मुझसे नफरत करते हैं मैं न रहूँगा उनसे दूर ।
प्रेमी को ही प्रेम दिखाना यह है लेन देन व्यापार,
सच्चा प्रेम वही है जिसका रहे शत्रु तक पर अधिकार ।।६५।।

कहीं कहीं सड़कों पर मुझ पर पड़ती है पत्थर की मार,
मानो मुझे स्वयं कुदरत ही देती है फूलों का हार ।
लोगों ने मेरे धोखे में एक सुप्त अध्वग को डाल,
दिया किन्तु मैंने गङ्गा में उसे कूद कर लिया निकाल ।।६६।।

एक बार गणिका ने मुझको दिया रत्न यौवन का लोभ,
आखिर छोड़ दिया उसने ही वह पेशा पाकर विक्षोभ ।
कई वार मैं विष खा बैठा प्राणशक्ति पर कुलिश दुरन्त,
मेरे इस पापी जीवन का हुआ न फिर भी अब तक अन्त ।।६७।।

जिसने पैदा किया मुझे है रक्षा का है उस पर भार,
वनकर मैं मण्डूक कूप का कर सकता हूं क्या उपकार ।
अभी विदा दो ताकि वजा दूँ आर्यभुवन में वैदिक नाद,
कभी जरूरत आ पड़ने पर कर सकते हो फिर भी याद ।।६८

शान्त हुए ऋषि-- महाराजा ने कहा आपकी प्रतिभा धन्य,
बाद बुद्ध के आप सरीखा हुआ न अब तक वक्ता अन्य ।
मेघपटल से बाल चन्द्र सा निकला तब परदे से एक,
कोमल शिशु जिसका शुचि मानस अधिक योगियों से था नेक ।।६९।।

रोका जब उसको लोगों ने मृदु स्वर में वह उठा पुकार,
बैठाया गद्गद योगी ने उसे गोद में तब पुचकार ।
शिशु का और परम योगी का हृदय शुद्ध है एक समान,
नैसर्गिक है प्रथम दूसरा कृत्रिम है इतनी पहचान ।।७०।।

—:o:—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सप्तम सर्ग

चित्र कल्पने खींच जरा तू मारवाड़ की हालत का,
उसकी रग रग में सदियों से फैली हुई जहालत का।
शब्दकोष खाली है उसका नैतिक पतन दिखाने को,
नाकाबिल है उसे खुदा भी ठीक राह पर लाने को ॥१॥

जिनका दफ्तर और बही में लगता अटल अँगूठा है,
जिनके यज्ञसूत्र धोने को भाग्य रजत से रूठा है।
उन विप्रों ने जनसमाज में चूंकि वहां आदर पाया,
काला अक्षर भैंस बराबर नगरों तक में कहलाया ॥२॥

स्त्रीसमाज में शिक्षा को जो हेतु पतन का कहते हैं,
रिश्तेदार बन्दरों के वे उसी देश में रहते हैं।
फिदा गुणों पर होकर उसकी बनी मूर्खता रानी है,
एक विश्वविद्यालय अब तक नहीं वहाँ हैरानी है ॥३॥

सेठों की चिलमें भर देना और रसोई भी करना,
चरस भङ्ग सुलफे को पीना किन्तु मूर्तियों से डरना।
जहां तहां से लेकर आटा दान पेट को ही देना,
अक्ल मिले तो यज्ञसूत्र से उसको पकड़ बाँध लेना ॥४॥

ये षट् कर्म वहाँ विप्रों के होंगे किस को ज्ञात नहीं,
छिप सकती है क्या दुनियाँ में ऐसी अद्‌भुत बात कहीं।
मत्स्य नहाया करें सरों में मतलब उनको जल से क्या,
रटें पड़े मण्डूक पङ्क में उन्हें पठन निष्फल से क्या ॥५॥

क्या उन को मुन्शी बनना है जो कि सीख लें वे लिखना,
अङ्गुलियां कलमों से घिस करक्यों नुकसान करें अपना
बिना पढ़े तो अमर न होंगे पढ़ कर भी मरना ही है,
तो दाँतों से दिन भर किचकिच क्यों फिजूल करना ही है ॥६॥

खेतों में आहट सूकर की सुन निशीथ में क्षिप्र जगे,
रख कर विपुल दण्ड कन्धे पर वीर घूमने विप्र लगे।
चिलमों में वे ज्योति जगाकर तम को मार भगाते हैं,
अतः कुहू में भी हम उनके पावन दर्शन पाते हैं ॥७॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जरा कल्पने पूछ उन्हें तुम धूम्रपान क्यों करते हो,
तरल गरल से भर फुफ्फुस को बिना मौत क्यों मरते हो।
दिया जवाब उन्होंने क्या हम हरि को भेंट चढ़ाते हैं:
पत्र पुष्प फल तोय दान कर अपना पुण्य बढ़ाते हैं ॥८॥

मारवाड़ के राजपुत्र भी अपना धर्म पालते हैं,
ग्रन्थि नीविकी शिथिल न हो तो असि से तोड़ डालते हैं।
स्तनशैलों से रक्षित भी हैं हृदय दुर्ग में घुस जाते,
वारवधू के चित्तवित्त को डङ्का बजा लूट लाते ॥६॥

रक्त प्रजा का चूस डालना मार पीट कर कर लेना,
गणिकागण के नवयौवन पर अपना राज्य वार देना।
गद्दी को दाखिलेकोट कर झट इङ्ग्लैण्ड चले जाना,
अधिक मद्य पी कर मर मिटना क्षात्र धम है मनमाना ॥१

हूरों के दुर्भेद्य सैन्य के नेत्रशरों से विद्ध हुए,
आहत हो उरोज उपलों से अचल सहिष्णु प्रसिद्ध हुए।
भुजपञ्जर में कैदी हैं वे रशनागुण से बद्ध हुए,
नहीं माँगते क्षमा मोक्षहित गौरव से सन्नद्ध हुए ॥११॥

वनिताओं के अदय हृदय पर मुष्टिघात वे करते हैं,
अधिक खुदा से भी बेचारे रेजिडेण्ट से डरते हैं।
कोई तो इङ्ग्लैण्ड तीर्थ में मोक्ष पहुँच कर पाते हैं,
अनधिकार से कुछ हताश हो फिर स्वदेश में आते हैं ॥१२

अन्य देश में जो दाखिल हो जम्बुक के सम लगते हैं,
सिंहसमान पड़े गद्दी पर मृगसम रण से भगते हैं।
मृतक शयन पर पड़े हुए भी जो विवाह कर सकते हैं,
उन वैश्यों के कीर्तिगान से भारत के कवि थकते हैं ॥१३॥

कन्या वर के क्रयविक्रय का है पसन्द व्यवसाय उन्हें,
ताहम भी है शब्द महाजन देता जनसमुदाय उन्हें।
हस्तामलकसमान जानते हैं हिसाब के सब गुर वे,
रिशवत का बाजार गरम कर बनते रायबहादुर वे ॥१४॥

विष्णुसहस्रनाम को पढ़ना धोती भी धोते जाना,
सड़ी गली घर की चीजों को सुरमन्दिर में पहुंचाना।
खोल दिवाला दीपावलि के दिन को धन्य बना देना,
मरु का वैश्यधर्मसङ्ग्रह यह आवेज़र से लिख लेना ॥१५॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मारवाड़ की ललनाओं का पाठक हाल बताऊँ क्या,
अपने इस कमबख्त हाथ का मैं दुर्भाग्य जताऊं क्या।
बीस साल में एक बार वे अन्तरीय को धोती हैं,
त्योहारों पर भी मुर्दों के साथ बैठ कर रोती हैं ॥१६॥

यूका और सूक्ष्म लिक्षा का जो दिलचस्प म्यूजियम है,
असहयोग में पानी से जो जैन साधुओं के सम है।
वे अपने उस केशपाश में भूषण बोर लगाती हैं,
मानो एक सर्चलाइट की तम में ज्योति जगाती हैं ॥१७॥

शिर से उनके पृष्ठ भाग पर आटी एक लटकती है,
पुच्छ ठीक है पर शृङ्गों की हम को कमी खटकती है।
कटे नाक में नथ डाली है पशु की नाथ लगी है क्या,
मानवता भी हार मान कर उनको छोड़ भगी है क्या ॥१८

टोली उनकी कभी अनोखे गीत खुशी के गाती है,
आम सड़क पर सुनकर जिनको शरम आप शरमाती है।
रात्रिजागरण में शादी के जो उनकी गति होती है,
उसका नग्न रूप लिखने का दीन लेखनी रोती है ॥१९॥

यद्यपि अपने मुख का दर्शन नहीं किसी को देती हैं,
गुप्टन से खुर्दबीन का काम किन्तु वे लेती हैं।
पुरुषों ने निज बुद्धिवधू पर भी तो परदा डाला है,
सूर्य चन्द्र तारे सब कुछ हैं फिर भी नहां उजाला है ॥२०

सच हो तो भी लाभ नहीं है पर के दोष बताने से,
बिगड़ उठेंगे जाट वहाँ के अधिक बात बढ़ जाने से।
कुछ भी हो पर धन्वदेश के धन की धन्य महत्ता है,
हिला न सकता जिसे प्रलय भी वह सेठों की सत्ता है ॥२१॥

धन्व-राजधानी का गौरव कर्नल गाकर धन्य हुआ,
महाराज यशवन्तसिंह सा शासक जहां अनन्य हुआ।
निर्वासित कुमार विश्रुत है अमरसिंह नामक जिसका,
शाहजहां के शाही दल पर जमा दिया जिसने सिक्का ॥२२

आज वहाँ के एक वाग में दयानन्द का विश्रम है,
मानो मानस में मराल का मञ्जु मनोषित विक्रम है।
राजदूत से उन्हें धन्व के राजा ने बुलवाया है,
क्या मिलिन्द को निज सौरभ से पुष्प खींच ले आया है ॥२३॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

घर घर में उनके गौरव की और ज्ञान की चर्चा है,
नहीं काय से न वचन से ही किन्तु चित्त से अर्चा है।
एक रोज वे बैठे थे गम्भीर ध्यान में मग्न हुए,
वेदों में इतिहास भाग के परिशीलन में लग्न हुए ॥२४॥

नेत्रचकार उन्हें जनता के पीते सोम जान कर थे,
खेल रहे नजदीक तथागत उन्हें मयूर मान कर थे।
वे नैराश्यहव्य को क्षण में करते भस्म अनल हो के,
मानस मरु में अमित सरसता भरते थे वे जल हो के ॥२५॥

ज्यों ही ऋषि ने परम ज्योति के दर्शन का अवसान किया,
राजपुरोहितवर ने आकर उन्हें उचित सम्मान दिया।
योगवीर ने पूछा उससे कारण अपने आने का,
प्रखर धूप में मृदु चरणों को तज कर दया तपाने का ॥२६

निज ललाट पर चन्दन के सम ऋषि का चरणपराग लगा,
सकरुण उनके करस्पर्श से मानो अपना भाग्य जगा।
शान्त भाव से बद्धाञ्जलि हो लगा विप्र वह कहने यों,
मानस सर से सुरसरिता का स्रोत लगा वह बहने यों ॥२७॥

मानस ताप मिटाते हो यदि भौतिक ताप चीज है क्या,
वृक्ष बन गया आज हमारे मरु का पुण्यबीज है क्या।
धर्ममूर्ति का दर्शन हो तो पैरों की क्या बात वहाँ,
तृण सम देह करूँ न्योछावर हुक्म आप का मिले जहाँ ॥२८

आतप से तपती वेदी है कहो कनातें तनवा दूँ,
पदत्राण में आत्मचर्म से स्वीकृत हो यदि बनवा दूँ।
कौन वस्तु आवश्यक है मैं यही पूछने आया हूँ,
और साथ सन्देश भूप का पास आपके लाया हूं ॥२९॥

नृपसागर से वाचिकजल जो पवनवेग से ले आया,
दूतमेघ ने ऋषिपर्वत पर नत हो कर यों फैलाया।
कष्ट आप को देने वाला यद्यपि निरा अचेतन है,
फिर भी जोधपुराधीश्वर का सविनय एक निवेदन है ॥३०

महाराज ने राजमुकुट से छूते हुए धरातल को,
मनोगम्य यतिवर के सम्मुख जोड़ भक्ति से करतल को।
कहा है कि दरवार शाम को भारी लगने वाला है,
वहां आप के सदुपदेश का नोटिस गया निकाला है ॥३१॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ठीक वक्त पर मोटर को उपवन में सादर लाने का,
और आपको सभाभवन में सुखपूर्वक पहुंचाने का।
गौरव मुझे मिले हे भगवन् ! इस आशा को पूर्ण करो,
महामोहगिरि के प्रस्थों को वोधवज्र से चूर्ण करो ।।३२।।

दयानन्द ने कहा हाल में कुछ भी नहीं जरूरी है,
किन्तु एक मेरी अभिलाषा हुई न अब तक पूरी है।
निकट सिद्धि के सूचक लक्षण दीख रहे हैं आज मुझे,
मैं प्रसन्न हूं स्वीकृत हो जो कहते है नरराज मुझे ।।३३।।

चला गया वह दूत विदा हो ऋषि ने क्षण भर ध्यान किया,
जीवन के भावी रहस्य का योगशक्ति से ज्ञान किया।
तत्क्षण उनके मुखमण्डल में शतगुण व्याप्त प्रसाद हुआ,
चलो उठो मत देर करो यह व्यक्त अनाहत नाद हुआ ।।३४

किसी अदृष्ट शक्ति से प्रेरित हो कर दण्ड हाथ में ले,
प्राणाधिक चारों वेदों को रक्षक जान साथ में ले।
राजदुर्ग के फाटक पर वे नियत समय से पहले ही,
पहुंच गये पवमानवेग से हो निर्भीक अकेले ही ।।३५।।

शक्ति कहां थी दौवारिक में अड़ कर उन्हें टोकने की,
बढ़ते हुए प्रलयपावक को बन कर तूल रोकने की।
दुर्गपाल भी कठपुतली सा खड़ा रह गया बेचारा,
आखिर कहता ही क्या उनसे नौकर किस्मत का मारा ।।३६

दो घण्टों के वाद भव्य था लगने को दरबार वहां,
प्रकारों को कम्पित करते जा पहुंचे श्रीमान वहाँ।
द्वारदेहली पर स्थित उनको रोका एक नपुंसक ने,
और कहे ये शुष्क शब्द उस राजमहल के कण्टक ने ।।३७।।

किधर कहां से क्यों जाता है अन्तःपुर के भीतर तू,
इस विटङ्क में मत दाखिल हो पागल वन्य कबूतर तू।
बिना इजाजत आ धमका तू काल शीश पर नाचा क्या,
कण्डू है कपोल में तेरे जड़ दूं एक तमाचा क्या ।।३८।।

ओष्ठ दशन कर गर्ज उठे ऋषि महाक्लीव की सुन बातें,
क्या मुझको देखनी पड़ेंगी कुटिल काल की ये घातें।
विना छुरे के ही तेरी तो बनी जघन्य हजामत है,
सुनी नहीं क्या गति विक्रम की आई निकट कयामत है ।।३९।।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

शीतल और मलिन शोणित से तेरा गात्र सनेगा ही,
तू मेरे इस ब्रह्मदण्ड का अभी शिकार बनेगा ही।
तुझ जैसे कितने ही प्राणी अब तक अरे कुचल डाले,
ऐसे क्षुद्र कीट तो मैंने चरणों से हैं मल डाले ॥४०॥

योगी का उद्दण्ड दण्ड जब चण्ड भाव से तनिक हिला,
साथ खड्ग के क्लीवराज का स्वच्छ फर्श से भाल मिला।
संन्यासी ने सभासदन के भीतर घुस कर क्या देखा,
भोगभित्ति पर खिंची हुई थी अधःपतन की ध्रुव रेखा ॥४१॥

प्यालों में अवशिष्ट पड़ा था स्तम्भन का उपचार वहां,
वात्स्यायन के कामसूत्र का था क्या प्रचुर प्रचार वहाँ।
नग्न औरतों की तसवीरें देख विलोचन बन्द हुए,
योगीश्वर के चित्तभवन के मानो दीपक मन्द हुए ॥४२॥

पङ्खे की आरही हवा थी धन की धूल उड़ाने को,
जड़ता से चेतन जीवन का क्या सम्बन्ध जुड़ाने को।
कहीं रवर के मञ्चों पर थी योगिराज की दृष्टि पड़ी,
पापों की घड़ियां गिनने को लगी हुई थी कहीं घड़ी ॥४३॥

बिछा हुआ पर्यङ्क वहां था साधन था जो मरने का,
वोट नारकी मुसाफिरों का काम सिन्धु को तरने का।
घृणित मद्य की गन्ध घ्राण का सर्वनाश करने को थी,
या उसमें वह बिना फीस के मृत्युनस्य भरने को थी ॥४४

चतुर्वर्ग के नाश हेतु थी मानो चौपड़ की बाजी,
प्रेमी के मूक निमन्त्रण में थी साङ्केतिक अक्षरराजी।
धरा हुआ नवनीत वहां था रत्नजटित जलझारी थी,
रङ्ग विरङ्गे पानदान में स्थापित पान सुपारी थी ॥४५॥

कौन हमें इस रङ्गमहल में पूछेगा प्रेमार्द्र मना,
जब कटाक्ष की चिनगारी ही देगी दिल को राख बना।
इसी फिक्र से काला जिनका रङ्ग पड़ गया था गोया,
वे सिगार थे धरे वहाँ या बाल सर्पकुल था सोया ॥४६॥

लहसुन की दुर्गन्ध भयानक और इत्र का सौरभ भी,
धूम चिलम का और धूप का वाष्प घ्राण को दुर्लभ भी।
वर्ण शुक्ल था वहाँ कर्म का काला किन्तु नजारा था,
कालकूट का और अमृत का मानो महल पिटारा था ॥४७॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

यह सब देख मेघमाला सो कलुष व्रती की दृष्टि हुई,
चमक पड़ी विजली आँखों में घोर घृणा की वृष्टि हुई।
इतने पर भी आग इश्क़ की अधिक भड़कती जाती थी,
सो दर्शक की बुद्धि कुरङ्गी नहीं सान्त्वना पाती थी ॥४८

आगे पैर वढ़ाया ऋषि ने यद्यपि उनको कष्ट हुआ,
छिपा पड़ा था जो अब तक वह दृश्य पाप का स्पष्ट हुआ।
हुआ नेत्र से अनुमोदित वह जो कानों से सुना गया,
जिसकी ठीक जांच करने को शुभ मुहूर्त वह चुना गया ॥४६॥

आंखों से अनुराग टपकता दिल में जिसके जहर भरा,
इश्क मिजाजी की खेती के लिये बनी जो रम्य धरा।
कठपुतली थी जो फरेब की या केसर की क्यारी थी,
निज केशों का गुम्फन करती वहाँ एक सुकुमारी थी ॥५०

था शैवाल जाल वालों का चपल नेत्र ही मीन हुए,
बाहु मृणाल चक्रवाकों का मञ्जु युगल स्तन पीन हुए।
वदन कमल था श्रोणि शिला थी यौवन जल की लहर बनी,
मदनतप्त के स्नान हेतु वह मदनमञ्जरी नहर बनी ॥५१॥

मङ्गलकुम्भ हुए स्तन पीवर केश दर्भ दृग दीपक थे,
शिञ्जित मन्त्रपाठ भूषण का हवि धन दीक्षित आशिक थे।
यौवन अनल दीप्ति था जिसमें हवनकुण्ड वह जघन घना,
अग्निहोत्र को मानो जङ्गम दी स्मर ने वह वेदि बना ॥५२

वापी थी वह जिसमें निर्भय स्नान सभी कर सकते थे,
ललित लता थी जिसे देख कर नहीं विलोचन थकते थे।
वही नाव थी प्रेमी जिससे प्रेमसिन्धु को तरते थे,
भ्रूकुटिकटार देखकर उसकी धन्वराज खुद डरते थे ॥५३॥

मुझे खुदा ने दो आंखें दीं मुख है तेरा एक प्रिये,
एक नेत्र पी रहा शहद है अन्य विकल है इसी लिये।
तेरे मुख को डबल बना दूं क्यों न उठा कर दर्पण में,
एक साथ दोनों आंखोंका जी भरकर लूं तर्पण मैं ॥५४॥

इतना कह कर महाराज ने कर में अपने मुकुर लिया,
कल्पसुन्दरी ने केशों के परिमार्जन में ध्यान दिया।
उसके वाहुलतास्पन्दन से आशिक का दिल हिलता था,
धैर्य पवन को शिर पर बैठा मानो सर्प निगलता था ॥५५॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जब शैतानपरस्ती का यह नाटक वहां नजर आया,
दयानन्द की आंखों में अति लोहित खून उतर आया।
सोया हुआ तेज क्षण भर में आहत हो कर भड़क उठा,
पटका पैर क्रोध से उसने फर्श महल का तड़क उठा ॥५६॥

उनके दीप्त बदन से मानो प्रखर वेग से त्वेष बहा,
क्या इस बदनसीब जीवन में यही देखना शेष रहा।
यह पुरुषार्थ दिखाने को क्या नृप ने मुझे बुलाया है,
तीक्ष्ण कण्टकों में कोकिल को लाकर यहाँ फँसाया है ॥५७॥

ढोंग पाठ पूजा का बाहर और पाशविक कर्म यहां,
सिंहनाद करना गद्दी पर यह कुक्कुर का नर्म यहां।
महाराज कहना अपने को और कीट बन कर जीना,
है हराम ऐसे लोगों को भारत में पानी पीना ॥५८॥

दुनियां भर के पापों के तुम एक मात्र आधार हुए,
निज जननी के यौवन वन में केवल तीक्ष्ण कुठार हुए।
अपना स्वास्थ्य धर्म धन गौरव झोंक रहे हो भट्टी में,
पैदा होते हा तुम जैसे क्यों न मिल गये मट्टी में ॥५९॥

इसी प्रिया के कज्जल से काला मुंह अपना करवा लो,
और इसी के तीक्ष्ण दन्त से कटी नाक फिर कटवा लो।
इस के केशपाश की रस्सी बांध गले में डूब मरो,
पुण्यभूमि से बाहर जाकर घड़े पाप के खूब भरो ॥६०॥

उधर रानियां ब्रह्मचर्य को फँसी तुम्हारे चङ्गुल में,
विधवा सी निधिवत् रखती हैं भरती हों ज्यों गुरुकुल में।
और इधर तुम कामसूत्र का इम्तिहान देने को हो,
रासविहारी की पदवी को आदर से लेने को हो ॥६१॥

इसके पैरों में तुमने ही मँहदी अभी लगाई है,
क्योंकि तुम्हारे ललित हाथ में यह रङ्गत ले आई है।
वारवधू के चरण पूज कर सीधे स्वर्गलोक जाना,
कथा भागवत की सुन सुनकर खूब धर्म को पहचाना ॥६२॥

आखुपुच्छ सी मूछों में यह अब तक लगी मलाई है,
क्या तुमने स्वादिष्ठ मिठाई साथ इसी के खाई है।
छूतछात की डींग हांकना प्रेमभोज यह इधर बड़ा,
तृणसे कूप ढँका हो ज्यों या अनल भस्म से छिपा पड़ा ॥६३॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रक्खी हैं बोतलें पचासों प्याला लेकिन एक पड़ा,
क्या इसके जूठे शराब को पीने में है लुत्फ बड़ा।
तुम जैसे हतभागों का मैं खा कर अन्न जघन्य हुआ,
मगर तुम्हारे पोल ढोल की आज खोल कर धन्य हुआ ॥६४

यों महर्षि के हृत्प्रकम्प से शैल क्रोध का फूट पड़ा,
कम्पित धन्बराज के कर से सहसा दर्पण छूट पड़ा।
उनका यह भाषण ओजस्वी अचल असर कर गया नया,
बहल प्रतिध्वनि से गुञ्जित हो राजमहल भी दहल गया ॥६५॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अष्टम सर्ग

देशाटन पूरा हुआ शास्त्र का विचार भी,
और पण्डितों के साथ सख्यव्यवहार भी।
देख डाली हालत भी राजा के सभा की है,
वेशवालाहर्म्य में प्रवेश किन्तु बाकी है ॥१॥

कल्पने आ आज चलें काव्य के आभास में,
कल्पसुन्दरी के उस स्वर्ग से निवास में।
धनधन्य धन्वराजधानी की जो शान है,
मन जैसे इन्द्रियों में जिस्म में ज्यों जान है ॥२॥

कामुक मयूर का जो दिल बहलाते हैं,
विधवा कुमारियों की छाती दहलाते हैं।
क्यों न ढङ्ग मेघ का वे दिखाते मृदङ्ग हैं,
पास के पड़ोस के शरीफ सब दङ्ग हैं ॥३॥

हारमोनियम भी क्या हार मान बैठा है,
शून्यता के तल में सितार तार पैठा है।
खाली है झरोखा पड़ा खिड़की भी बन्द है,
क्यों न भोग मूषकों का बिल्ली को पसन्द है ॥४॥

द्वार पर प्रेमी नहीं हाजिर अंधेरा है,
उठ गया इशारे की रस्सी का भी डेरा है।
दीर्घ जागर से श्रान्त मार मानो सुप्त है,
अमर सुहाग रूपराजि का सो लुप्त है ॥५॥

रङ्ग सारङ्गी में नहीं तबला अबल है,
तानपूरे की भी तान पूरी ही अफल है।
क्षीणा है प्रवीणा वीणा चित्त को लुभाने में,
कौशल बिला गया है गायनों का गाने में ॥६॥

कल्पसुन्दरी को वित्त वैभव बताने को,
निर्धन नपुंसकों के चित्त को सताने को।
आती नहीं भीतर से नृत्य की आवाज है,
विपरीत हो गया क्यों जिन्दगी का साज है ॥७॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जालियों से धूम सिगरेट का निकलता,
दिल और अधर किसी का वहां जलता।
होता जहाँ जीवन का आखिरी हवन है,
महल डरावना सा मानो पितृवन है ॥८॥

विना शब्द विटों को जो भीतर बुलाती है,
मद्य की भी गन्ध नहीं बाहर को आती है।
दिव्य भोजनों का जो कि पीटता ढिंढोरा है,
प्याज के अभाव से रसोईघर कोरा है ॥९॥

ताश और पाशों की नहीं है यहां चाल क्यों,
दिव्य द्यूत भवन में हुई हड़ताल क्यों।
परियों के अखाड़े में दङ्गल नहीं है क्यों,
यौवन के जङ्गल में मङ्गल नहीं है क्यों ॥१०॥

मशहूर हूरों की जो एक महारानी है,
खूबसूरती में और लास्य में लासानी है।
मालकिन महल की अन्दर नहीं है क्या,
दीर्घनिद्रास्वप्न वह आज ले रही है क्या ॥११॥

चाह से उठा के उसे इन्द्र ले गया है क्या,
स्वर्ग में मकान लिया उसने नया है क्या।
प्रेम की कृतान्त ने ही मारी पिचकारी हो,
अथवा कुबेर की ही हो गई दुलारी हो ॥१२॥

बेवकूफ हिन्दियों से शायद नाराज हो,
टर्की और ईरान में सज रही साज हो।
पेरिस की वाटिका में झूलने गई है क्या,
जङ्गम चमेली वहां फूलने गई है क्या ॥१३॥

वोट से अपार कर पार पारावार को,
देखने गई हो वह मिश्र की मीनार को।
वर्मा का फया ही उसे देखने की चाह हो,
उधर से चीन की दीवार की ली राह हो ॥१४

कौन जानता है द्वार पातकों का बन्द हो,
भिक्खुनी का वेष उसे आ गया पसन्द हो।
बुद्ध धर्म संघ से उसने दिल जोड़ा हो,
द्यूत मद्य और मिथ्या कामचार छोड़ा हो ॥१५॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

खोजती है कल्पना समझ नहीं पाती है,
कल्पसुन्दरी का नहीं ठिकाना बताती है।
आदि सृष्टि तत्त्व में भी जिसका प्रचार है,
उस सूक्ष्म प्रतिभा को यहां अन्धकार है ॥१६॥

राजा के मनोरथ को किस्मत विचित्र को,
खल के स्वभाव और नारी के चरित्र को।
देव नहीं जान पाते चीज क्या इतर है,
सोचना विचारना तथापि बेहतर है ॥१७॥

होकर मोक़ूफ उस दिव्य राजभोग से,
अधिक अधीर धन्वराज के वियोग से।
कर न बैठी हो वह आत्मघात शोक से,
चल न बसी हो इस भाग्यहीन लोक से ॥१८॥

वारनारियों में किन्तु प्रेम कहाँ इतना,
पुष्प का श्मशान के महत्त्व ही है कितना।
कल्पने प्रविष्ट हो के देख क्या चरित है,
कल्पसुन्दरी से तू तो पूर्वपरिचित है ॥१९॥

भीतर पर्यङ्क धरा लगा हुआ कोने से,
शून्य क्यों अभागा हुआ फूलों के बिछौने से।
पानदान खाली पड़ा इत्र का दिवाला है,
आज तो यहां का कुछ दृश्य ही निराला है ॥२०

चातक सा मीरासी है इधर तरसता,
रुपयों का मेह आज क्यों नहीं बरसता।
एक ओर रोती वृद्धा अञ्चलविस्तार से,
कन्धे पर केश पड़े चाँदी के हैं तार से ॥२१॥

बैठक में बैठे कुछ लोग ये इधर हैं,
जाल में सैयाद के ज्यों फँसे कबूतर हैं।
पेश हुई किसी की अजीब शिकायत है,
पञ्च महापापों की जो लगी पञ्चायत है ॥२२।

अङ्गों को समेट एक बैठी वीर बाला है,
बिना ही चिराग के जो हर्म्य का उजाला है।
स्मृति से सन्तापिनी जो दृष्टि से उन्मादिका,
स्पर्श से विमोहिका सर्वस्व चुम्बनादिका ॥२३॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आलिङ्गिता देती है जो शान्ति क्षुब्ध वात को,
चुम्बता मिटाती है जो पित्त के उत्पात को।
कफ को हटाती है जो ठीक तन्त्रयोग से,
प्रेमियों को दवा सी बचाती है जो रोग से ॥२४॥

पाठकों के लिये जो संयुक्त—वर्णमाला है,
चीन के चित्राक्षरों ने भाल को सम्भाला है।
फारसी की कोमलता अङ्गों में सताई है,
कुचों ने कठोरता क्या इङ्ग्लिश से पाई है ॥२५॥

केशपाश मेघ हुआ शम्पा लोल दृष्टि है,
इसी से हमेंशा होती प्रेमजलवृष्टि है।
दासियों के प्रति परिभाषण है गर्जना,
व्यर्थ जान रोका यहां देव ने बरसना ॥२६॥

स्वर्ण का सा वर्ण और कोकिला का राग है,
अङ्गराग कुन्तलों का बढ़ाता सुहाग है।
पुष्पसुकुमार अङ्ग मधुर अधर है,
पञ्च विषयों का मत्तकाशिनी आकर है ॥२७॥

वारनारी आदर से ग्राहक अमीर को,
धन लेके बेचती है अपने शरीर को?
किन्तु उपदेशकी से भला यह काम है,
जिस में दिमाग होता पैसों का गुलाम है ॥२८॥

बौद्ध सभ्यता सी यह अङ्गना उदार है,
सर्वसाधारणी और सरस संसार है।
वर्णभेद का न यह रखती विचार है,
श्रोणि में इसके शून्यवाद का प्रचार है ॥२९॥

किन्तु सर्वमङ्गला उदास दीखती है क्यों,
शोक का सबक नया आज सीखती है क्यों।
नजर किसी की लगी हो गया विकार हो,
अथवा असह्य इसे पुष्पमाला भार हो ॥३०॥

खान पान में तो यह बहुत शरीफ है,
इसको अदृष्ट से ही हुई तकलीफ है।
गणक त्रिवेदियों से पूछ ग्रहदोष को,
क्यों न यह करती है शान्त दैवरोष को ॥३१॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पास में इसके बैठा साधु एक वृद्ध है,
ज्ञान में दरिद्र और भोग में समृद्ध है।
बैङ्क खोला जिसने है नारायण नाम का,
हृष्ट पुष्ट है जो माल खाकर हराम का ॥३२॥

एक ओर डाक्टर सभा को शोभा देता है,
प्राण और धन भी जो रोगियों के लेता है।
बिना फीस के तो यह बात नहीं करता,
कोई जिये चाहे मरे जेब निज भरता ॥३३॥

मृत्यु का एजेण्ट—इसे मिला उपनाम है,
प्लेग और हैजे को ही करता सलाम है।
बीबियों से शीशियों को अधिक सजाता है,
बाजा नहीं किन्तु यह रुपये बजाता है ॥३४॥

सामने उसीके एक बैठा दरवान है,
डरता खुदा से नहीं ऐसा बेईमान है।
उड़ते फरिश्ते को भी चाहे तो पकड़ ले,
वायु और अग्नि के भी वेग को जकड़ ले ॥३५॥

महानसाध्यक्ष जिसे ऋषि ने बनाया है,
दीन दयनीय विप्र जान अपनाया है।
आज इस सभा में आया है जगन्नाथ क्यों,
इसका चण्डाल चौकड़ी से हुआ साथ क्यों ॥३६

सोचते हैं लोग कुछ हो कर खामोश क्या,
आकस्मिक आपदा से उड़ गये होश क्या।
चमकाती रदों से सितारे सभादेश में,
कल्पसुन्दरी ने कहा क्रोध के आवेश में ॥३७॥

आग उस साधु ने लगा दी मेरे बाग में,
दिल जलता है मेरा तैल ज्यों चिराग में।
चांदनी भी हाय इन आंखों को अंधेरा है,
जीवन अशोक में भी शोक का वसेरा है ॥३८॥

अपने लिये तो मुझे नहीं रञ्जोगम है,
उपस्थित किन्तु एक समस्या विषम है।
कहीं शोकवश मेरे उष्ण अश्रुधार में,
मग्न हो न जाय मरूं आफत अपार में ॥३९॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जिन के सुखार्थ मैं ने दान किया काय है,
कोई उन्हें बचाने का अब न उपाय है।
तप्त मेरी आहों से मकान जल जायेंगे,
लोग मारवाड़ के निवास कहां पायँगे ॥४०॥

बालुका उड़ेगी मेरे दीर्घतर श्वास से,
आंधी कर देगी हीन सूर्य को आभास से।
राजपूताने में भावी भीषण उत्पात है,
चिन्ता मुझे मुल्क की सताती दिन रात है ॥४१॥

देश का भूषण हूं सो दूषण बनूंगी मैं,
लाखों प्राणियों के वध पाप से सनूंगी मैं।
कण्ठ मेरा कुण्ठ हुआ चारू हार क्षार है,
यौवन नवीन मुझे ज्ञात होता भार है ॥४२॥

कोई दवा नहीं मेरे कामज्वररोग की,
देह में लगी है आग राजा के वियोग की।
साड़ी जल जायगी इसीसे बेकरार हूं,
आंसुओं से इसे मैं बुझाती, हा लाचार हूँ ॥४३॥

भैरव आपत्ति का शिकार यह देश है,
किस कुक्षण में हुआ मुण्डी का प्रवेश है।
रक्षा का उपाय मुझे नजर न आता है,
घोर आत्मग्लानि से कलेजा फटा जाता है ॥४४

इस लिये दण्ड से दण्डी को दूर कीजिये,
उसका घमण्ड सारा शीघ्र चूर कीजिये।
धीर हो के यदि हम छोड़ें निरुपायता,
मुसलमानों से हमें मिलेगी सहायता ॥४५॥

खण्डन कुरान का भी उसने किया ही है,
दूषण इञ्जील में भी उसने दिया ही है।
पुराणमर्दन से भी वह न विरत है,
इस लिये उसके विरुद्ध लोकमत है ॥४६॥

सङ्गठन कर तुम सब का तैयार हो,
उस धूर्त साधु का सत्वर प्रतिकार हो।
यौवन चुम्बक से मैं यतिचित्त लोह को,
खींच के विक्षुब्ध करूँ मानवसन्दोह को ॥४७॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ब्रह्मचर्यभ्रष्ट कर उस हतभाग्य को,
इश्क की भट्टी में झोंक उसके वैराग्य को।
काला मुंह करा उसे यहां से भगाऊंगी,
दोषहीन जीवन में दोष मैं लगाऊंगी ॥४८॥

दयानन्द एक खरगोश ही बेचारा है,
इस केशपाश से न कहीं छुटकारा है।
रूप के समक्ष मेरे कौन ऋषिवर्य है,
देखेगा जमाना जरा कैसा ब्रह्मचर्य है ॥४९॥

सम्भव है आप ऋषि भोगवृत्तिवाला हो,
पिता ने जघन्य जान घर से निकाला हो।
उसके बेजान जी में जान भर दूंगी मैं,
भिक्षा में अधर रस दान कर दूंगी मैं ॥५०॥

सीधा उसे मार्ग मैं निर्वाण का दिखाऊंगी,
सच्चे अग्निहोत्र का रहस्य मैं सिखाऊंगी।
तेज ब्रह्मचर्य का असह्य यदि पाऊंगी,
सीने के पसीने से ही उसको बुझाऊंगी ॥५१॥

चित्त के आकर्ष में जो सिद्ध महायन्त्र हैं,
दिया मान्त्रिक ने मुझे वशीकार मन्त्र है।
ऋषिराज पर मैं उसे भी आजमाऊंगी,
धाक निज हुस्न की जरूर मैं जमाऊंगी ॥५२॥

जो भी कहो कर डालूं कार्यसिद्धिहेतु मैं,
बँधवा दूं इष्ट हो तो सिन्धु पर सेतु मैं।
फूंक से कोकाफ को भी व्योम में उड़ा दूं मैं,
विन्ध्य से हिमाद्रि को भी खींच के जुड़ा दूँ मैं ॥५३॥

पाषाणविद्रावणी यों वक्तृता समाप्त थी,
हलक में खुश्की लोकपावनी के व्याप्त थी।
सम्पुटक पेश हुआ पान औ सुपारी का,
जारी फरमान हुआ चाय की तैयारी का ॥५४॥

चाय का विधान हुआ शासनानुसार था,
केक और बिस्कुट का साथ उपचार था।
विश्ववल्लभा ने जिसे हाथ से प्रदान की,
भिक्षा कृष्णानन्द को थी ग्राह्य जलपान की ॥५५॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

देखता नहीं हो कोई तब छूतछात क्या,
बन्द दरवाजा हो तो फिर जातपाँत क्या।
दिया जिस सुन्दरी को गुरुमन्त्र दान हो,
ग्राह्य क्यों न उसका पवित्र अन्नपान हो ॥५६॥

अज और अश्व के जो मुख में ही आजती,
धेनुपृष्ठ और विप्रपाद में विराजती।
उस मेंध्यता का जहाँ सर्वत: निवास हो,
ग्राह्य उन देवियों का किसे नहीं ग्रास हो ॥५७॥

एक बात देवी ने गुरु के प्रतिकूल की,
मुख में न ग्रास डाला आप भारी भूल की।
और दिनों में तो प्रेम ठीक ही बताती थी,
सामने सभासदों के शरम सताती थी ॥५८॥

अस्तु कृष्णानन्द गिरि चाय पीके पुष्ट हो,
प्रेयसी के प्रेममय पान से सन्तुष्ट हो।
अष्टम स्वर से और महिषी के नाद से,
सभा को हिलाने लगे अपने प्रवाद से ॥५९॥

कल्पसुन्दरी को निज प्रेमभरी गोद में,
करके आसीन गिरि अतुल विनोद में।
बोले पुत्रि दक्ष कोई तुझ सी न अन्य है,
तेरा यह साहस सहस्रवार धन्य है ॥६०॥

किन्तु कामयाबी नहीं दण्डी को फसाने में,
लाभ नहीं मूर्खता से लोगों को हँसाने में।
मदनविकार ने कभी न उसे छुआ है,
विफल प्रयास ऐसा बीसों बार हुआ है ॥६१॥

मथुरा में फँसाने को उसे सुकुमारी ने,
किया था प्रयत्न किन्तु कहा दण्डधारी ने।
ऐसी पापभावना का अन्त भला नहीं है,
गरल के सेक से रसाल फला नहीं है ॥६२॥

हस्त दे के आपको मैं यौवनप्रमोद में,
आप जैसे पुत्र को ही चाहती हूं गोद में।
सुन यों किसी से ऋषि बोला वह शान्त हो,
मान लो मुझे ही पुत्र मोह से न भ्रान्त हो ॥६३॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आग चाहे शीतल हो वायुगति रुद्ध हो,
गङ्गा का प्रवाह चाहे नियमविरुद्ध हो।
किन्तु मुमकिन नहीं ऋषि का भटकना,
वासना के नजदीक उसका फटकना ॥६४॥

ऋषि को पवित्रता की मूर्ति जानता हूं मैं,
कृष्ण और बुद्ध की विभूति मानता हूं मैं।
उसके गुणों का नहीं पा रहा हूं पार मैं,
स्वार्थवश हो रहा हूं लेकिन लाचार मैं ॥६५॥

आया एक किन्तु मेरी अक्ल में उपाय है,
अनुरूप कलि के जो ठीक व्यवसाय है।
दफा पांच सौ के ऋषि बन्धन में बद्ध हो,
करने सफाई पेश कोर्ट में संनद्ध हो ॥६६॥

मेरे एक प्रिय शिष्य उत्तम वकील हैं,
वादियों के मुख में जो ठोंक देते कील हैं।
रस में भी उन्होंने हमेशा विष घोला है,
भूल से भी कोर्ट में न सत्य कभी बोला है ॥६७॥

विष्णुगुप्त से वे बढ़े नीति के विधान में,
उनके गङ्गेश नहीं तुल्य अनुमान में।
नोट भगवान के वे जन्म से ही भक्त हैं,
ताजोरात हिन्द के ही धर्म में प्रसक्त हैं ॥६८॥

तेरे मृदु हास्य की ही फीस पर राजी मैं,
उन्हें कर आया पुत्री जीत गया बाजी मैं।
मैंने इस सभा में भी उनको बुलाया है,
तेरी सुषमा के गुणगान से लुभाया है ॥६९॥

कृष्णानन्द गिरि ने बिछाया जब जाल यों,
करके सलाम झुक बोला द्वारपाल यों।
आगन्तुक प्लीडर के लिये क्या निर्देश है,
कल्पसुन्दरी ने कहा स्वीकृत प्रवेश है ॥७०॥

खूनी चोर डाकुओं के कोर्ट में जो त्राता थे,
धन खींचने में कल्पसुन्दरी के भ्राता थे।
आ गये वकील नष्ट हो गया विषाद था,
किन्तु धूमपायी मुख उनका विषाद था ॥७१॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

स्थान निर्धारित कर भारी ऊहापोह से,
उनको बैठाया गया बड़े समारोह से।
पान और फूलों का प्रदत्त उपहार था,
प्लीडर के पेश हुआ मिश्र का सिगार था ॥७२॥

कल्पसुन्दरी ने स्थित अतिथि के सद्म में,
बीअर की बोतल चढ़ा दी पादपद्म में ।
मान अपमान वह वृद्ध के संत्रास में,
गिरि का उत्सङ्ग छोड़ बैठ गई पास में ॥७३॥

कृष्णानन्द गिरि ने हृदय का जो भाव था,
प्लीडर को बतलाया अपना प्रस्ताव था ।
सन्नाटा सभा में फिर छाया कुछ देर को,
आगन्तुक विस्मित थे, देख के अन्धेर को ॥७४॥

जला के सिगार कहां तर्कों के समुद्र ने,
कौशिक बनाया तुम्हें कहो किस क्षुद्र ने ।
कैसे मुंह खोलूं यदि भेंट नहीं पाऊं मैं,
विना फीस बोल के क्यों नरक में जाऊं मैं ॥७५॥

बकरा नहीं हूं मुझे इच्छा नहीं पान की,
बीअर बनाने को क्यों बीअर प्रदान की ।
फूल जो लेते हैं वे तो फूल कहलाते हैं,
ऐसी चीजों से न हम चित्त बहलाते हैं ॥७६॥

आपकी पुत्री के मृदु हास्य की न चाह है,
इसके कटाक्ष की न मुझे परवाह है ।
जल्दी फीस अदा करो देर क्यों लगाते हो,
सुप्त मेरे क्रोध को क्यों नाहक जगाते हो ॥७७॥

जेब से निकालो दाम सँभल के रहो तो,
हवा हवालात की खिला दूं अभी कहो तो ।
नकद नारायण का पक्का मैं पूजारी हूँ,
वकीलों के धर्म का मैं सच्चा हितकारी हूँ ॥७८॥

समय खराब हुआ कौन जिम्मेवार है,
हम लोग बात नहीं करते बेकार हैं ।
हीरों का मैं हार उपहार लेने आया हूँ,
कानून के साथ कुछ कागजात लाया हूँ ॥७९॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कल्पसुन्दरी ने किया मुल्क को कङ्गाल है,
लूट धन अमीरों का हुई मालामाल है।
कृष्णानन्द कहो मैं शिकार कैसे छोड़ दूँ,
सन्तान प्लीडरों की रस्म को क्या तोड़ दूँ ॥८०

दे दो मुझे पहले जो मेरा उपचार है,
पीछे प्रश्न पूछने का तुम्हें अधिकार है।
पाकिट मन्दिर मेरा सर्वथा तैयार है,
नोट विष्णुमूर्ति की प्रतिष्ठा दरकार है ॥८१॥

कोर्ट है वैकुण्ठ जज को ही विष्णु जान लो,
उनका फरिश्ता मुझे जन्मसिद्ध मान लो।
कैसे लक्ष्मी भला हमें छोड़ कर जायगी,
हम से नारज होके चैन कहाँ पायेगी ॥८२॥

यदि तुम करोगे सङ्कोच धनदान में,
मेरे यथायोग्य प्रीतिपूर्वक सम्मान में।
तुम पर साजिश का केस मैं चलाऊँगा,
जले हुए दिलों को मैं और भी जलाऊँगा ॥८३॥

ईश पर भी कहो तो केस चलवा दूँ मैं,
निराकार नहीं हो तो जेल भिजवा दूं मैं।
वेद या कुरान को गर्तों में धरवा दूं मैं,
मजहवी नहीं हों तो जप्त करवा दूं मैं ॥८४॥

धज्जियां उड़ा दीं मैंने बड़ी अक्ल वालों की,
दम किया नाक में निराली शक्ल वालों की।
तुम्हारी बताओ फिर हैसियत कितनी,
सुई के सूराख में है समा जाती जितनी ॥८५॥

यह सुन नायिका ने निपुण फरेब में,
नोट एक डाल दिया प्लीडर की जेब में।
हालत दिखाती हुई पक्ष प्रतिपक्ष की,
तब रसना यों हिली दण्डनीतिदक्ष की ॥८६॥

अक्ल को गिरि से ही क्या गिरि ने गिराई है,
कोर्ट में चलाना केस नहीं लाभदायी है।
ऋषि के चरित्र और प्रज्ञा के विकास से,
मुग्ध है संसार सारा यौगिक आभास से ॥८७॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ऋषि का ही साथ देगा क्षत्रिय समाज भी,
उनका ही पक्ष खुद लेंगे धन्वराज भी।
कल्पसुन्दरि क्या तुझे लाज नहीं आयगी,
आखिर मुकदमा तू साफ हार जायगी ॥८८॥

ऋषि के विरुद्ध भला कौन टकरायगा,
जज का दिमाग उन्हें देख चकरायगा।
दर्जन बैरिस्टरों की वहां जुड़ जायगी,
धन और इज्जत की धूल उड़ जायगी ॥८९॥

कोर्ट में ही आप जज कुर्सी निज छोड़ के,
ऋषि को ताजीम देगा दोनों हाथ जोड़ के।
दण्डी के प्रश्नों से और उत्तरों से हार के,
बैरिस्टर नम्र होंगे टोप को उतार के ॥९०॥

धन्वराज ने ही किया तेरा परित्याग है,
इस मामले में दयानन्द का क्या भाग है।
उन्हें कुछ पूछने का किसे अधिकार है,
केवल उन्होंने किया धर्म का प्रचार है ॥९१॥

राजा नाबालिग नहीं क्या है फुसलाने की,
बात गुन्जाइश नहीं केस के चलाने की।
महल के मालिक को नहीं ऐतराज है,
ऋषि के प्रवेश से तो व्यर्थ तू नाराज है ॥९३॥

इस लिये बाज आ तू व्यर्थ के उद्योग से,
हो न जाय दण्ड कहीं मिथ्या अभियोग से।
छोड़ के ऋषि को गिरि तेरा अनुरागी है,
आम्र तज उष्ट मानो निम्बलताभागी है ॥९२॥

वृद्ध गिरि भी है नाता तुझ से ही जोड़ता,
दन्तहीन श्वान मुंह अस्थि से न मोड़ता।
जिससे तू मान रही निज को सनाथ है,
वह रँग बैठा दिल कपड़ों के साथ है ॥९४॥

मृत्यु की हजामत का भद्र नाम लेते हैं,
क्रूर वासर को नाम मङ्गल ज्यों देते हैं।
वाचिक वैसे ही है तू पुत्री कृष्णानन्द की,
बनी है खिलौना हाय कैसे वृद्ध मन्द की ॥९५॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ऋषि के गुणों को पहचानती नहीं है तू,
बेनजीर हस्ती को हा जानती नहीं है तू।
सूर्य का क्या दोष उल्लू देख नहीं पाता तो,
क्या करे वसन्त न करीर सरसाता तो ।।५।।

राजा की वदल डाली ऋषि के वचन ने,
हालत न मानी किन्तु वात तेरे मन ने।
न्यूटन को ग्राकर्षणवाद फलपात ने,
दिया न कि कुक्कुर को उपस्थित सामने ।।६७।।

ऋषि-वाक्य राजा को प्रसाद तुझे खेद है,
देता पात्रभिन्नता से फल में भी भेद है।
धेनु में जो दुग्ध और रस जो रसाल में,
गरल होता है वही जा के जल व्याल में ।।६८।।

मैडम विलासिका ने तेरे ही प्रकार से,
ऋषि को लुभाना चाहा अपने प्रचार से।
लेकिन जवाब मिला छोड़ो अवतारों को,
सिंह की हो इष्ट यदि सङ्गति सियारों को ।। ९।।

एकलिङ्ग मन्दिर की जायदाद लीजिये,
मूर्तियों का खण्डन परन्तु मत कीजिये।
राणा की यों बात सुन बोले ऋषि जोश में,
धन से है धर्म बड़ा आओ जरा होश में ।।१००।।

ऐसी ही हजारों वातें ऋषि के महत्त्व की,
उनके उदात्त और क्रान्तिकारी सत्त्व की।
भारत के स्मरणीय होंगी इतिहास में,
विश्व ओत प्रोत होगा जिनके आभास में ।।१०१।।

भारत के वीर ऋषि को ही अपनायंगे,
आज जो विरोधी हैं वे कल गुण गायंगें।
पत्थर जो फेंकते हैं फूल वे चढ़ायंगे,
पीछे जो पड़े हैं आगे कदम बढ़ायंगे ।।१०२।।

आज सुप्रभात है ऋषि के मेध्य दर्श से,
ऊर्ध्व रेखा वाले मृदु चरणों के स्पर्श से।
मेरे पुण्य जीवन का नया अभ्युदय है,
क्षय है पापों का सत्य धर्म की विजय है ।।१०३।।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अत एव तुझे भी उदार होना चाहिये,
आंसुओं से तापमय पाप धोना चाहिये।
मुख शुद्धि देवी का खुला है बन ग्रास तू,
पहला न कर नारी-जीवन का ह्रास तू॥१०४॥

फीस के नशे का हुआ अब अवसान है,
और मेरा बोलने से होता नुकसान है।
बता के कानून यों देवी का दिल तोड़ के,
प्लीडर रवाना हुए सभागृह छोड़ के॥१०५॥

शोक से सभा में स्थान पा गया वैराग्य था,
फूटा कृष्णानन्द का अभागा हत भाग्य था।
कल्पसुन्दरी के मानो नीचे की जमीन थी,
फट गई हृदय में प्राणशक्ति हीन थी॥१०६॥

वेदना वैसी ही आज आप वह पाती थी,
जैसे कभी दूसरों के दिल को जलाती थी।
वीरों को डुबोने वाली यौवनसमुद्र में,
डूब गई शोक शोकसागर अक्षुद्र में॥१०७॥

हो गई तबाह आशा जिसको बचाना था,
जल गया खून कहां अश्कों का ठिकाना था।
कांपता हृदय मानो कदली का दल था।
ऊपर फलक और नीचे रसातल था॥१०८॥

कल्पसुन्दरी का प्राण मृग सा हैरान था,
निराशा के कर्दम में फंस के बेजान था।
शोकानलतप्त वह हृदय का त्यागता,
उच्च कुचपर्वतों को कैसे किन्तु लांघता॥१०९॥

दक्षिण कपोल को सुला के निज हाथ में,
दीर्घ एक श्वास ले के करुणा के साथ में।
बैठी वह भाल पर स्वेदमुक्ताजाल था,
उसे पोंछने को कृष्णानन्द का रूमाल था॥११०

पीड़ित दुष्कर्म या दुरन्त भाग्यदोष से,
मन्त्ररुद्धा सर्पिणी सी आग हो के रोष से।
हृदय में प्रतिष्ठित कर पञ्चबाण को,
बोली वह लक्ष्य कर वीर दरबान को॥१११॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सेवक का धर्म ऋजु हो के भी कुटिल है,
योगी नहीं जान पाते इतना जटिल है।
जिसके सन्तुष्ट होता पौरुष से स्वामी है,
मरने के बाद वह होता स्वर्गगामी है ।।११२।।

ऋषि का तमाम किस्सा पाक कर डाल तू,
होकर अदम्य धीर क्षात्रधर्म पाल तू।
दोजख की आग में ढकेल भिखमङ्गे को,
हौवा और आदम के जमाने के नङ्गे को ।।११३।।

जङ्गल में घूमने को रोज ऋषि जाता है,
अन्धकार हुए बिना वापिस न आता है।
कत्ल कर डाल उस जालिम अकेले को,
लेकर सहाय साथ अन्य किसी चेले को ।।११४।।

बात क्या है ऋषि को समाप्त कर डालना,
आगे मेरा फर्ज होगा केस को सँभालना।
तुझे अमीरों का सरताज कर दूंगी मैं,
हीरों और मोतियों से जेब भर दूंगी मैं ।।११५।।

शरीर के शरीर को कर पायमाल तू,
मालिक के नमक को कर दे हलाल तू।
खोद के जमीं में गर्त उसे गाड़ देना तू,
कागज सा चर्म और मर्म फाड़ देना तू ।।११६।।

इतने में मुख विश्वमाधुरी का बन्द था,
हुआ दरवान का आनन्द सब मन्द था।
बोला वह देवि है निस्सार ही उत्तेजना,
तहतुस्सरा को मुझे चाहती हो भेजना ।।११७।।

तापसों में शान्त रस यद्यपि प्रधान है,
भीतर विदाहकारी तेज का निधान है।
उसका व्यञ्जक अन्य तेज का सम्पर्क है,
करता प्रदीप्त सूर्यकान्त को ज्यों अर्क है ।।११८।।

एक बार विक्रम को विक्रम दिखाने को,
ब्रह्मचर्य व्रत की प्रशस्तता सिखाने को।
ऋषि ने पीछे से रोका उसके सुरथ को,
अश्व चारों चित्रसम सजाते थे पथ को ।।११९।।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

एक रोज एक पापी खड्ग ले के आया था,
ऋषि ने हुङ्कार से ही उसको भगाया था।
मारा कालसर्प को था मुष्टि में जकड़ के,
रोका महावृष को था श्रृङ्ग को पकड़ के ॥१२०॥

शारीरिक शक्ति में भी ऋषि बेनजीर है,
हाथ में उसके शत्रुघातिनी लकीर है।
पीस डाले पर्वत को वह मुष्टिघात से,
उसके हों भस्म रिपु तीव्र दृष्टिपात से ॥१२१॥

एक बार करके हिम्मत ताल ठोंक दूं,
नाम पर तुम्हारे कहो तो प्राण झोंक दूं।
लेकिन सफलता तो व्योम की लता ही है,
शेर और बकरे की कुश्ती का पता ही है ॥१२२॥

सेवक से निराशा का सुन के पैगाम यों,
दैव और पौरूष को जान कर वाम यों।
हो गई बेहोश वह शोकविषवेग से,
किसी ने जिगर मानो काट डाला तेग से ॥१२३

स्मृति के विध्वंस का जो हेतु मशहूर था,
कश्मल ने देवी का विषाद किया दूर था।
केश थे बिखर गये असंज्ञ निपात से,
मेम्बर सभा के मानो नियमातिपात से ॥१२४॥

मीलित हो शोक से मृगाक्षी कुम्हलाती थी,
अशनि से दग्ध हेमलता सी सुहाती थी।
किन्तु उस लता में दो शैल विपरीत थे,
प्रकृतिविरोध देख लोग सब भीत थे ॥१२५॥

कोलाहल होने लगा उसको जगाने में,
गदहा नियुक्त हुआ होश में ले आने में।
डाक्टर के पूर्वचितपुण्यों का उदय था,
देवी के न स्पर्श में जो कहीं उसे भय था ॥१२६॥

प्राणगति देखने को स्पर्श हुआ स्तन का,
उष्णता के जानने को मर्दन बदन का।
आकुञ्चन रोकने को नीवि की विमुक्ति थी,
विना खर्च डाक्टर की सुरत में युक्ति थी ॥१२७

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

गदहा बेचारा कभी कूर्पासिक खोलता,
कभी गर्दन को कभी सीने को टटोलता।
कृष्णानन्द झलते थे पङ्खा बड़े चाव से,
और पुचकारते थे उसे पुत्रीभाव से ॥१२८॥

कुछ देर बाद वह आई जरा होश में,
मदिरा की घूंट पी के भर गई जोश में।
डाक्टर के स्कन्ध पर बालजाल डाल के,
बोली वह पोंछ कर स्वेदकण भाल के ॥१२९॥

तुष्ट हो अतनु तुम तनुधनभोग से,
ऋषि का अपाय करो गरलप्रयोग से।
इतने में नशे में हो चूर वह झूमने,
और लगी डाक्टर का हस्ततल चूमने ॥१३०॥

धन का गुलाम बदनाम वह हृष्ट हो,
चिकनी चुपड़ी इन बातों से आकृष्ट हो।
बोला कि अनेक वार ऋषि के निधन में,
विफल गरल हुआ जीवनपतन में ॥१३१॥

विष को निकालने में ऋषि की प्रवीणता,
व्यक्त है इसी से कुछ होती नहीं क्षीणता।
इष्टसाधन का अन्य मार्ग नहीं पाता हूँ,
आसान तरीका एक तुमको बताता हूँ ॥१३२॥

पिपासित ऋषि को प्रणीत वाणी बोल के,
सूक्ष्म कण शीशे के पिला दे कोई घोल के।
कहते न आगे बना दम्भी अपलापी की,
इतने में हो गई जबान बन्द पापी की ॥१३३॥

कल्पसुन्दरी ने तब फैला कर हाथ को,
लालच से खींच लिया पास जगन्नाथ को।
और कहा यदि तू करेगा इस काम को,
प्रतिफल पायगा अपार धन धाम को ॥१३४॥

धर्मघातिनी के इस भीषण प्रस्ताव के,
समर्थक कृष्णानन्द हुए नीच भाव के।
सम्मति का लक्षण सभी में हुआ मौन था,
पाप का विरोधकारी हाय वहां कौन था ॥१३५॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आज ऋषिराज के अक्षय्य बलिदान का,
हो गया प्रस्ताव पास पातकविधान का।
तारे जगमगे थे या वृत्त यह जाग के,
दिल में सूराख लाखों हुए आसमान के ॥१३६॥

गर्जा तव वाटिका में केसरी सक्रोध था,
मानो उन पामरों का करता विरोध था।
चारों ओर कुक्कुरों के रोने की पुकार थी,
दीन राजधानी मानो रोती जार जार थी ॥१३

हवा भी हवेली में न उस वक्त आती थी,
मानो उन पापियों से निज को बचाती थी।
बाग में था बाघ रौद्र घोष से दहाड़ता,
कृष्णानन्द गिरि के कलेजे को था फाड़ता ॥१३८॥

कान पर हाथ रख नाम लेके राम का,
सोच के अन्जाम इस पैशाचिक काम का।
देख कर घृणा से बेदीन महफिल को,
कहा जगन्नाथ ने संभाल कर दिल को ॥१३९॥

विप्र विज्ञ संन्यासी के गुप्त अपघात में,
कैसे एक राय हुई ऐसी नीच बात में।
इसी लिये सम्मेलन तुम ने किया है क्या,
गिरने का गुरुमन्त्र गिरि से लिया है क्या ॥१४०॥

हो कर मैं भृत्य करूं उनका निधन क्या,
पापों से कमाया हुआ काम देगा धन क्या।
उल्फत राजा की नहीं लौट कर आयगी,
देवि इस पाप से तू लाभ क्या उठायगी ॥१४१॥

ब्रह्महत्यापातक से इन्द्र परेशान हो,
भागा फिरा भुवनों में बेचारा हैरान हो।
स्त्रियों ने बचाया उसे ले के पापभाग है,
उस पुण्यश्लोक में लगाती क्यों तू दाग है ॥१४२॥

शङ्कर भी भयङ्कर ब्रह्महत्यापाप से,
छोड़ के कैलास भागे काशी अनुताप से।
किन्तु कार्यवश उन्हें विष्णु ने बचाया था,
भारत में रक्त उस कृत्या को पिलाया था ॥१४३

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ब्रह्महत्यालता के गरलशाली फल थे,
खाकर लक्ष्मण हुए जिन को विकल थे।
द्विविद ने बचा लिया उन्हें मन्त्रयोग से,
विषमज्वर के दिया छुटकारा रोग से ॥१४४॥

किन्तु मुझे कौन इस पाप से बचायेगा,
वैतरणी तरने को नौका कौन लायगा।
मेह की बौछार से बुझेगी यह आग क्या,
गङ्गा की तुषार धारा धो सकेगी दाग क्या ॥१४५

ऋषि को बीमार कर गरल के मेल से,
रहेंगे न हम लोग महफूज जेल से।
साजिश वकील वह लोगों को वतायेगा,
बन के गवाह हमें कोर्ट में सतायगा ॥१४६॥

सामुद्रिक दक्ष ऋषि मुख के विकार से,
जान लेंगे मैं नहीं बचूंगा पशुमार से।
आकर्षित ध्यान होगा भारत तमाम का,
कैसे न चलेगा पता मेरे नीच काम का ॥१४७॥

ऋषि की क्षमा से भी तो नहीं छुटकारा है,
प्राणों को गलाने वाली तीन सौ दो धारा हैं।
क्रोध धन्वराज का भड़क जब जायेगा,
गदहा क्या बेंतों की सजा से वच पायगा ॥१४८॥

कल्पसुन्दरि क्या तेरे अधम विचार में,
ले डूबेगा एक पापी नाव मँझधार में।
तेरे रूप रङ्ग पर ध्यान जब जाता है,
विषयुक्त स्वर्णघट मुझे याद आता है ॥१४९॥

भारत के पुण्य और औषधप्रयोग से,
शायद हो जायं ऋषि मुक्त विपरोगसे।
अनिश्चित अन्त में चण्डालव्यवसाय क्यों,
बेगुनाह हस्ती पर बेहद अन्याय क्यों ॥१५०॥

मारवाड़ एक तो वैसे ही वदनाम है,
दूसरे नरत्व के विरुद्ध यह काम है।
इस लिये क्षमा करो मुझे इस पाप से,
वचाओ असह्य महातपन के ताप से ॥१५१॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जगन्नाथ शान्त हुआ इतना ही बोल के,
गौरव से ग्रन्थि उपवीत की टटोल के।
डाक्टर यों सुन के हो गया सावधान था,
लगा वह करने शङ्का का समाधान था ॥१५२॥

संन्यासी के शिखा और सूत्र का वियोग है,
मुसलमानों का सा ही उसका प्रयोग है।
कण्ठी नहीं गले में तिलक नहीं भाल में,
ऋषि ने फँसाया है लाखों को वेद-जाल में ॥१५३

हिन्दुओं के कार्य सब उसके विरुद्ध हैं,
करोड़ों हमारे भाई हो रहे अशुद्ध हैं।
हिन्दूधर्मघातक को मारने में दोष तू,
देखता है पागल दिखाता है क्यों रोष तू ॥१५४॥

शाहपुरराज ने ऋषि की बात मानने के,
मन्दिर उजाड़ डाले कई भगवान के।
साधुओं की पूजा से धो बैठीं हाथ देवियां,
पहुँचातीं नहीं हैं वे मठों में जलेबियां ॥१५५॥

हिन्दूकुलसूर्य का भी ऋषि में ही राग है,
भङ्ग पीने वालों का उजड़ गया बाग है।
हाल यों ही रहा तो हिन्दुत्व मिट जायगा,
इञ्जील की नील से ही हिन्द रङ्ग जायगा ॥१५६॥

मुगलों की तीक्ष्ण असिधारा में नहा के भी,
बच्चों और औरतों के खून को बहा के भी।
जिसे नहीं छोड़ा वह धर्म छूटता है क्यों,
ऋषि के इशारे से ही दुर्ग टूटता है क्यों ॥१५७

अतः शीघ्र स्वर्ग में ऋषि को भेज देना है,
सनातन धर्म को बचा के पुण्य लेना है।
हृदय की कातरता छोड़ जगन्नाथ तू,
इस योजना में पञ्चायत का दे साथ तू ॥१५८॥

स्वामिघात से बने हैं राजा भृत्य पास के,
पाता हूँ प्रमाण में अनेक इतिहास के।
दिग्विजय का भी तो नजारा रक्तपात है,
सामने या गुप्त हो विघात साफ बात है ॥१५९

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हेमन्तसरोजिनी सी तुहिनसम्पात से,
क्षीणा चन्द्रकला मानो राहु के उत्पात से।
कल्पसुन्दरी को राजभोग की न भूख है,
यह अपमान की चिन्ता से गई सूख है ॥१६०॥

निज मानहानि का ही बदला चुकाने को,
करती है यत्न यह न कि भोग पाने को।
कुचलते हुए को न शोणित की चाह से,
काटता है सर्प बल्कि चण्डहो के डाह से ॥१६१

डालता हूँ हाथ इस काम में धर्मार्थ मैं,
सिद्ध नहीं करता हूं कोई यहां स्वार्थ मैं।
जरूरत आ पड़ी है तेरे सहयोग की,
पाचक के पेशे के यथार्थ उपयोग की ॥१६२॥

पुराणों की कहानी को सत्य जानता है क्या,
शेखचिल्ली की बातों को ठीक मानता है क्या।
व्यास की हजारों भूलें ऋषि बतलाता है,
ईमान जल्पित गल्पों पर क्यों तू लाता है ॥१६३

वैतरणी तरने का करता क्या जिक्र है,
किश्ती बनवा दूंगा मैं कैसा यह फिक्र है।
कल मुझे खबर मिली थी अखबार से,
हो गया नरक नष्ट भूकम्पप्रहार से ॥१६४॥

कृष्णानन्द गिरि के पवित्र उपदेश से,
मुक्त होगा अन्त में तू पापबन्ध क्लेश से।
इस लिये व्याकुलता छोड़ कर चित्त की,
कर न उपेक्षा इस पुण्यलभ्य वित्त की ॥१६५॥

प्लीडर के पास नहीं कोई भी प्रमाण है,
वैयक्तिक शत्रुता हमारा परित्राण है।
सामुद्रिक मुद्रा पर कोर्ट को विश्वास हो,
इतना कानून का न तो कभी विकास हो ॥१६६॥

रोकर ही भारत समस्त रह जायेगा,
हमारे विरुद्ध नहीं कुछ कह पायेगा।
कल्पसुन्दरी का दास आप थानेदार है,
केस की तो जड़ों में ही घुन का प्रचार है ॥१६७

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

एक बार एक तहसीलदार आया था,
ऋषि के विषद का पकड़ पास लाया था।
कहा क्षमाशील ने न वाजिब सताना है।
मेरे जीवन का लक्ष्य बन्ध से छुड़ाना है ॥१६८॥

क्षमा और दया का समुद्र ऋषि सत्य है,
इस लिये स्वामी पर तेरा आधिपत्य है।
ऋषि से क्षमा की आशा निश्चित ही रख तू,
जहर पिला के रस अमृत का चख तू ॥१६९॥

राजा बाल बांका नहीं मेरा कर सकता,
नाउम्मीद ! कार्य से तू नाहक झिझकता।
कल्पसुन्दरी का उच्च यौवनाधिकारी हो,
भिखारी के साथ मत रह के भिखारी हो ॥१७०॥

कर न सकेगा ऋषि अफल षड्यन्त्र को,
दाखिलेशिकम शीशा काट देगा अन्त्र को।
चिकित्सा के हेतु राजा मुझे बुलायेगा,
शीशियों के द्वारा नया गुल खिल जायेगा ॥१७१

सूली के हवाले हुआ मन्सूर का देह था,
ईसा ने भी व्यक्त किया उसी पर स्नेह था।
जहर का प्याला पीके सोया सुकरात था,
इब्राहीम लिङ्कन का हुआ अपघात था ॥१७२॥

अर्जुन को और तेगबहादुर वीर को,
मार के बचाना पड़ा राज्य की लकीर को।
विना शृङ्ग पुच्छ के दो पैर के हैवानों की,
दवा है अक्सीर यही धर्म के दीवानों की ॥१७३

डाक्टर खामोश हुआ भाग्य का उदय है,
कृष्णानन्द बोले जगन्नाथ तेरी जय है।
जिस की दृष्टि में कम बुद्धि से अवर है,
उस पर विश्वहत्या की नहीं असर है ॥१७४॥

पद्मपत्रतुल्य आत्मा पापरूप जल से,
स्पृष्ट नहीं होता मत त्रस्त हो तू फल से।
ऐहिक भोगों से होता इन्द्रियों का तोष है,
ब्रह्मभिन्न जीव में न लेश भर दोष है ॥१७५॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मिथ्या है प्रपञ्च और जीव ब्रह्म एक है,
कौन किसे मारता है कैसा अविवेक है।
कुछ नहीं करता मैं ऐसे ही खयाल से,
सब कुछ कर न बंधेगा कर्मजाल से ॥१७६॥

प्रतिक्षण ध्वंस होता सब के शरीर का,
आगम निर्गम स्वाभाविक है समीर का।
आत्मा है अवध्य फिर नाश का क्या क्रम है,
तुझ से विद्वान् के दिमाग में क्यों भ्रम है ॥१७७॥

कृष्ण सम मान कर कृष्ण के आदेश को,
अर्जुन सा हटादे तू बान्धवों के क्लेश को।
मुझे ही शरण मान भक्ति से बेरोक तू,
अघों से छुड़ा दूँगा मैं मत कर शोक तू ॥१७८॥

कृष्णानन्द गिरि के यों भ्रान्त मिथ्यावाद से,
अचेतन जगन्नाथ हो गया उन्माद से।
कल्पसुन्दरी ने उसे हुस्न के बगीचे में,
चाहा था घुमाना पशुवृत्ति के नमूने में ॥१७९॥

किन्तु पापमन्त्रणा में रजनी समाप्त थी,
सुन्दर उषा की लाली अम्बर में व्याप्त थी।
ह्रस्व दीर्घ और प्लुत कुक्कुट का नाद था,
लोक की त्रिविध मानो सत्ता का संवाद था ॥१८०॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

नवम सर्ग

विष पिला पय में निज नाथ को, द्रविणयाचक पाचक हृष्ट था ।
अधम के अध से अनुरूप है, उछलना छलना ऋजु चित्त को ॥१॥

अमृत देकर भी विष पी लिया, विबुध ने यह बात नई नहीं ।
निज चराचर के हित के लिये, निमन को धन कोविद मानते ॥२॥

जलधिमन्थन से निकला हुआ, भुवन को विष था खलने लगा ।
तब बने सब के अनुरोध से, जहर के हर केवल पात्र थे ॥३॥

अमृत पीकर सेवक हस्त से, गरलयुक्त यतीश्वर सो गये ।
हृदय से हृदयेशय शक्ति के, गुण लगा कर गा कर भक्ति से ॥४॥

स्वपन का सुख किन्तु बिला गया, शहद में विधि अर्क मिला गया ।
विकल दृष्टि तपोधन की लगी, झपकने पकने विष से त्वचा ॥५॥

चिरनिमीलित नेत्रसरोज में, अरुणता ऋषि के स्फुट हो चली ।
सरल मानस के सिर रोष से, उमड़ती मढ़ती विषदोष को ॥६॥

धमनियां ऋषि की हिलने लगीं, विकल फुप्फुस से मिलने लगीं ।
रुधिर के सहसा अवरोध से, उभरती भरती दिल में व्यथा ॥७॥

शयन में ऋषिपुङ्गव थे लगे, कुछ विलक्षण स्वप्न निहारने ।
सुकृतिनी कर प्राप्त जिन्हें हुई, सुकविता कवितार्किकरत्न की ॥८॥

विधु उपप्लुत दीख पड़ा उन्हें, शशक सा वृकभीषण राहु से ।
पर उसे बुध आप बचा रहा, श्रुतिनिकेतन के तन से लगा ॥९॥

लपट में लिपटा घर आग की, निकट सङ्कट दृष्ट हुआ उन्हें ।
युवतियाँ करतीं शमनार्थ थीं, नवरसा बरसा निज अश्रु की ॥१०॥

नजर का ऋषि की तरुवाटिका सुरभि, चुम्बन थी करती कहीं ।
तुहिन के कण किन्तु मिटा रहे, मुकुल से कुल केसरराग को ॥११॥

धवल मस्जिद दीख पड़ा उन्हें, पर नमाज वहां न सुनी गई ।
प्रणवलक्षित थी उस में ध्वजा, फहरती हरती मन की व्यथा ॥१२॥

गहन में गिरि में नर घूमते, कुछ अशिक्षित दृष्ट हुए उन्हें ।
मनुजगौरव के गुण को नहीं, परखते रखते पशुभाव को ॥१३॥

ज्वरित नाविक शक्तिविहीन था, पथिक भीत विनाश विचार के ।
तरणि को ऋषि देख रहे कहीं, उतरती तरती चल सिन्धु में ॥१४॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

विशद मन्दिर आर्यसमाज के, स्वपन में उनके चमक गई।
विकल थे पर वे मतभेद की, यह जिहालत हालत देख के ॥१५॥
विकट आग लगी सब ओर थी, जल रहे सब अज्झड़ झाड़ थे।
मुदित थे ऋषि देख उपाय से, सुधरती धरती कृषि के लिये ॥१६॥
उस भुजङ्गम को धर चोंच में, स्फुटित थी जिसकी चपला स्फटा।
फिर रही शिखिनी पर थी नहीं, निगलती गलती करती बड़ी ॥१७॥
हरिण का शिशु कोमल एक था, द्रवित थे उसको ऋषि देख के।
अजदहा उसको पर खा रहा, गजबनाक बनाकर चित्त को ॥१८॥
हथकड़ी जिनके कर में लगी, लड़कियाँ सड़कों पर वे मिलीं।
अधम शासन के अतिपात से, शुचिमना मन ही मन हीन थे ॥१९॥
मधुर चम्पक और चमेलियाँ, स्वपन में श्रुतिरक्षक के खिले।
पर नई उन की कलिका कला, बिखरती खर तीव्र समीर से ॥२०॥
पवन से धरती हिल थी रही, पिघलती घुलती रविताप से।
जब खयाल हुआ ऋषिराज को, बस अभी गिरजा गिर जायगा ॥२१॥
शिशु मनोहर मानस विश्व में, तड़फता ऋषि के हत भूख से।
स्वकर से मुख नूतन सोम से, कमल कोमल को मल था रहा ॥२२॥
निकल के अपने घर बार से, भटकती टिकती न कभी कहीं।
हृदय को ऋषि के खेलने लगी, डगमगी गमगीन वरानना ॥२३॥
मलिन सेवक पागल था कहीं, फिसलता जलता गुरु शोक से।
उँगलियाँ उसकी स्फुट स्वप्न में, गिन रहीं न रहीं पर गिन्नियाँ ॥२४॥
प्रचुर पश्चिम से उठती हुई, तिमिर के उत्पादन के लिये।
गगन में यति से घन दृष्ट थी, घनघटा न घटा तप सूर्य का ॥२५॥
करुण और भयानक भाव के, स्वप्न यों बहु देख सरस्वती।
जग पड़े सहसा दिल साहसी, मचलने चलने उनका लगा ॥२६॥
झट प्रकाश जला कर वे लगे, नयन को जल से कुछ सींचने।
शिकम का उनके तब था शुरू, बिगड़ना गड़ना कुछ चीज का ॥२७॥
ज्वर त्रिदोषज सा चढ़ने लगा, तमक का जब भी बढ़ने लगा।
सलिल शीत पिया व्रतधीर ने न हिचकी हिचकी फिर भी जरा ॥२८॥
शयन छोड़ लगे फिरने व्रती, उदर का जिस से गद शान्त हो।
मगर अन्त्रविदारक रोग को, टहलना हल नाकिस क्या करे ॥२९॥
वमन और विरेचनवेग की, लिख नहीं सकती गति लेखनी।
जल उठा उनका दिल आग से, विष बहाल बहा लघु रक्त में ॥३०॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

समझ कर गरयोग निदान से, ऋषि पुकार उठे निज भृत्य को।
नजर थी उस पातकमूर्ति की, विलखती लखती निज नाथ को ॥३१॥

मुखविकार निहार विचार के, विषदलक्षण लक्ष्य विषाद के।
ऋषि लगे कहने उस नीच से, तव यशोधन शोधन में कृती ॥३२॥

उचित क्या तुझको यह कर्म है, शरम है इस में न कि शर्म है।
तड़फता जड़ तू जिस के लिये, जर सदा रसदायक है नहीं ॥३३॥

किस प्रकार कहाँ कब थी हुई, गरलमिश्रण की यह योजना।
सब हटा कर शङ्कित चित्त से, वहम को हम को सच तू वता ॥३४॥

मुख वना जिस का अपिधान है, नजर डिण्डिम है उस काम का।
इस लिये वन घूक न मूक हो, शक अभीक अभी मिट जायेगा ॥३५॥

सरलचित दयाधन धीर की, स्फुट हुई यह वाङ्मयचातुरी।
मधुरता इस में कितनी रही, शहद की हद कीमत की कहानी ॥३६॥

तदपि सेवक की वकधारणा, स्थिर रही मृत सा वह शान्त था।
सफल भेषज लब्ध नहीं हुआ, विकृत पागल क गल के लिये ॥३७॥

गगन में शतचन्द्र निहारता, शिर कभी कर से धर मारता।
झट हुआ परिवर्तित धूर्त था, विकल हो कल होश उसे न था ॥३८॥

निकट दीख पड़ा हर सू उसे, विकट नर्तन भैरव काल का।
कवल सा वह दुर्जन मृत्यु का, नियति स यतिसेवक हो गया ॥३९॥

दशन में धर के तृण दीन हो, नरक का वह अध्वग काँपता।
सँभल के कुछ यों कहने लगा, मुखरता खरता खल की खुली ॥४०॥

विदित क्या भगवन् तुम को नहीं, वितथ सेवक का वकवाद है।
निज पुरातन पातक का यही, फल पका लपका धनहेतु मैं ॥४१॥

न मुझ को उस वक्त विचार था, कि इस का परिणाम जघन्य है।
अव मुझे भ्रममूलक भूल से, विषम तापस ! ताप सता रहा ॥४२॥

द्विजमहायतिघातकपाप से, पतित है यह पामर आपका।
जगत् में निज मैं दिखला चुका, सुजनता जनता अनुताप है ॥४३॥

विमल ब्राह्मण सन्तति आज हा, मुझ नराधम के इस कृत्य से।
मलिन और कलङ्कित है यथा, कविकला विकला रसदोष से ॥४४॥

प्रचुर पाकर भी धन आप से, [illegible] कर हो गुजरा प्रभो।
सुफल भी चख के तजता नहीं, कुटिल कीर [illegible] को ॥४५॥

धरणि के तज के अरविन्द को, [illegible] जो।
मिल कभी सकती उसको नहीं, न [illegible] यह कर्म है ॥४६॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जल मरूँ गिर आप तुषाग्नि में, अतल सागर में अथवा पड़ूँ।
समय है अब तो सुख से नहीं, गुजरता जरता सब गात्र है ॥४७॥
अब मुझे निज जीवन से घृणा, अधिक है इसका द्रुत ध्वंस हो।
इस बुरी कृति के अन्त क्या, असर का सरकार विचार ले ॥४८॥
प्रतनु काच मिला कर दूध में, समय पाकर मैं कर में तुम्हें।
अधिक और नहीं कहते बना, अधम से धम से गिर ही पड़ा ॥४९॥
शिर धरातल से टकरा गया, कलुषगौरव से चकरा गया।
वह चला उस ब्राह्मणबन्धु के, पतन से कुछ रक्त था ॥५०॥
तव सनातन वैदिक धर्म के, नियमतः प्रतिपालक ने कहा।
की कुछ विप्लुति रोक के, उकसती कसती मतितन्तु को ॥५१॥
अवर तान हतग्रह थे जहां, भवन में कर वास कलत्र के।
द्विज अधोगति में रत तू मिला, मरणकारण कायर! है मुझे ॥५२॥
विमल है जनि यद्यपि वंश में, तदपि कर्म किया यह लोकु से।
हत मिली तुझ को हिमपात से, कमलिनी मलिनीकृत सी मति ॥५३॥
जगत् में वह कौन पदार्थ है, मिल नहीं सकता श्रम से कि जो।
वचन से उस पामरवर्ग के, वहक नाहक नाम डुबो दिया ॥५४॥
यदपि मैं अघ को सहता नहीं, पर तुझे कुछ भी कहता नहीं।
सदय हूँ तुझ से दमनीय के, दमन का मन कायल है नहीं ॥५५॥
मग पाकर भी मुझ से क्षमा, रह न तू सकता सुख से यहां।
खुल गया यदि भेद विचार ले, प्रलय है लय है यमनाट्य को ॥५६॥
कर विषाद मुझे न विषाद से, निहत हो गत हो मत हो दुखी।
सफर—खर्च अभी यह साथ ले, अभग जा भग इस देश से ॥५७॥
अहित घातक के हित के लिये, कर कृपा धन दे कर हाथ से।
विभु तथागत जीजस आदि को, नकल की कलकीर्ति यतीश ने ॥५८
इस प्रकार भगा कर भृत्य को, विगतशोक हुए प्रिय लोक के।
ऋषि परन्तु अरुन्तुद हो गया, विष-सना तनना तन का शुरू ॥५९॥
गति विरेचन की विकराल थी, रूधिरसेचन से क्षिति लाल थी।
सुखविघातक था व्रतधीर का, वमन भी मन भीत न किन्तु था ॥६०॥
गद भयङ्कर देख यतीन्द्र का, व्यथित हो सजनी रजनी भगी।
बस प्रभात हुआ कि चली हवा, महल की हलकी खुशबू लिये ॥६१॥
श्रुत ने श्रुतिमन्त्र को, मनन ही जिनका प्रिय लक्ष्य था।
कह दिया कि यथाविधि होत से, पवन को वन शुचिता मिले ॥६२॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

श्रुतिलताकलिका खिल जायेगी, सफलता सब को मिल जायगी।
जन परस्पर प्रेम किया करें, हवनसेवन से बन के सुखी॥ ६३

गद मुझे भृश आज सता रहा, तनुनिपात समीप बता रहा।
मगर शोर नहीं इस बात का, बहुत हो हुत हो घृत अग्नि में॥ ६४

गरल की सुन कुक्कुट से कथा, अरुण भास्कर का अतिरोष से।
बन गया दयितायुत कोक के, किरण कारण कामरहस्य का॥ ६५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दशम सर्ग

—:०:—

ऋषिराज के उपदेश से, जड़वाद के गुरु क्लेश से,
है मुक्त क्रमशः हो चली मेरी प्रजा।
है वेद का जाना गया, ध्रुव धर्म पहचाना गया,
मूर्खता को ले गई मानो कज़ा ॥ १ ॥

है पुण्य वेदों की कथा सन्ध्या हवनविधि की कथा,
जिस में अनघ यह राज्य मेरा धन्य है।
जो दास ऋषि का हो गया, जीवन सुधा से धो गया,
संसार में वह पुण्यशील अनन्य है ॥ २ ॥

जिसका न था मुझको पता, वह पथ दिया ऋषि ने बता,
चल कर उसी पर मैं सुकृतभागी बनूं।
निज सभ्यता की जय रहे, परदेशियों को भय रहे,
निज देश के स्वातन्त्र्य का रागी बनूं ॥ ३ ॥

हलका प्रजा का भार हो, इस का सपदि उद्धार हो,
कर्तव्य है अनिवार्य यह नरराज का।
मैं था उसे भूला हुआ, पशुभोग से फूला हुआ,
क्षय हो गया अब दुर्व्यसन के साज का ॥ ४ ॥

कितना बुरा वह कर्म था, देता मुझे जो शर्म था,
होता पतित जिस से नरेन्द्रसमाज है।
ऋषि ने उसे छुड़वा दिया, अघबन्ध को तुड़वा दिया,
अब सोच कर आती मुझे खुद लाज है ॥ ५ ॥

जागीर जिसको दी गई, पूरी प्रतिष्ठा की गई,
मन्दिर यहाँ के चन्द्रचुम्बी जगमगे।
पर शोक की यह बात है, जो सालती दिन रात है,
उन में सभी हैं मूर्ख पूजारी लगे ॥ ६ ॥

उन का सहें हम भार क्यों, यह धर्म का आचार क्यों,
शिक्षित बनें वे मन्दिरों से या भगें।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वे विप्र यदि पढ़ते नहीं, विज्ञान में बढ़ते नहीं,
तो कर्षकों के काम में भरसक लगें ॥ ७ ॥

पञ्चाङ्ग लेकर साथ में, लोटा उठाकर हाथ में,
यों ब्राह्मणों का मांग खाना है बुरा।
ऋषिवर्य कहते ठीक हैं, उन के वचन न अलीक हैं,
नक्षत्र तिथि का राग क्यों यह बेसुरा ॥ ८ ॥

दर दर भटक कर याचना, करतल स्त्रियों की जांचनाँ,
कानून से ही क्यों न कर दूँ बन्द मैं।
उस विप्र का मरना भला, जो ढोंग यों करने चला,
शिक्षासदन को खोल दूं आनन्द में ॥ ९ ॥

क्यों साधु धन पाया करें, हलुआ वृथा खाया करें,
क्या भोग के ही अर्थ यह वैराग्य है।
काँटे यही हैं देश के, जालिम विधाता क्लेश के,
बढ़ता इन्हीं से देश का दुर्भाग्य है ॥ १० ॥

मठधारियों की शुद्धि हो, इन में निवेशित बुद्धि हो,
खावें नहीं ये लोग माल हराम का।
इन से न जो भरपूर हों, इस राज्य से वे दूर हों,
वह मूर्खतापालन भला किस काम का ॥ ११ ॥

मैं टैक्स कुछ हलका करूँ, उत्साह कृषकों में भरूँ,
यूरोप के ही कर्षकों की रीति से।
खेती यहाँ सम्पन्न हो, सब के घरों में अन्न हो,
जनता रहित दुर्भिक्ष की हो भीति से ॥ १२ ॥

व्यापार की जय बोल दूँ, बस कारखाने खोल दूँ,
बनने लगें उपयुक्त सब चीजें यहीं।
हिन्दू स्त्रियों की वह कला, क्या गैर से कम है भला,
आमद विदेशी माल की अच्छी नहीं ॥ १३ ॥

कर धूम ग्राम्य प्रचार की, सच्चे सरल उपकार की,
प्रचलित करूँ मैं रात्रिशिक्षालय अगर।
शिक्षा यहां अनिवार्य हो, यह हुक्म शिरसा धार्य हो,
विद्यारहित हो जायँ क्यों दुर्लभ न नर ॥ १४ ॥

इस भाँति देख सुधार को, मेरे अभय व्यवहार को,
स्वार्थान्ध ये अँगरेज भड़कँगे सही।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पर व्यर्थ हस्तक्षेप का, निस्सार यों अवलेप का,
परदेशियों को है नहीं अधिकार ही ॥ १५ ॥
यों सोचते मरुपाल थे, आते अनेक खयाल थे,
ऋषि की दया उन पर हुई सचमुच बड़ी।
वह स्थान भी एकान्त था, नृप का हृदय विभ्रान्त था,
निज देश की चिन्ता उन्हें थी उसी घड़ी ॥१६॥

तत्क्षण पुरोहित आ गया, आदर यथावत पा गया,
उस से तभी पूछा गया ऋषि का कुशल।
झट पत्र उसने दे दिया, नृप ने अदब से लिया,
भुज सव्य उनका हो गया उस वक्त चल ॥१७॥

उस पत्र में पढ़ हाल को, फैला समझ खलजाल को,
धन्वेश मन की वृत्तियों को खींचकर।
व्याकुल वहुत ही हो गये, मुख अश्रुजल से धो गये
चित्ररूप से कुछ देर लोचन मींचकर ॥ १८ ॥
तकलीफ के पड़ फेर से, सँभले क्षितिप कुछ देर में,
कर्तव्य ने उनके हृदय को बल दिया।
कुछ राजमन्त्री के लिये, फरमान जारी कर दिये,
लेकर जिन्हें सत्वर पुरोहित चल दिया ॥ १९ ॥
नृप फिर हुए गमगीन थे, चिन्तानदी के मीन थे,
मुखसूर्य उनका शोकराहु—ग्रस्त था।
क्या वज्र उन पर आगिरा, या भाग्य भारत का फिरा,
उत्साह मानस और कायिक ध्वस्त था ॥ २० ॥
वे शोक से जलने लगे, करतल स्वयं मलने लगे,
आनन्द परिचित हो गया उनसे विदा।
संसार भर को छोड़ के, सम्बन्ध सब से तोड़ के,
सब केन्द्रित रञ्ज था उन पर फिदा ॥ २१ ॥
नृप तेज निज खोने लगे, अपशकुन वहु होने लगे,
मानों उन्हें कुछ हो गया उन्माद था।
कुत्ते शिकारी रो उठे, किस हेतु आतुर हो उठे,
किस की भयानक मृत्यु का संवाद था ॥२२॥
थे फूल गमलों में नये, सहसा सभी मुरझा गये,
या भूप की दृष्टि में कुछ भ्रान्ति थी।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

फूटा भरा जल का घड़ा, जो शब्द कर बैठा बड़ा,
जड़ वस्तुओं तक में हुई क्या क्रान्ति थी ॥२३॥
जो रानियों के मुँह लगी, उनके वचन की दिल्लगी,
करती हुई फिरतीं सदा थी मोद में।
मैना महल में रो रही, सङ्गीतवर्जित हो रही,
क्यों खेलती नृपके नहीं थी गोद में ॥ २४ ॥
शीशा अचानक फट गया, क्यों बीच से वह कट गया,
भूकम्प से वह महल भी हिलने लगा।
गायें वहुत नाराज थीं, करतीं विरस आवाज थीं,
क्या सृष्टि का सौभाग्य भय पाकर भगा ॥२४॥
क्या हेतु था इस क्रान्ति का, या खेल ही था भ्रान्ति का,
जिज्ञासु थे नृप किन्तु हो न सके खड़े।
परवश शरीर तमाम था, बल का न उसमें नाश था,
वे थे अचल आराम—कुर्सी पर पड़े ॥ २६ ॥
सेवक न जाने थे कहां, कविकल्पना ही थी वहां,
भावुक हृदय अवकाश पूरा पा गया।
कुछ देर नृप चुपचाप ही, सहते रहे सन्ताप ही,
तब दृश्य आया सामने उनके नया ॥ २७ ॥
श्रुति को पकड़ करती खड़ी, ध्वनि नूपुरों की सुन पड़ी,
खुशबू हिना के इत्र की आई वहां।
राठौर कुल के नाथ की, क्या राज्यलक्ष्मी साथ की,
उपहार हीरों के लिये लाई वहाँ ॥ २८ ॥
प्रतिबिम्ब शीशे में पड़ा, जो दिव्य मणियों से जड़ा,
प्रकटी रमा क्या धैर्य देने के लिये।
बिजली सदृश आभाभरी, या स्वर्ण की नामी परी,
हाजिर हुई नृप को लुभाने के लिये ॥ २९ ॥
बस बात को ही वात में, कर स्नान शुद्ध प्रभात में,
सुषमावती रानी भवन में आ गई।
वह प्रेम बरसाती हुई, औदार्य दरसाती हुई,
भूपाल के निश्छल हृदय को भा गई ॥ ३० ॥
अति सूक्ष्म साड़ी थी अहा, थी या न थी यों भ्रम रहा,
जो दूर उड़ती थी सुरज में श्वास से।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

शृंगार में सुन्दर जड़ी, रत्नप्रभा फीकी पड़ी,
करके विकस्वर गात्र के आभास से ॥ ३१ ॥
जिसके बदन से था अड़ा, वह चन्द्र अभिमानी बड़ा,
सौन्दर्य से थी शर्त की जय में प्रथा।
विधु में असित जो राग है, वह हार का ही दाग है,
जिस से रहे यह याद कवियों को कथा ॥३२॥
जिस के अधर से हार के, निज कीर्ति शक्ति बिसार के,
भागा अभागा अमृत नीरस स्वर्ग में।
जिस के सरस अनुराग के, हो पात्र जीवनभाग के,
इच्छा न थे रखते नृपति अपवर्ग में ॥ ३३ ॥
जिस का मधुर स्वर जान के, अपनी पराजय मान के,
वन में भगी कोकिल बहुत बेहाल है।
पर जोश उस में है अभी, जो व्यक्त शायद हो कभी,
अतिरोष से उनका नयनयुग लाल है ॥३४॥
वह जोधपुर की स्वामिनी, निज धर्म की अनुगामिनी,
करुणा तथा माधुर्य गुण की पूर्ति थी।
संसार का वह सार थी, महनीय और उदार थी,
सौन्दर्य और पवित्रता की मूर्ति थी ॥ ३५ ॥
मृदु सारिका थी साथ में, सौभाग्य रेखा हाथ में,
नाजुक पगों में रङ्ग मँहदी का लिये।
वह मत्त गज की चाल से, होकर प्रशस्त मराल से,
भागे बढ़ी अवलम्ब सखियों का लिये ॥ ३६ ॥
वह हेमराजी सी भली, प्राणेश के सनुता वली,
नृप के विनय से शिर झुकाया सामने।
तव कान से सुरभित कली, उसके खिसक सहसा चली,
मानो चलाया तीर पैना काम ने ॥ ३७ ॥
प्राणेश्वरी की दृष्टि से, हार्दिक अमृत की वृष्टि से,
वह शोक विष कुछ कम हुआ नरपाल का।
ह्रद नृपहृदय गम्भीर था, बहु शोक जिसमें नीर था,
ऊपर जमा था जाल सुखशेवाल का ॥ ३८ ॥
उन ने उसे आसन दिया, झटपट सँभल स्वागत किया,
प्रेमार्द्र यों फिर कह उठे वचनावली।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

यह कष्ट क्यों इतना किया, या दास को गौरव दिया,
या कृष्ट मेरे पुण्य से तुम हो चली ॥ ३९ ॥
सुन व्यङ्ग्य सखियों की लड़ी, ताली बजा कर हँस पड़ी,
गाम्भीर्य से पर शान्त रानी रह गई।
ह्रीबन्ध से वह भावती, उत्सुक हृदय को थामती,
प्रेमाग्नि की ज्वाला किसी विध सह गई ॥४०॥
फिर मञ्च पर आसीन हो, प्रमदा प्रमद से हीन हो,
कहने लगी दुःस्वप्न मुझ को है हुआ।
व्योम में फिरता हुआ, दीखा मुझे गिरता हुआ,
हृदय को कृच्छ्रशङ्का न छुआ ॥ ४१ ॥
इसका उचित प्रतिकार है, यह दिल्लगी बेकार है,
कोई हमारे राज्य में सङ्कट न हो।
दैवज्ञ बुलवा लो अभी, अघशान्ति करवा लो अभी,
दुष्कर्म से विप्लव कहीं उत्कट न हो ॥ ४२ ॥
रानी न आगे कह सकी, मानो गिरा उसकी थकी,
यह वाक्य नृप के स्थान दिल में पा गया।
कृत्रिम हँसी वह व्यर्थ थी, रखती न कुछ भी अर्थ थी,
फिर शोक का बादल प्रथम सा छा गया ॥४३॥
फिर खून का दौरा रुका, दिल दुःख से दब कर झुका,
था भार उन पर किस मुसीबत का पड़ा।
जजबात वे तहरीर के आमोदघातक धीर के,
स्मृति में पहुंच उद्वेग देते थे कड़ा ॥ ४४ ॥
वह पत्र की गाथा बुरी, उन्माद पट की तुरी,
हृदयाम्बुरुह को शीत रजनी सी लगी।
कुविचार बहु आने लगे, शुभ भाव सब जाने लगे,
आशा-भृगी विप्लव-वाधक से डर भगी ॥४५॥
खामोश मानवलेख के, मुंह पर उदासी देख के,
चिन्तातुरा उस धर्मशीला ने कहा।
श्रीमान का द्युति-ह्रास क्यों, आई उदासी पास क्यों,
अपराध क्या इस किङ्करी से हो रहा ॥ ४६ ॥
नृप ने जवाब दिया सही, स्थित प्रेयसी के पास ही,
प्राणाधिके जीवनसुधे मैं क्या कहूँ,

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

किस का न जाने दोष है, या दैव का ही रोष है.
तुम पूछती हो मूक मैं कैसे रहूँ ॥ ४७ ॥
श्रुतिविज्ञ ऋषि बीमार हैं, निष्फल हुए उपचार हैं,
यह पत्र में है वृत्त देवि अभी पढ़ा।
अभिचार यह वाचिक कड़ा, दुर्वार मुझ पर आ पड़ा,
तत्क्षण मुझे प्राणान्त-शोकज्वर चढ़ा ॥ ४८ ॥
व्यामूढ़ था मेरा हिया, तुम ने तभी दर्शन दिया,
गोया मुझे पीयूषधारा ने छुआ।
वह शोक-वृत्त न स्पष्ट हो, तुम को न नाहक कष्ट हो,
अत एव अभिनय हर्ष का मुझ से हुआ ॥४९॥
सुन दूसरे का ताप ही, तुम सिहरती हो आप ही,
दिल देवियों का कुसुम—सम सुकुमार है।
पर क्या छिपाता मैं इसे, तुम पूछ खुद बैठी जिसे,
देना पड़ा उत्तर अतः अनुदार है ॥ ५० ॥
अच्छा चलें देखें सही, यह बात रानी ने कही,
रिपु और गद की मत उपेक्षा कीजिये।
फिर भेंट लेकर हाथ में, हृदयेश्वरी के साथ में,
तब चल दिये ऋषिराजदर्शन के लिये ॥ ५१ ॥
वह कार तेजरफ्तार थी, जिसकी अतुल रफ्तार थी,
वे वायुगति से दम्पती पहुंचे वहां।
ज्वर और दुस्सह शूल से, उत्खात तरुसम मूल से,
पीड़ित हुए आचार्य लेटे थे जहां ॥ ५२ ॥
साष्टाङ्ग अभिवादित हुए, विबुधेन्द्र आह्लादित हुए,
नृपयुग्म से मुख-कमल रोगी का खिला।
वह दृश्य कैसा भव्य था, इतिहास में जो नव्य था,
मानो प्रकृतियुत जीव ईश्वर से मिला ॥ ५३ ॥
वर हार रत्नों का बना, अङ्गूर का शरबत बना,
फल और मधु उपहार रानी ने दिया।
मर्मज्ञ शिष्टाचार के, लौकिक अखिल व्यवहार के,
आनन्दमय ऋषि ने दया कर ले लिया ॥ ५४ ॥
निज स्वास्थ्य की हालत कहो, भगवन् सदा कुशली रहो,
इस व्याधि का कैसे करूं प्रतिकार मैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

यों नम्र राजा ने कहा, शरबत बनफ़शा सा बहा,
इस राज्य को श्रीचरण पर दूं वार मैं ॥५५॥
प्रस्थान का क्यों जिक्र है, मुझ को बहुत ही फ़िक्र है,
चिन्ताजनक प्रभुपत्र था करगत हुआ।
दिल को तसल्ली फिर कहां, सेवार्थ हूं हाजिर यहाँ,
इस सेविका से आप की अनुगत हुआ ॥ ५६ ॥
त्रुटि कौन सेवा में रहो, जो इष्ट हो कर दूं वहो,
ऐसी दशा में है उचित जाना नहीं।
है रुग्ण की यात्रा मना, श्रीचरण क्यों हैं उन्मना,
मुनिभाव राजा का हुआ सविनय यहीं ॥५७॥
अव्यक्त स्वर से जगमगी, तब बोलने रानी लगी,
आराध्य को प्रस्थान की क्यों चाह है।
हम को अकेले ही यहाँ, तुम छोड़ जाते हो कहाँ,
क्या भक्त की कुछ भी नहीं परवाह है ॥ ५८ ॥
यह बात सुन ऋषि हँस पड़े, सन्तुष्ट मन,
प्रतिवाक्य का वितरण उचित करने लगे।
जलवायु—परिवर्तन अभी, स्पृहणीय कहते हैं सभी,
इस हेतु मेरे भाव ये मन में जगे ॥ ५९ ॥
यति घूमते सर्वत्र हैं, रहते न वे एकत्र हैं,
इस मनु—निरूपित धर्म का सम्मान हो।
तुम चित्त में धीरज धरो, चिन्ता न इस जन की करो,
स्वस्त्ययन--युत मेरा भविक प्रस्थान हो ॥६०॥
यह राज्यतरु क्या चोज है, पशुशक्ति इस का बोज है,
कृषिकार इस के हैं विदित डाकू बड़े।
है भोग फल में विष निरा, खाया कि बस मस्तक फिरा
उसके लिये फिर भी हजारों हैं लड़े ॥ ६१ ॥
जो है मिला तलवार से, खरतर शरों की धार से,
अनिवार्य है उस का अस्त्रबल से नाश है।
उद्भूत जल से फेन हा, कुछ देर जो कायम रहा,
पाता सलिल में अन्त में अवकाश है ॥ ६२ ॥
न्यायालयों का खेल है, सौदागरों का मेल है,
इन्साफ बेचा जा रहा है वित्त पर।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जज नाट ईसा ने कहा, सर्वांश में है सच अहा,
यह सूक्ति मेरे चढ़ रही है चित्त पर ॥ ६३ ॥
कर्षक परिश्रम कर रहे, जीते हुए भी मर रहे,
कर से उन्हीं के भर रहा नृप का उदर।
तो वे सहें अन्याय क्यों, उन पर कड़ा व्यवसाय क्यों,
बेगार का उनको रहे किस हेतु डर ॥ ६४ ॥
नरदेव मैं हैरान हूँ, करता यही अनुमान हूँ,
अन्याय की है नृप बना कल आज कल।
पुर्जे अभागे भृत्य हैं, करते अभय अघकृत्य हैं,
यह आसुरी शासनप्रणाली है प्रबल ॥ ६५ ॥
नृप काम कुछ करता नहीं, निज धर्म से डरता नहीं,
शाही हरम मानो अनाथालय खुला।
धन उत्सवों में फूंकता, बस पान खाकर थूकता,
हर साल है लेता गवर्नर का बुला ॥ ६६ ॥
जैसा प्रजा का रूप है, प्रत्यक्ष उसका भूप है,
तब एक शासक दूसरे के हों दास क्यों।
तब महल में बेकार क्यों, उसका सहें हम भार क्यों,
संसार में वैषम्य का यह वास क्यों ॥ ६७ ॥
धन और जन की धूल है, जो स्वास्थ्य के प्रतिकूल है,
झोंका विषम है राजनैतिक वायु का।
जो सन्धियों के पत्र हैं, वे उड़ रहे सर्वत्र हैं,
यह खेल क्या है स्वार्थनिष्ठ अघायु का ॥६८॥
बेरोक रिशवत की प्रथा, किसको नहीं देती व्यथा,
भय से प्रजा है चीखने पाती नहीं।
जर्जर हुई कर भार से, निःशङ्क अत्याचार से,
वह शुष्क रोटी पेट भर खाती नहीं ॥ ६९ ॥
यदि हाल ऐसा ही रहा, यह स्रोत ज्यों का त्यों बहा,
जनता नृपों को राख में देगी मिला।
यदि क्रान्ति की गरमी चढ़ी, सत्ता रऐयत की बढ़ी,
यह शीघ्र जड़ देगी हुकूमत की हिला ॥७०॥
तुम देश के रक्षक बनो, मत लोक के भक्षक बनो,
रघु और पुरु की भक्ति पर आसक्त हो।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इन्साफ़ से न लिहाज़ हो, लेकिन दया का साज हो,
मनु से ग्रथित कानून के तुम भक्त हो ॥७१॥
यह धर्म संक्षेप है, न कि व्यक्तिगत आक्षेप है,
अन्तिम यही मेरा तुम्हें आदेश है।
इसका सदा पालन करो, निज राज्य सञ्चालन करो,
मैत्री तथा कारुण्य का सन्देश है ॥७२॥
ऋषि की गिरा अवसित हुई, नृपवेदना व्यवहित हुई,
कुछ देर फिर निश्शब्दता की जय रही।
तब अग्रमहिषी के लिये, रसमुग्ध भ्रमरी के लिये,
ऋषिपुष्प ये मकरन्दधारा यों बही ॥७३॥
जिनके उदार विचार से, कारूण्य के सञ्चार से,
जीवन तथा मधुमय हुआ साहित्य है।
ये देवियां अब दीन हैं, श्रुति और धृति से हीन हैं,
क्यों आप इनमें बुद्धि का राहित्य है ॥ ७४॥
आभूषणों की चाह ने, वर वेश की परवाह ने,
कर्तव्य से है कर दिया इनको विमुख।
सन्तान का पालन गया, गृहकार्यसञ्चालन् गया,
स्वाच्छन्द्य में ये मानती हैं सर्व सुख ॥७५॥
शुचि सोम ने जिनको किया, गन्धर्व ने मृदु स्वर दिया,
वर इन्द्र ने मेध्यत्व पावक ने तथा।
आगे नहीं ये बढ़ रहीं, नैष्कर्म्य विद्या पढ़ रहीं,
हा लुप्त है ओजस्विनी इन की कथा ॥७६॥
इन की जहां अनुकूलता, रमती वहां नैसर्गिता,
प्रतिकूल हों ये तो सभी कुछ हैं अफल।
क्या है नहीं इनको पता, श्रुति ने किया है जो अता,
साम्राज्य श्वश्रूश्वशुर देवर पर अचल ॥७७॥
क्या पुरुष से उद्योग हो, इन का न यदि सहयोग हो,
स्पन्दन कहां है एक पहिये से चला।
ये भाव सन्तति में भरें, आज़ाद भारत को करें,
फिर प्राप्त कर खोई हुई अपनी कला ॥७८॥
परदा प्रथा में सार क्या, यह आड़ में अतिचार क्या,
सम्बन्ध है इसका न पातिव्रत्य से।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

यह कैदियों की सी दशा, पाई स्त्रियों ने परवशा,
लाचार मुगलों के घृणित औद्धत्य से ॥७९॥
बाहर जवाहर हो कहीं, तो बहुत देखेंगे नहीं,
बस लोचनों की तृप्ति झट हो जायगी।
पर बन्द डिब्बे में धरे, हों चाक के टुकड़े खरे,
तो वासना सब की भड़क ही जायगी ॥८०॥
परदा अगर स्वीकार है, यह धर्म का आधार है,
तो गर्भ से बाहर निकलना व्यर्थ है।
वह निविड़ पटलों से घना, परदा प्रकृति से ही बना,
निज हाथ से खोना नितान्त अनर्थ है ॥८१॥
कुल और गुण की हीनता, जिन में भरी हो दीनता,
उन नौकरों के साथ खुलकर बोलना।
जो भद्र और वादान्य हैं, जिन के चरित सम्मान्य हैं,
के निकट हरगिज नहीं मुंह खोलना। ८२॥
यह रस्म बिलकुल वन्य है, प्रतिभा स्त्रियों की धन्य है,
जो सह रहीं इस मूर्खता का भार हैं।
पर यह प्रथा मिट जायेगी, सचमुच न बचने पायगी,
होना इन्हीं से देश का उद्धार है ॥८३॥
नामी अजायब घर यहाँ न ऐसा भला होगा कहाँ,
पर घूमना तक तो इन्हें मिलता नहीं।
यह जोधपुर की वाटिका, मानो प्रकृति की नाटिका,
देखे विना इन का बदन खिलता नहीं ॥८४॥
बाजार से जो है लिया, वह शाक नौकर ने दिया,
पूछा अगर पत्ते मुलायम क्यों नहीं।
वह कह उठे यदि सिर झुका, जैसा मिला मैं ला चुका,
खामोश हैं ये कुछ दवा इसकी नहीं ॥८५॥
वह कान्त का लाया हुआ, सानन्द पहनाया हुआ,
इन के वसन हरता नहीं है चित्त को।
वह हो भले ही रेशमी, फिर भी खटकती मौसमी,
देखे घिना देतीं लुटा ये वित्त को ॥८६॥
बेकार परदा तोड़ के, मुंह रूढ़ियों से मोड़के,
उन्नति उन्हें करनी पड़ेगी देश की।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अब वह जमाना आयेगा, इतिहास जिस को गायेगा,
हो जायगी अन्त्येष्टि इन के क्लेश को ॥८७॥
यह बात यदि तुम को चुभे, करना क्षमा कृपया शुभे,
मैं पूछता हूं एक बात जरा कहो।
निज मुख पटल से बन्द यों, करके हुई तुम मन्द क्यों,
पाषाण की तुम मूर्ति बनकर मत रहो ॥८८॥
आचार्य के मुखपद्म से, वर भारती के सद्म से,
अस्वाद्यम जीवातु यह ज्यों ही कहा।
अपना जरा मुंह खोल दो, ऋषि को नमस्ते बोल दो,
धन्वेश ने यों धर्मपत्नी से कहा ॥८९॥
रानी बहुत गम्भीर थी, प्रियवाक्य से न अधीर थी,
मुंह खोलते उस का न दिल बिलकुल डरा।
फिर भक्ति सरिता में पगी, वह कर प्रणति कहने लगी,
ऋषिराज मेरा हाथ तो देखें जरा ॥९०॥
सुख दुःख फल कह दीजिये, इतना अनुग्रह कीजिये,
फैला दिया तत्काल रानी ने स्वकर।
नृप को हंसी कुछ आ गई, शम्पा प्रभा दिखला गई,
नैष्ठिक यती भी हंस पड़े इस बात पर ॥९१॥

उस हाथ की द्युतिजल्पना, पर है फिदा कविकल्पना,
इतनी मिलेगी शुक्र की उन्नति कहाँ।
स्फुट अष्टदल अरविन्द था, उस पर न किन्तु मिलिन्द था,
ऋजु लेखनी सी भाग्यरेखा थी वहाँ ॥९२॥
कविपार्श्व में जो केन्द्र था, उज्ज्वल वहां ऋक्षेन्द्र था,
जो स्पष्ट ही मन का प्रसाद बता रहा।
माधुर्य का डिण्डिम बजा, दे कर परूषता की सजा,
रमणीगुणों का पूर्ण वास बता रहा ॥९३॥
था सोम के ऊपर पड़ा, रक्ताङ्ग अभिमानी बड़ा,
कैदी बना रेखायुगल के बीच में।
सो क्रूरता जाती रही, जिससे दहलती है मही,
वह था दबा उद्दाम गज ज्यों कीच में ॥९५॥
अङ्गुष्ठ में ही कवि रमा, बुध भी कनिष्ठा में जमा,
कवि और बुध सी नैपुणी जिस में खिली।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इस विज्ञ कविवर के लिये, ये भाव जिसने स्फुट किये,
उस हाथ में लेकिन कहीं न जगह मिली ॥९५॥

नृपयुगल उत्सुक हो रहा, था तब गुणाकर ने कहा,
अब भाग्य की करना परीक्षा व्यर्थ है ।
यह वृत्तिहित विधिवाद है, जो कर रहा बरबाद है,
भारत हुआ इस से विहत असमर्थ है ॥९६॥

दुःस्वप्न या उत्पात ले, ग्रह के कुटिल दृक्पात से,
होता कभी क्या प्राज्ञ धीवर भीत है।
जो अटकलों का फेर है, वह दम्भ का अन्धेर है,
गाया यही ऋषि अङ्गिरा ने गीत है ॥९७॥

तत्क्षण हुआ सूचित खड़ा, यमराज का भाई बड़ा,
ले शीशियां कर में मुदित था द्वार पर।
पर कर दिया ऋषि ने मना, यों स्पष्ट कर निज भावना,
प्रत्यय नहीं इस रोग के प्रतिकार पर ॥९८॥

ग्रह उच्च जिन के पांच थे, पाते न रवि की आंच थे,
वे जोधपुर के नाथ भी लाचार थे ।
आखिर विदा होना पड़ा, सत्सङ्ग वह खोना पड़ा,
सेवार्थ वे तैयार सर्व प्रकार थे ॥९९॥

जिस को हुआ विषरोग है, उसकी दवा विष—योग है,
मरुभूमि में दृष्टान्त इस का स्थित हुआ।
नृपहस्त में कविचक्र था, जिससे अयन वह वक्र था,
वह आर्ष कवि से ही महल में जित हुआ ॥१००॥

○

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

एकादश सर्ग

—:o:—

अनन्त है लोक न पार पायेगी, जहाँ तहाँ यों फिर के इसी लिये।
चुना हुआ सार समग्र विश्व का, निहार ले तू अजमेर कल्पने ॥१॥
प्रसूत होके कमलाशरीर से, प्रवीण भी हो कमलोपभोग में।
बचा लिया था जिसने स्वधर्म को, पला पिथोरा वह विश्वजित् यहां ॥२॥
प्रदर्शिनीदर्शनमुग्ध लोक का, गया न आया दिल लौट के जहां।
विलोप से नन्दन की प्रशस्ति के, कृती हुआ दौलतबाग है यहां ॥३॥
निदेश से आनकदेव के यहां, बने हुए वारि विशाल तालका।
विशेष मीठा सुतबाल्यजल्प से, गरीब की आह समान है लघु ॥४॥
यहां वही केसर बाग है जहां, मनोज का सैनिक हुक्म कोकिला
वियोगियों के वधदण्ड के लिये, सुना रही है सब ओर शोर से ॥५॥
कुबेर कैलास प्रदेश में छिपा, परास्त हो के जिन के प्रकर्ष से।
सुवर्ण का मन्दिर एक कीमती, विचित्र है टीकमचन्द का यहां ॥६॥
जहां खुदा सप्तम स्वर्ग छोड़ के, छिपा न जाने किस से डरा हुआ।
वही निराली दरगाह आज भी, बढ़ा रही है इस के प्रभाव को ॥७॥
पवित्र वे पुष्कर तीन हैं यहां, गृहीत हो के क्षणमात्र ग्राह से।
स्त्रियां जहां के अवगाह-काल में, पुलोमजा की बनतीं सहेलियां ॥८॥
सजा दिया टाउन हाल ने इसे, बना यहां स्मारक ऐडवड का।
खुला यहां राजक-शिक्षणार्थ है, अपूर्व विद्यालय केन्द्र ज्ञान का ॥९॥
उदार हस्बैण्ड महानुभाव के, प्रयत्न से स्थापित मैक्लसादि के।
प्रबन्ध से धन्य अनन्य कीर्ति से, मुफीद विद्यालय उच्च है यहां ॥१०॥
यहां स्त्रियों की मुखचन्द्रकान्ति से, निशीथिनी में तम के व्यपाय से।
किताब में है स्थिति कृष्ण पक्ष की, न पूर्णिमा और अमा विभिन्न है ११
रणाग्रणी बीसलदेव भूप की, यशश्छटा से सित शीत पुत्र के।
समान आलिङ्गन के विशाल है, भरा यहां वीसलताल वारि से ॥१२॥
यहां हमेशा सरकार की रही, तथा रहेगी परिपूर्ण दृष्टि ही।
चतुर्थ में और तृतीय स्थान में, विशेषतः ज्यों कुज और शौरि की ॥१३॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बनी यहां की नृपदारिका प्रसू, सलीम की-क्या अपकीर्ति र इसी ।
कुलस्त्रियों के कचपाशवेष ने, हरा दिया अञ्जननिष्ठ राग को ।।१४।।
कवित्वसम्पन्न विशाखदत्त की, कवीन्द्रधन्या यह जन्मभूमि है ।
यहां महाराष्ट्रज राष्ट्रनाथ को, महाध्वजा थी उड़ती रही कभी ।।१५।।
त्रिकालभावी सुख और दुःख के, प्रकाश में जो कि अबाध दक्ष है ।
विशारदों की उस शास्त्र में यहां, पवित्र भी है गणिका बनी मति ।।१६।।
पुरस्त्रियों के इस की कटा हुआ, कटाक्ष से जान तमिस्र-जाल को ।
प्रतोलियों में रजनीप्रकाश का नहीं उठाती सरकार खर्च है ।।१७।।
प्रशस्त मेरी घटसृष्टि न्यून है, न विश्व के सर्जन से कदापि यों ।
जगद्विधाता विभु से कुलाल का, यहां हमेशा बढ़ता विवाद है ।।१८।।
सितार के काबिल तार के तपा, कृशानु में लोह यहां प्रयत्न से ।
सुवर्ण से कीमत में बढ़ा चढ़ा, प्रभाव को है तप के बता रहा ।।१९।।
निशीथिनीनायक के खयाल से, ग्रसे नहीं राहु इसे इसी लिये ।
सहेलियों के नजदीक कान्त से, छिपा रही है मुख नारियां वहां ।।२०।।
नृसिंह का मन्दिर एक है यहां, जहां स्त्रियों की भरपूर भीड़ में ।
महन्त के हैं अभिनीत राग से, कुमारलीला भगवान कृष्ण की ।।२१।।
वहें भले ही नहरें वहिश्त में, सदाकुमारी परियां तथा मिलें ।
किसे यहां की पर याद आयेगी, कचौरियां और पकोड़ियां नहीं ।।२२।।
कचच्छटा से कर दीन चीन को, कलत्र से पेरिस को शिकस्त दे ।
यहां दिखतीं वर वारनारियां, प्रयोग है बमिश नृत्यशास्त्र का ।।२३।।
सुहावने संस्कृत पाठ के लिये, अशुल्क शिक्षालय हैं कई यहां ।
खुले अनेकों अतिकृच्छ्र रोग की, प्रतिक्रिया के हित अस्पताल है ।।२४।।

परन्तु कैसी यह धूमधाम है, कि मोटरों की भरमार से यहां ।
न आज कोई पथ में पदाति है, लगे हुए हैं सब कामकाज में ।।२५।।

तुरङ्गमों के भुजगारि—वेग से, नरेन्द्र-मार्गों पर दौड़ते हुए ।
छुए कशा से खुरतालघात से, प्रदीप्त होते स्फुट विस्फुलिङ्ग है ।।२६।।

क्रमेलकों के कमनीय रूप की, प्रशस्ति के गीत गधे सुना रहे ।
प्रभावशाली यजमान के हुई, पुरोहितों की अनुरूप योजना ।।२७।।

क्षुधा तृषा के अतिमात्र वेग को, सुऐ दवाते गुरु कार्यभार से ।
जले भुने पैदल पोस्टमैन भी, जहां तहां दौड़ रहे अधैर्य से ।।२८।।

कब जवाबी धर तार बैग में, थके हुए पाकर काम सौ गुना ।
नियुक्त तारालय में प्रवीण ये, प्रयाण में साइकिलें उड़ा रहे ।।२९।।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

न देहली से द्रुत मेल आ सका, न रेलगाड़ी खँडवा प्रदेश से।
मुसाफिरों के समवाय से यहां, अपूर्व मेला यह आज क्यों लगा ॥३०॥
नवागतों के मिल साथ भीड़ में, अतीत को देकर वर्तमानता।
सविस्मया सो इस दौड़धूप से, चली स्थिरा निर्णयहेतु कल्पना ॥३१॥
अनेक बाजार निहारती हुई, मकान पाके अवदात सामने।
हुई वहां दाखिल आर्य मण्डली, न किन्तु कोलाहल की प्रसूति थी ॥३२
प्रदीप का अन्तिम दृश्य था वहां, विलोल था जो खर वातघात से।
कणाद से ज्ञापित भी विमोक्ष में, न भूलने की कविताङ्गना उसे ॥३३॥
सरोग धन्या ऋषि के शरीर को, बिछी वहां आश्रय खाट दे रही।
प्रसिद्धशीला जिसकी विनम्र हो, प्रदक्षिणा के हित कल्पना बढ़ी ॥३४
ऋषीन्द्र के दर्शनहेतु साहसी, समक्ष बैठे गुरूदत्त थे वहां।
सहिष्णुता को जिनकी विचारके, धरा अभी है हिलती कभी कभी ॥३५
उदास बैठा सब ओर घेर के, यतीश को वदिक संघ था वहां।
अभाव ही था क्षणमात्र शब्द का, यथा गुणों का नवजात द्रव्य में ॥३६
रदप्रभा से दुगुना प्रकाश को, हुए बढ़ाते नभ या दिगन्त में।
अभङ्ग शब्दोच्चय की तरङ्ग को, लगे उठाने गुरुदत्त धीर यों ॥३७॥
आचार्य के घस्मर पातकों के, सराग टोपी चरणाम्बुजों में।
उतार के मैं कुछ जानने की, उच्च स्पृहा से कहने चला हूँ ॥३८॥
राजीव की राजित राजियों में, हंसावली और कुमुद्वती में।
विस्तीर्ण है संयुत प्रेम से क्या, श्रीमान की दिव्य यशोविभूति ॥३९॥
समाज के स्थापक आप की है, महाप्रभावी जयवैजयन्ती।
समान नीचे जिस के खड़े हो, मनायेंगे लोग कभी जयन्ती ॥४०॥
महर्षि ने खण्डन मूर्तियों का, किया इसे मैं सच मानता हूँ।
परन्तु क्यों मानव मानसों में, की स्थापना है निजमूर्ति की ही ॥४१॥
पाश्चात्य वैज्ञानिक पर्वतों से, शिक्षा नदी हा तृण के समान।
मुझे बहाती बढ़ ही रही है, नास्तिक के सागर में डुबोने ॥४१॥
अनेक-शङ्काहत हो गई है, विचारधारा विपरीत मेरी।
इसे न कोई प्रतिभाभिमानी, सन्मार्ग में तार्किक ला सका है ॥४३॥
सद्यवैद्य को आतुर ज्यों तुम्हें मैं, जहां तहां खोज रहा प्रभो था।
पत्रादिकों से अजमेर का है, पता मिला हाजिर हो गया हूं ॥४४॥
नहीं समाधान हुआ परन्तु, नैराश्य का मैं न बना शिकार।
प्रयत्न है अन्तिम आज मेरा, विद्यानिधे! मैं कुछ पूछता हूँ ॥४५॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

महामना के मनसा प्रसन्न, भ्रूभङ्ग से स्वीकृत प्रार्थना को।
विचार के सम्मद से प्रफुल्ल, कहा यशस्वी तब एम० ए० ने ॥४६॥
पुराणबाणी सुन के मुझे है, आती हँसी है यह मामला क्या।
गणेश चूहे पर है चढ़ा क्यों, कुत्ता बना भैरव की सवारी ॥४७॥
उलूक को वाहन क्यों बनाया, सरोजहस्ता कमलालया ने।
गाथा प्रथा शङ्कर की निराली, परम्परा से चल क्यों रही है ॥४८॥
समुद्र में तो हरि का ठिकाना, कहीं नहीं शायद मत्त हो के।
सोया पड़ा सङ्गत इन्दिरा से, बना कलेवा घड़ियाल का हो ॥४९॥
कहाँ जनार्दन छिपा पड़ा है जिसे व्यास ने है गाया,
शयन-सर्प ने हो भुंझलाकर शायद उसे काट खाया।
कहीं जहाजों की टक्कर में पिस न गया हो गलती से,
या बेचारा जल न मरा हो वाडव आग उबलती से ॥५०॥

गजरक्षक वह आज नरों पर क्यों वह दया दिखलाता है,
गायें आप चराने वाला उनको नहीं बचाता है।
लाखों बार पुकारा हमने पास नहीं वह आता है,
कैसे व्यापक उसे मान लूँ जैसे लोक बताता है ॥५१॥

रमता है वह सिन्धुसुता से पड़ा सिन्धु के भीतर ही,
कौन शिष्टता पाई उसने उचित त्रपा को खो कर ही।
कृष्णा की रक्षा करने को दौड़ पड़ा जो पैदल ही,
आने पर नौवत जौहर की सिद्ध हुआ वह निष्फल ही ॥५२॥

कालकूट कृष्णा पी बैठी कृष्ण देखता रहा खड़ा,
वलिहारी पालनकर्ता की दिल जिसका इस भांति कड़ा।
जब जब ग्लानि धर्म की होती आया हूँ यह कह कर भी,
गायब है न उसे लगता है मृषावाद से क्या डर भी ॥५३॥

उपासकों से यदि विष्णु आदि के,
खुला हुआ है पथ मोक्ष का लिये।
स्त्रियाँ उन्हीं में उनकी फँसी हुई,
विमुक्त हैं दर्पक-जाल से न क्यों ॥५४॥
कहीं कहीं अण्डज को वड़ा कहा,
कहीं वताया शिव का महत्त्व है।
कहीं वखानी हरि की विशिष्टता,
पुराण क्यों हैं मतभेद से सने ॥५५॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अनादि है और अनाश भी तथा,
निवास पाता फिर गर्भ में वही।
असङ्ग भी हो कर देहबद्ध है,
न अक्ल में है यह बात बैठती ॥५६॥
जिसे अशेषज्ञ कहा गया वही,
वियोग से विह्वल घूमता रहा।
ऋषे! कहो मैं किस भाँति मान लूं,
जगन्नियन्ता नृप कोसलेन्द्र को ॥५७॥
पड़ोसियों के हतबुद्धि जुल्म से,
भगे मदीना घर वार छोड़ के।
नहीं बचाया जिसने रसूल को,
बचायेगा क्या हम को खुदा वही ॥५८॥
स्वघातकों का शुभ चाहते हुए,
अधीर पा के खर शूल वेदना।
गया पुकारा वह एक पुत्र से,
न किन्तु आंसू तक पोंछने उठा ॥५९॥
इसी लिये क्या भय और मूर्खता,
निमित्त है कल्पितमात्र ईश का।
गढ़ी गई गप्प किसी अबोध से,
खयाल मेरा दृढ़ हो चला यह ॥६०॥
अगाध-पाण्डित्य-विशिष्ट तर्क के,
निरस्तदोषा कष में कसी हुई।
गिरा यहीं थी गुरुदत्त की रुकी,
प्रसन्न हो के श्रुतिविज्ञ ने कहा ॥६१॥
निहार के तार्किक बुद्धि आप की,
नहीं समाता मन में प्रमोद है।
सहायता मैं तुम से न ले सका,
प्रचार में हा! तुम क्यों छिपे रहे ॥६२॥
तनुताप मिटा सुन के तुम से,
इस भांति मनोरम प्रश्न कई।
वह पुण्य कठोपनिषद् घटना,
स्फुट है कर आकृति प्राप्त नई ॥६३॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रसिद्ध ही है गण इन्द्रियों का,
मिला उसे मालिक जीव भोक्ता।
विद्या परा मूषक है उसी की,
जो काट देती मृतिबन्ध को है ॥६४॥
शराब में और निषिद्ध मांस में,
प्रसक्त है जो तज धर्म कर्म को।
उसे सवारी अनुरूप श्वान ही,
मिले नहीं क्यों तुम सोच लो स्वयम् ॥६५॥
गुलाम हैं जो धन के न धर्म के,
उलूक से वे प्रतिभाविहीन हैं।
विलासिता का धन एक हेतु है,
सरोजिनी का यह हाल चाल है ॥६६॥
है पर्वती भारत सभ्यता ही,
पहाड़ से जो पहले चली है।
प्रसिद्ध संज्ञा बृष धर्म की है,
आधार है जो नर अग्रणी का ॥६७॥
वेदत्रयी लोचन तीन हैं वे,
दिखा रहे हैं स्फुट तत्त्व को जो।
व्यापार वाग् बुद्धि शरीर का है,
त्रिशूल-दुष्कर्मविमर्दकारी ॥ ६८ ॥
उदय और विमोक्ष प्रसिद्ध हैं,
तनययुग्म तथा अहि कण्ठ में।
प्रकृति—बन्धन है जिसको किया,
उस महावल ने बलहीन है ॥६९॥
श्रुतिनिरूपित ये पशु जीव हैं,
नियत दशनशक्ति जिन्हें मिली।
इस लिये पशुनाथ वही हुआ,
नियम में जिसके चल ये रहे ॥७०॥
प्रसिद्ध पाँचों मुख पञ्च शील है,
प्रतीत है जो अभिधम्म आदि में।
रहस्य मैंने यह छान बीन से,
सुना दिया है प्रमथेश का तुम्हें ॥७१॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

गरल क्यों उसने पर पी लिया,
झटिति पूछ उठे गुरुदत्त यों ।
जिस लिये श्रुति के इस भक्त ने,
हँस पड़े ऋषि यों कहते हुए ॥७२॥

गम्भीर हो वे फिर वाक्य वज्र से,
लगे गिराने गुरु—संशयाद्रि को ।
सभासदों ने फिर सावधान हो,
बना लिया केन्द्रित चित्तवृत्ति को ॥७३॥

सर्वत्र जो व्यापक है उसे हा,
समुद्र में क्यों तुम ढूंढ़ते हो ?
शरीर के धारण की कहानी,
बनी मनोरञ्जन के लिये है!॥७४॥

भला बुरा जो कुछ चाहते हो,
करो तुम्हें पूर्ण स्वतन्त्रता है ।
असह्य है जो वध धेनुओं का,
तो खड्ग की कुण्ठित धार है क्या ॥७५॥

समुद्रयात्रा धन की प्रसूति है,
पयोधि की है तनया रमा अतः ।
स्वयम् बुलाया गजनीश को यहाँ,
न क्या हमी ने भगवान क्या करे ॥७६॥

अधर्म को उत्थित देख क्या यहां,
सुधार के हेतु विमुक्ति छोड़ के ।
प्रभावशाली जन दिव्य भूति से,
नहीं पधारे समयानुसार क्या ॥७७॥

कटने लगा जब यज्ञ ही में दीन पशुओं का गला,
जब स्रोत वैदिक शैल से वीभत्स रस का बह चला ।
तब नष्ट कर उस कुप्रथा को प्रेम के सन्देश से,
तुमको तथागत ने छुड़ाया क्लेश पाकर क्लेश से ॥७८॥

जिससे छिपी चिर काल तक थी वेद भास्कर की छटा,
आखिर कुमारिल ने हटा दी बौद्ध बादल की घटा ।
साबित किया है कर्म को जिसमें महत्तर ज्ञान से,
हो भाग्य तो उनकी पढ़ो कृति श्लोकवार्तिक ध्यान से ॥७९

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रतिभा तुम्हारी चूम लेती तन्त्रवार्तिक को कभी,
तो तुच्छ शङ्काएं हृदय में नष्ट हो जातीं सभी।
पाश्चात्य विद्या का जहां श्रम से हुआ अवसान है,
हो वहीं से दर्शनों का हिन्द में उत्थान है॥८०॥

सर्जनकला से है विधाता विष्णु पालन से वही,
लयशक्ति को रख लक्ष्य में श्रुति रुद्र उसको कह रही।
हैं शक्तियां उसकी स्त्रियां कर्त्तव्य के अनुरोध से,
सब कुछ समझ कर भी रहे तुम दूर क्यों इस बोध से॥८१

भीतर तथा बाहर वही होकर यहां भी है वहां,
वह शक्ति अप्रतिरूप है प्रतिमा कहो उसकी कहां।
वह एक है अगणित पदों का वाच्य कक्षित वेद से,
मत खिन्न और विभिन्न हो तुम व्यास के मतभेद से॥८२॥

स्वकर्म है साधन मुक्ति के लिये, उपासना केवल चित्त-शुद्धि का।
निमित्त है और प्रबोध से हमें, प्रतीति है साधन और साध्य की॥८३
न कर्म है और न ज्ञान ही जहां, उपासना निष्फल जान लो वहां।
न कर्म भी ज्ञान विहीन मान्य है, प्रणम्य हैं वे मधुमक्खियां किसे॥८४
न ज्ञान भी केवल कर्म के बिना, समर्थ होता स्पृहणीय सिद्धि में।
बिना किये सेवन औषधादि का, विमुक्त होता ज्वर से न वैद्य भी॥८५
बिना पिता के सुत हो गया इसे, न मानने की मति अक्लमन्द की।
यहां कहां है अवकाश प्रश्न का, नहों जमाना अब गप्प का रहा॥८६॥
बना खुदा से यह विश्व विश्व है, सभी सुता हैं उसकी कुमारियाँ।
सधर्मिणी का उनमें रहस्य क्यों, पसन्द है क्या पशुवृत्ति ईश को॥८७॥
रसूल ने यौवन और हुस्न के, प्रवाह में जीवन को डुबो दिया।
खयाल भी था उसका नहीं जिसे, करे खुदा क्या उसके लिये कहो॥८८
कलङ्कहीना गुणयोग—शालिनी, तथा अलङ्कारधता उदार यों।
नवाङ्गना सी रसमाधुरीझरी, सरस्वती की चमकी सरस्वती॥८९॥
बुधाग्रणी के मुखरूप पद्म से, बहे हुए यों रसचक्र-पूर में।
निमग्न होके भरपूर चूर हो, प्रसन्नता में गुरुदत्त धन्य थे॥९०॥
कहा उन्होंने कुछ देर सोच के, बना दिया क्यों मखलूक ईश ने।
उसे किसी की यदि प्रेरणा हुई, स्वतन्त्रता तो उसमें रही कहां॥९१॥
किया दया से यदि सर्ग विश्व का, हुआ गवारा परिताप क्यों उसे।
दरिद्रता आमिय और शोक से, दयालु की है यह ग्रस्त सृष्टि क्यों॥९२

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रसुप्त सा था सब ओर ध्वान्त ही, न सृष्टि से था दयनीय पूर्व में।
न दुःख का नाम निशान था वहां, दया कहां से विभु में समाई॥९३॥
करुणावश हो यदि विश्व रचा, सुख से दिन जो जन काट रहे।
घन धान्य-समृद्ध मिला जिनको, घर क्यों उनका वह नाश करे॥९४॥
बनता वह दण्डनियामक क्यों, विभु में यदि हो अणुमात्र दया।
यदि बाध्य अदृष्ट उसे करता, वह सेवक सिद्ध हुआ उसका॥९५॥
रचयिता करुणामय है यदि, वह अदृष्ट अपेक्षित क्यों हुआ।
विदित कारण जो तकलीफ का, उचित था उसका परिहार ही॥९६॥
किस लिये यह खेल रचा गया, यदि न थी सुख की उस में कमी।
तब रही उस में प्रभुता कहां, शिशु-समान बना वह कौतुकी॥९७॥
स्वभाव से भी यह सृष्टि की कथा, न ठीक है क्योंकि स्वभाव नित्य है।
बिचित्र-कार्य-क्रम-वायु-वेग में, कहां ठिकाना इस वादतूल का॥९८॥
मुख विना उपदेश न हो गया, विरह से तनु के विमुखत्व था।
तनु अदृष्ट बिना मिला किसे, यह मुसीबत ईश्वर-वाद में॥९९॥
इस प्रकार गिरा गुरुदत्त की, कह उठे सुन के खुश संयमी।
वचन की यह पल्लवना वृथा, तुम सुनो क्रमशः प्रतिवाक्य को॥१००॥
प्रभु दयामय है किस ने कहा, प्रमिय है वह क्यों कर कौतुकी।
यह कहां श्रुत है कि स्वभाव से, रच दिया रचनापटु ने जगत्॥१०१॥
तदपि मैं रह दूर प्रपञ्च से, कर रहा स्फुट साधन पेश हूँ।
सँभल के उन की सुनना जरा, न कुछ भी घबरा कर पूछना॥१०२॥
तनिक भी न जिसे मृति का पता, मरण से डरता वह डिम्भ क्यों।
हसित और निमीलित आदि में, निपुण क्यों वह शिक्षण के विना॥१०३

पकड़ता तरु की खुद डाल को, नवसमुद्भव वानर-पोत है।
किस लिये उस से जब है नहीं, पतन की अनुभूत महा व्यथा॥१०४॥

शुतुर मुर्ग कृती निज अण्ड को, तरणि के तप से परिपक्व क्यों।
कर रहा जब अन्य शकुन्त हैं, गुरू परिश्रम से हत पक्ष के॥१०५॥

कुलाय की चञ्चल वीचियों में. कैवर्त के कौशल से चलाना।
है सारसों को किस ने सिखाया, देखा तुम्हीं ने शतबार होगा॥१०६॥

विना पिलाये पय पी रहे हैं, वनेचरों के शिशु जङ्गलों में।
होता अचम्भा तुम को नहीं क्या, जहान की अद्भुत प्रक्रिया से॥१०७
कुलाय में जाकर आम अण्डे, क्यों डालती कोयल वायसों के।
जो प्रश्न कोई यह पूछ बैठे, जवाब इन्स्टिङ्क्ट न ठीक होगा॥१०८॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

समान आहार विहार देश, सम्बन्ध शिक्षादिक तुल्य ही हों।
तथापि होती समता नहीं है, सहोदरों में यह मामला क्या ॥१०९॥
न रोग है वाजिब वक्त भी है, न कान्त के पौरुष में कमी है।
विस्पष्ट है पुष्पित नारियों में, आधान की अध्रुवता तथापि ॥११०॥
जटिल और कोई अनुयोग है, न जिन का कुछ भी प्रतिवाद है।
इस लिये मतिमन् ! यह मानना, उचित है–यह है फल कर्म का ॥१११॥
मगर कर्म कहां शिशु ने किये, कि जिन का फल है यह पा रहा।
यह पुनर्भव की उपपत्ति है, नियत लक्षण आस्तिक-वाद का ॥११२॥
नियम से निजनिष्ट अदृष्ट के, फल चराचर भोग रहा अहा।
क्रम नहीं स्मृति का मिलता कहीं, इस लिये कुछ बाधक है नहीं ॥११३॥
पर अचेतन कर्म प्रसिद्ध है, वह गुणान्वित चेतन जीव को।
विहितकर्म—फलग्रह के लिये, कर नहीं सकता मजबूर है ॥११४॥

अतः अशेषज्ञ समस्त शक्ति से, विशिष्ट सत्ता सब देश काल में।
किसी महानायक को अभीष्ट है, जिसे बताती श्रुति है अबाधिता ॥११५

यह तर्क की कर्कश कथा दुर्धर्ष मति से वेद्य है,
सूच्यग्र के सम सूक्ष्मतर पर्वत-सदृश दुर्भेद्य है।
इस को समस्या हल हुई है दार्शनिक विज्ञान से,
निश्चय समझ में आयेगी इस को पढ़ो तुम ध्यान से ॥११६॥

यद्यपि कुमारिल भट्ट ने माना निरीश्वरवाद है,
नागार्जुनादिक ने दिया हम को यही संवाद है।
श्रीहर्ष ने भी निर्वचन का कर दिया दर बन्द है,
शृङ्गार दर्शनभारती का किन्तु यह स्वच्छन्द है ॥११७।

प्रामाण्य वेदों का अभी तुम को बताना इष्ट है,
लेकिन समय की है कमी यह विषय भी अतिक्लिष्ट है।
गुरुदत्त ! तुम से कहा हूँ आज मैं मन की व्यथा,
तुम लेखनी से व्यक्त कर दो आर्ष भावों की प्रथा ॥११८॥

अब तक न भारतवर्ष सारा एक मन्दिर में जुड़ा,
मक्का मदीना आदि में झण्डा न वेदों का उड़ा।
यह साधना पूरी नहीं मेरी हुई लाचार हूँ,
तुम को मनस्वी जानकर मैं सौंपता यह भार हूँ ॥११९

इस ओर यों ही लग रही थी सरस बातों की झड़ी.
उस ओर अस्ताचल-शिखर पर दृष्टि भास्कर की पड़ी।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अग्नाश वह रजनीचरों की टाल कर मानों चला,
था आर्य वैदिक-सूर्य के ही साथ छिपने को चला ।।१२०।।

व्याकुल न हो कल्पने अपना कोमल हृदय सँभाल,
दयानन्द के अन्तिम क्षण पर कुछ प्रकाश तो डाल ।
जगन्नाथ पर क्रोध उगलता हुआ सूर्य क्या लाल,
पीटा चिन्तित आसमान ने अथवा अपना भाल ।।१२१

क्या ऋषि के संन्निकट विरह से थे सरोज बेहोश,
सुधासरस स्वरतान छोड़ कर भृङ्ग हुए खामोश ।
नदियों में तरङ्ग-रिङ्गण से चञ्चल था शैवाल,
उलझे हुए पड़े थे मानो खिन्न प्रकृति के बाल ।।१२२।।

चक्रवाक भी नहीं दिखाता दयिता पर अनुराग,
ऋषिचिन्ता से छोड़ दिया क्या उसने सुख का भाग ।
स्पष्ट जङ्गलों में सुन पड़ता था उल्लू का बोल,
कल्पसुन्दरी के पापों का बजता था क्या ढोल ।।१२३

गायें आने लगीं घरों को थीं वे बहुत उदास,
निज रक्षक की इस हालत में कैसे चरतीं घास ।
नीड़ों में पक्षी बैठे थे मूक समय पहचान,
किन्तु काक थे शोर मचाते कृष्णानन्द समान ।।१२४।।

अरुण सूर्य की पतली रेखा फैली नभ में दूर,
सरस्वती ने क्या ललाट से बहा दिया सिन्दूर ।
या ऋषि की अन्तिम गाथा में भाव अनूठा देख,
तप्त हृदय के उष्ण रक्त से लिखा प्रकृति ने लेख ।।१२५

रक्त प्रभा की वृष्टि दिवाकर करता था उस काल,
मानो उसके निकल रहे थे अश्क खून के लाल ।
लाल मिरच सा लाल हो गया पश्चिम का मुख भाग,
दीन हिन्द का मानो उसने लूट लिया अनुराग ।।१२६।।

लतावधू—जन अश्रु—पुष्प था बरसाता सब ओर,
लगे गिरने पङ्ख शोक से नृत्यशून्य हो मोर ।
पञ्जर में चुप चाप बन्द थे तोते मन को मार,
मानो उनके पड़ा कण्ठ पर रक्त राशि का भार ।।१२७

दीपावलि में दीपावलि से चमक उठा अजमेर,
पर उससे क्या मिट सकता था जीवन का अन्धेर ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वे दीपक कर बुझें भले ही बाह्य ध्वान्त का पेष,
लेकिन आर्य धर्म-दीपक का था अफसोस विशेष ॥१२८

कल जिन ने थे दीप जलाये भर मन में अरमान,
और बढ़ाई कोमल तनु से पुष्प-शयन की शान।
आज शाम को उन के घर में नहीं जले अश्मन्त,
एक बारगी आर्य जगत् के हुआ मोद का अन्त ॥१२९

अजर नाम पाया ऋषि वर ने निश्चित थी यह बात,
तो भी सब का काँप रहा था विषम शोक से गात।
बारनारियों तक का संवृत रहा प्रेम बाजार,
प्रेमी नहीं गया कोई वे करतीं क्या लाचार ॥१३०॥

निष्प्रभ था अजमेर अजब जो था दुनियां का सार,
क्या सर्वाङ्गवात ने उस को कर डाला बेकार।
या अकबर को सुतादान कर जमा किया जो पाप,
जोर शोर से पक कर उसने किया खड़ा परिताप।१३१

किया वचन का समय देख यों वाग्मी ने आदान,
शीत शुद्ध जल प्रस्तुत कर दो इष्ट मुझे है स्नान।
हुक्म रहा वह सर माथे पर पूर्ण हुआ सब काम,
फिर नव वसन पहन कर बैठे दिव्य तेज के धाम ॥ १३२ ॥

सन्ध्या-वन्दन किया उन्होंने फिर लग गई समाधि,
भागी न जाने किस से डर कर किधर देह की व्याधि।
भोग रोग को दलने वाला हुआ योग-विनियोग,
इस आकस्मिक तबदीली से चकित हुए सब लोग ॥१३३

तब ऋषि ने कुछ देर साम का किया श्रोत्रसुख गान,
ग्रामों और स्वरों की जिसमें हुई साफ पहचान।
किन्तु उसे क्या सुन पाया था वेदगम्य भगवान्,
कैसे हो विश्वास न थे जब निराकार के कान ॥१३४॥

बिना कान वह सुन लेता है कहता है पर वेद,
लोचन बिना देख सकता है उच्च नीच का भेद।
चरणरहित भी चलता है वह धन्य कल्पना धन्य,
कहीं किसी ने देखी है क्या ऐसी चिड़िया अन्य ॥१३५॥

किन्तु दार्शनिक जल्पकल्प से बढ़ता है विक्षेप,
इस कारण करना पड़ता है यहाँ हमें संक्षेप।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अस्तु तपोधन ने पहले तो किया मधुर रस पान,
और दिया फिर कर्मभूमि की जटिल दशा पर ध्यान ॥१३६॥

हुक्म दे दिया योगिराज ने भारत के आधार,
लुप्त वेद का फिर भी जिन से जारी हुआ प्रचार।
सभ्य उपस्थित हों जल्दी से कहनी है कुछ बात,
क्षण का भी मत करो अपव्यय, समय अल्प है तात ॥१३७॥

बिजली सी यह खबर शहर में फैल गई तत्काल,
लहर सिन्धु में और गगन में ज्यों समीर का जाल।
क्रान्ति चित्त में और बाग में जैसे गुल की गन्ध,
तैल सलिल में और स्कूल में जैसे नया निबन्ध ॥१३८॥

दौड़ पड़े इस समाचार से सभी तरफ से लोग,
सचमुच यही एक था उनके जीवन में शुभ योग।
यात्रिवर्ग की विपुल भीड़ से सड़कें भरीं तमाम,
क्या मालिक क्या नौकर सबका बन्द हो गया काम ॥१३९॥

कोई रङ्गमहल में बाला सजा रही थी बाल,
कङ्घी और इत्र की शीशी दो झट उस ने डाल।
पति के साथ चली वह पथ में वेग न सकी सँभाल,
उसने प्रथम बार छोड़ी तब मृदु मराल की चाल ॥१४०॥

दक्षिण स्तन्य पी चुका शिशु था किन्तु शेष था वाम,
पर माता में धैर्य कहां वह था जल्दी का काम।
सोंपा गया वत्स दासी को पर रो उठा कराह,
क्या उसको भी ऋषि की वाणी थी सुनने की चाह ॥१४१॥

दक्षिण कर में चमका पति की चित्र कला का ढङ्ग,
सव्य हथेली पर मेहंदी का नहीं चढ़ा पर रङ्ग।
तो भी वह अपने प्रेमी से धुलवा कर निज हाथ,
साड़ी नई बिना बदले चल पड़ी उसी के साथ ॥१४२॥

घर में दिल में और दृष्टि में छिड़ा प्रेम का जङ्ग,
मानवती के नहीं मान का हुआ कान्त से भङ्ग।
ऋषि-भाषण के लालच से पर मान गई वह हार,
वह विदुषी अवसर क्यों खाती नखरों में बेकार ॥१४३॥

कोई अपनी सहेलियों को ले जल्दी से साथ,
चलने लगी सजाकर अपना रिस्ट वाच से हाथ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पम्प शूज के बन्धन का जब बिसरा उसे खयाल,
केशपाश का फीता ही तब उसने लिया निकाल ।।१४४।।

नव प्रसूति से दुर्बल कोई कर अबला भरपूर,
हिम्मत चली साथ प्रेमी के रख लज्जा को दूर।
नूतन शिशु उत्सङ्ग-तल्प में दिखलाता था हास,
क्या वह भी होने जाता था ऋषि चरणों का दास ।।१४५

खुला हुआ डिब्बा गहनों का दिया किसी ने छोड़,
और चली अन्तिम ऋषिगाथा सुनने को बेजोड़ ।
एक हाथ में दस्ताना था और दूसरा रिक्त,
केवल उसका दक्षिण लोचन था अञ्जन से सिक्त ।।१४६।।

कोई युवक चला रख मुंह में जलता हुआ सिगार,
जो उसको साबित करता था गलियों में जरदार ।
लगा सिरे पर चमड़ा जिसके उस यष्टी से हाय,
चरणों के सुधार का करता हुआ चतुर्थ उपाय ।।१४७

श्वान समान बाँध कर पट्टा नव फैशन का प्राण,
सुरदुर्लभ बाबू पदवी का शङ्कारहित प्रमाण ।
कोई वीर चला क्या उसको ज्ञात न थी यह बात,
पैसे में छै बाबू बिकते दिल्ली में दिन रात ।।१४८।।

चलते हुए किसी के कर से गया अचानक छूट,
हाई क्लास सिगार उसी दम विषम चोट से टूट ।
वीरों के इस कर्मसूत्र पर डाला गया प्रकाश,
रह रह कर जलने से अच्छा है क्षण भर में नाश ।।१४९

जिसे नहीं तुम छोड़ रहे वह देगा तुम को छोड़,
तुम जिसके मुंह लगते हो वह खुद लेगा मुंह मोड़ ।
यों बतलाती गिरी किसी के मुंह से वह सिगरेट,
जो दुनिया में प्रतिपल करती लाखों का आखेट ।।१५०।।

कुछ भूल न जायँ विचार अतः, सब लेखन-साधन साथ लिये ।
चढ़ मोटर में बहु पैदल ही, बुध अन्तिम वाक्य चले सुनने ।।१५१।।
सब शासक लोग प्रबन्धक थे; पर भीड़ भला रुकती किससे ।
जिन को दिल संयत खींच रहा, उनकी गति बाधित है न कहीं ।।१५२।।
किस भांति बयान करूं जनता, कितनी कृतपुण्य उपस्थित थी ।
उजड़ा अजमेर बना वन सा, तनहा घर बार तमाम पड़े ।।१५३।।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मर्मज्ञ पातञ्जल फक्किका के, बढ़े चढ़े वैदिक दर्शनों में।
यू० पी० निवासी विबुधोत्तमों का, वहां हुआ था जमघट्ट भारी ॥१५४॥
अभ्यागतों के चरणाम्बुजों में, सर्वस्व श्रद्धायुत भेंट देना।
देखा गया था जिनके घरों में, पञ्जाब के भूषण वे वहां थे ॥१५५॥
घट तथा पट को रटती हुई, न अटकी जिनकी रसना कभी।
विषम-तर्कसमुद्र-कुलीर वे, स्थिति वहां पर थे बुध बङ्ग के ॥१५६॥
धनिक दानविचक्षण थे वहां, शुचि महाबन गुर्जर देश के।
अलग हो जिन के घर में रमी, भगवती कमला भगवान से ॥१५७॥
घन जटा क्रम के क्रमके लिये, श्रम न व्यक्त किया जिन ने कभी।
पिक-विजित्वर सस्वर कण्ठ ने, नृवर दक्षिण के कुछ थे सही ॥१५८॥
नयन का मधु पञ्चनदीय वे, रमणियाँ मणियां चमकीं वहाँ।
वचन से दिल से जिन के मृदु, अमृत भी मृत भीत विला गया ॥१५९॥
कुटिल थीं जिनकी कचभङ्गियाँ, सरल थीं पर मानस भावना।
कुछ वहाँ पर हाजिर वे हुईं, प्रयत केरल की कुलदेवियां ॥१६०॥
निरख के जिनकी नयन प्रभा, विजित त्रस्त भगे मृग बङ्ग से।
युवतियां कर में धर लेखनी, स्थित रहीं कुछ लेखन-हेतु वे ॥१६१॥
जन समागत उन्नत बङ्ग से, कुछ विलक्षण से लग थे रहे।
असल में उन के कुल में हुआ, तनिक मिश्रण बर्मिश रक्त का ॥१६२॥
युवतियां कुछ थीं गुजरात की, न जिन में बहु भूषण भार था।
विमल वेष तथा शुचि भाव था, सरल चित्त नितान्त प्रभाव था ॥१६३
इस अलौकिक वैदिक संघ की, सब कथा जरिये सुन तार के।
चकित था पटु जिह्मग नीति में, नृपतिशासक वायसराय भी ॥१६४॥
प्रणय से श्रुतिभूषण-चन्द्र के, उछलते बढ़ते जन-सिन्धु को।
नियम में श्रम से रखता हुआ, दल प्रबन्धक कूल समान था ॥१६५॥
सुवर्ण घण्टा फिर जोर से बजा, कि बैठ जावें सब लोग शान्ति से।
निमेष ही में पद पूर्ण रूप से, अशब्दता ने अपना जमा लिया ॥१६६॥

जब आर्यसमाज निकेतन में, स्थित नीरव गौरवमूल हुआ।
तब धर्म-धुरन्धर का नियमी, दिल शासन के अनुकूल हुआ ॥१६७॥

वर उन्नत आसन को ऋषि ने, कर भूषित मन्त्र पढ़े पहले।
उनके मुख से सुख से विजयी, फिर अन्तिम शासन व्यक्त हुआ ॥१६८॥

दयानन्द के बुद्धि-कोष में आज मची है लूट,
जनता के दिल और कर्ण हैं रहे वेग से टूट।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दिव्य कल्पने दिखला अपना सदसद्वस्तु विवक,
उत्तम भाव-रत्न चुन ले तू छूट न जावे एक ।।१६९।।
करो किन्तु न कहो निज मुख से-बोले यों ऋषिराज,
जो कुछ मैं कहता हूं उसको भूले नहीं समाज ।
चित्त-भित्त पर अङ्कित कर लो यह आखिरी कलाम,
रोशन हो सारे आलम में फिर वेदों का नाम ।।१७०।।

सन्ताप से छेदन या कसौटी, से स्वर्ण ज्यों वाचिक भाव मेरे ।
हे भिक्षुओ सोच विचार लेना, न मूढ़ हो गौरव-भावना से ।।१७१।।
तथागतो यह दिव्य वाणी, पसन्द है अक्षरशः मुझे भी ।
अतः यहां भी पुनरुक्तता है, मेरी जबां से इस घोषणा की ।।१७२।।
विडम्बनामात्र प्रपञ्च सारा, न आदि में और न अन्त में है ।
संस्पर्श के सो तुम भोग छोड़ो, भागी बनो मध्यम सम्पदा के ।।१७३।।
आहार की शुद्धि नहीं रहे तो, न सत्त्व का शोधन हो सकेगा ।
अत: सदा पावन भोज्य से ही, शरीर-यात्रा सुखयुक्त होगी ।।१७४।।
न तस्करों के पथ से प्रवृत्ति, करो नशे की मत बान डालो ।
असत्य भाषण नींचता है, ये तत्त्व हैं मानव-सभ्यता के ।।१७५।।

तुम्हें यह है मेरा सन्देश

अग्निहोत्र का ठाठ दिखाना, वेदमन्त्र का पाठ सिखाना,
अपना फर्ज भूल मत जाना ।
पूरा किये विना मत मरना जीवन का उद्देश्य,
तुम्हें यह है मेरा सन्देश ।।१७६।।

भ्रान्त जनों को पथ पर लाना, उन को सच्ची राह बताना,
जीवन तरु का शुभ फल पाना ।
है अधिकार तुम्हें दुनियां को देने का उपदेश,
तुम्हें यह है मेरा सन्देश ।।१७७।।

त्राण दीन का करना होगा, क्षुधित उदर को भरना होगा,
दुःख-सिन्धु को तरना होगा ।
विश्व-धर्म की यही घोषणा हरो अन्य का क्लेश,
तुम्हें यह है मेरा सन्देश ।।१७८।।

अबला जन को सबल बनाना, शैतानों से उन्हें बचाना ।
कुलदूषक को शीघ्र दबाना ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सुस्ती जोफ और दहशत का हो न हृदय में लेश,
तुम्हें यह है मेरा सन्देश ॥१७६॥
खो न बैठना कभी खजाना, जीवन रण से भाग न जाना,
आजादी का शंख बजाना।
उठो मिटा दो जन्मभूमि का यह सदियों का क्लेश,
तुम्हें यह है मेरा सन्देश ॥१८०॥

तुम्हें कहता हूं सच्ची बात

मत उठने देर में लगाना, सुप्त जनों को आप जगाना,
त्रस्त विश्व की भीति भगाना।
भाग्य-सूर्य का निकट उदय है अब हो चला प्रभात,
तुम्हें कहता हूँ सच्ची बात ॥१८१॥
लगातार मारुत चलता है, पावक ज्यों का त्यों जलता है,
नहीं जमीं का व्रत टलता है।
इसी तरह से करना होगा काम तुम्हें दिन रात,
तुम्हें कहता हूँ सच्ची बात ॥१८२॥
वेद-सुधा का सत्त्व पिला दो, मृत देशी को शीघ्र जिला दो,
और जुल्म की जड़ें हिला दो।
फैला दो फिर से त्रिभुवन में अपना अवदात,
तुम्हें कहता हूँ सच्ची बात ॥१८३॥
मैं निज वित्त टटोल रहा हूं, कालचक्र में डोल रहा हूं,
अन्तस्तल से बोल रहा हूं।
गोकरुणानिधि की करुणा को कर देना विख्यात,
तुम्हें कहता हूँ सच्ची बात ॥१८४॥
जो वेदिक साहित्य पढ़ेंगे। सबसे आगे वही पड़ेंगे,
गौरव-गिरि पर क्यों न चढ़ेंगे?
इस मेरी अन्तिम वाणी का मत करना अपघात,
तुम्हें कहता हूं सच्ची वात ॥१८५॥

जगाया तुमको कितनी बार

वेदों का आदेश वही है। गीता का उपदेश वही है,
अर्जुन को सन्देश वही है।
चलते हो तुम क्यों न कृष्ण की शिक्षा के अनुसार,
जगाया तुम को कितनी बार ॥१८६

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

राज्य बुद्ध ने छोड़ दिया था। घर से नाता तोड़ दिया था,
स्नेह योग से जोड़ दिया था।
धर्म-चक्र के परिवर्तक का भूल गये उपकार,
जगाया तुम को कितनी बार ॥१८७॥

बौद्धसंघ में जाकर मिलना। कुछदिन नहीं वहां से हिलना,
औरश्लोकवार्तिक का खिलना।
कभी कुमारिल के जीवन पर करते नहीं विचार,
जगाया तुम को कितनी बार ॥१८८॥

शङ्कर ने जीवन दे डाला। आत्म-पतन से तुम्हें संभाला,
अन्धकार में किया उजाला।
कुम्भकर्ण की निद्रा से तुम करो न अब तो प्यार,
जगाया तुम को कितनी बार ॥१८९॥

मुझको पतित बताने वालो। पथ में कभी सताने वालों,
पय में कांच मिलाने वालों।
तुम पर मैंने आज दिया है जीवन अपना वार,
जगाया तुम को कितनी वार ॥१९०॥

अस्सी घाव लगे थे तन में। फिर भी व्यथा नहीं थी मन में,
दक्ष खड्ग के सञ्चालन में।
तुम्हें बचाने को चमकी थी सांगा की तलवार,
जगाया तुम को कितनी बार ॥१९१॥

शत्रुहृदय दहलाने वाला। पड़ते ही अकबर से पाला,
चमक पड़ा था जिसका भाला।
उस प्रताप के रण विक्रम को तुम ने दिया बिसार,
जगाया तुम को कितनी बार ॥१९२॥

विश्वविदित शिवराज बली थे। रण में कृष्णसमान छली थे,
जिन के सब उद्योग फली थे।
नहीं सुनी क्या तुम ने उनकी रण में जयजयकार,
जगाया तुम को कितनी वार ॥१९३॥

जिस की तेज खड्ग के आगे। अपना प्राण यवन ले भागे,
फिर भी मारे गये अभागे।
उस बन्दा ने मचा दिया था भीषण हाहाकार,
जगाया तुम को कितनी वार ॥१९४॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वक्त नहीं है यह सोने का, गफलत में अवसर खोने का,
गया जमाना अब रोने का।
दस्युदलन से हलका कर दो आर्यभूमि का भार,
जगाया तुम को कितनी बार ॥१९५

लगादो तीव्र क्रान्ति की आग

निज सन्तति को शिक्षित करना, उच्च भाव से उसको भरना,
नहीं कदापि किसी से डरना।
आज शिगुफ्ता दीख रहा जो उजड़ेगा वह बाग,
लगादो तीव्र क्रान्ति की आग ॥१९६

पास न अस्त्र नहीं सेना है, काम अक्ल से ही लेना है,
जीवन की आहुति देना है।
अपयश-धूम-घटा से पीड़ित मशक जायेंगे भाग,
लगादो तीव्र क्रान्ति की आग ॥१९७

इङ्ग्लिश को रट कर क्या लोगे, अरबी पढ़ क्या जर भर लोगे,
भूखे द्वार द्वार भटकोगे।
आर्य-भारती स न करोगे यदि अविचल अनुराग,
लगादो तीव्र क्रान्ति की आग ॥१९८

तुम्हें अहिंसावाद सिखाऊं, या वीरों का मार्ग दिखाऊं,
कब तक गीत दया के गाऊं ?
रक्त-राग से अभी खेलना है होली की फाग,
लगादो तीव्र क्रान्ति की आग ॥१९९

उषा उदित है करो न देरी, जय की विपुल बजा दो भेरी,
धीरों से आशा है मेरी।
भारत की सौभाग्य-रमा का कर दो अमर सुहाग,
लगादो तीव्र क्रान्ति की आग ॥२००

सुना दो फिर वेदों का नाद

अफरीका के वन्य देश में, चीन और रूसी निवेश में,
ग्रीक और रोमन प्रदेश में।
देना होगा जाकर तुम को, सच्चा शुभ संवाद,
सुना दो फिर वेदों का नाद ॥२०१॥

जो संस्कृत में पूर्ण कुशल हों, वाद-युद्ध में जयी अचल हों,
जिन की वाणी में बहु बल हो।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वे उपदेशक रहें जिन्हें हों निगमागम सब याद,
सुना दो फिर वेदों का नाद ॥२०२
जो पैसों पर ही बिकते हैं, नहीं लक्ष्य पर जो टिकते हैं,
रट कर शब्द बोल सकते हैं।
ऐसे उपदेशक दुनियां को करें नहीं बरबाद,
सुना दो फिर वेदों का नाद ॥२०३॥
उपदेशक को अन्तरङ्ग में, या प्रबन्ध के ही प्रसङ्ग में,
चन्दे के प्रतिमास ढङ्ग में।
रक्खोगे तो तुम चख लोगे दलबन्दी का स्वाद,
सुना दो फिर वेदों का नाद ॥२०४।
शिक्षा पर यदि ध्यान न दोगे, अध्यापक को मान न दोगे,
आदर से उत्थान न दोगे।
तो समझेंगे लोग हो गया आर्यों को उन्माद,
सुना दो फिर वेदों का नाद ॥२०५॥

॥ न चलना नियमों के प्रतिकूल ॥

कारण विना अकड़ने वाले। तुच्छ बात पर अड़ने वाले,
अन्तरङ्ग में लड़ने वाले।
लोगों की भरती से होगा नष्ट सभा का मूल,
न चलना नियमों के प्रतिकूल ॥२०६॥
खुफिया लोग सभा में भर के। दलबन्दी का नाटक करके,
भेदक चोर बनेंगे घर के।
अन्तरङ्ग के तुम चुनाव में कर न बैठना भूल,
न चलना नियमों के प्रतिकूल ॥२०७॥
जिन्हें स्वार्थ की वीमारी है, और वित्त का मद भारी है,
जिन की धूर्त-वृत्ति सारी है।
जाति सभा के अधिकारी वे हों न सभा के शूल,
न चलना नियमों के प्रतिकूल ॥२०८॥
मेरी वुद्धि धैर्य खोती है, दोलायित आशा रोती है,
क्योंकि मुझे शङ्का होती है।
बदों के उपवन में होंगे कण्टक अथवा फूल,
न चलना नियमों के प्रतिकूल ॥२०९॥
सेठों को कुछ पाठ पढ़ाके, संस्थाओं का काम बढ़ा के,
सिर पर बोझ अपार चढ़ा के।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कभी खुशामद के झूले में तुम मत लेना झूल,
न चलना नियमों के प्रतिकूल ॥२१०॥

धर्म से मत रहना तुम दूर

महफिल में शराब पी जा कर, और मांस का भोग लगा कर,
करते हुए पाप धन पा कर।
अन्तरङ्ग की कुर्सी के मत मद में होना चूर,
धर्म से मत रहना तुम दूर ॥२११॥
जो कुछ मुझ को नाम मिला है, वेदवृक्ष का पुष्प खिला है,
जिस से सुरभित हुई हवा है।
तोपों से न मिटा सकता है उसको कोई शूर,
धर्म से मत रहना तुम दूर ॥२१२॥
लेकिन यदि तुम पपित बनोगे। अन्तरङ्ग में जाल तनोगे,
अपयश अपने शिर पर लोगे।
तो गोरव पल भर में होगा गत जैसे काफूर,
धर्म से मत रहना तुम दूर ॥२१३॥
वोटों की साजिश मत करना। कानों में बातें मत भरना,
अधिकारों पर तुम मत मरना।
ऐसा न हो लगें सब कहने आर्य हृदय को क्रूर,
धर्म से मत रहना तुम दूर ॥२१४॥
विष तो मैं ने पी डाला है, बाकी छुरा और भाला है,
वह दिन भी अपने वाला है।
सीने पर पिस्तौल तुलेगी करने को मशहूर,
धर्म से मत रहना तुम दूर ॥२१५॥

देखना डूब न जावे नाव

ग्रह किस्चियन लोग वड़े हैं, पाखण्डों के भंवर पड़े हैं,
स्वार्थ-पवन के वेग कड़े हैं।
यवनों का तूफान प्रलय का दिखा रहा है हाव,
देखना डूब न जावे नाव ॥२१६॥
सर नहीं झूटे तपाक में, यवनों की दम करो नाक में,
ये जल्दी मिल जायं खाक में।
अपने होनहार बच्चों में भर देना यह भाव,
देखना डूब न जावे नाव ॥२१७॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जो संस्कृत का केन्द्र बड़ा है, रूढ़िवाद पर खूब अड़ा है,
जहाँ धर्म का स्तूप गड़ा है।
उस यू० पी० पर समय आप ही देगा डाल प्रभाव,
देखना डूब न जावे नाव ॥२१८॥

ये पञ्जाब प्रान्त के वासी, बनी वीरता जिन की दासी,
हों न भूल कर भी विन्यासी।
इन के अमित शौर्य से होगा दोषों का विद्राव,
देखना डूब न जावे नाव ॥२१९॥

श्रौत धर्म की विजय बोल दो, कर्णपुटी में शहद घोल दो,
बन्द खिड़कियां शीघ्र खोल दो।
कुछ प्रकाश है किन्तु अभी है अन्धकार का दाव,
देखना डूब न जावे नाव ॥२२०॥

हिन्दुओ बनो हिन्द की शान

मेरे इस भौतिक शरीर को, क्षिति जल पावक नभ समीर को,
जीव-विगम से जड़ हकीर को।
देना घृत-चन्दन से सुरभित प्रचित चिता में स्थान,
हिन्दुओं बनो हिन्द की शान ॥२२१॥

पीछे खड़े रहो तुम मेरे, केन्द्र भवन को मिल कर घेरे,
उठ कर करना काम सबेरे।
दयानन्द का भौतिक जीवन पाता है अवसान,
हिन्दुओ बनो हिन्द की शान ॥२२२॥

भारत का उद्धार पूर्ण हो, दस्युवर्ग का गर्व चूर्ण हो,
इच्छा तेरी ईश पूर्ण हो।
निखिल विश्व से फिर भी हम को मिले सतत सम्मान,
हिन्दुओ बनो हिन्द की शान ॥२२३॥

इतना कह कर शान्त हुए वे, आभा से विक्रान्त हुए वे,
नहीं तनिक सम्भ्रान्त हुए वे।
ब्रह्मरन्ध्र से निकला उन के तेजः-पुञ्ज महान्,
हिन्दुओ बनो हिन्द की शान ॥२२४॥

प्रिय जन को निज पुण्य भाग दे, अप्रिय जन पर दुरित त्याग दे,
रसिकों को कवितानुराग दे।
दिव्य कल्पने देखे तेरा जौहर सकल जहान,
हिन्दुओ बनो हिन्द की शान ॥२२५॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

शिवरात्रि के दिन बांटिए

१—मूर्ति पूजा से हानियां
(महर्षि दयानन्द लिखित)

२—महर्षि दयानन्द की मान्यताएं
(स्वा० रामचन्द्र देहलवी लिखित)

३—महर्षि दयानन्द की विशेषताएं
(महात्मा नारायण स्वामी लिखित)

४—विश्व को वेद का संदेश
(पं० भारतेन्द्रनाथ लिखित)

५—आर्य समाज क्या मानता है ?
(पं० मदन मोहन विद्यासागर लिखित)

सभी केवल १०) सैकड़ा

मंगाइए और बांटिए

जन - ज्ञान - प्रकाशन

नई दिल्ली-

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जन-ज्ञान (मासिक)
१५६७ हरध्यानसिंह मार्ग,
नई दिल्ली-५

फरवरी-मार्च
१६७३

रजिस्टर्ड नं०
D—1631

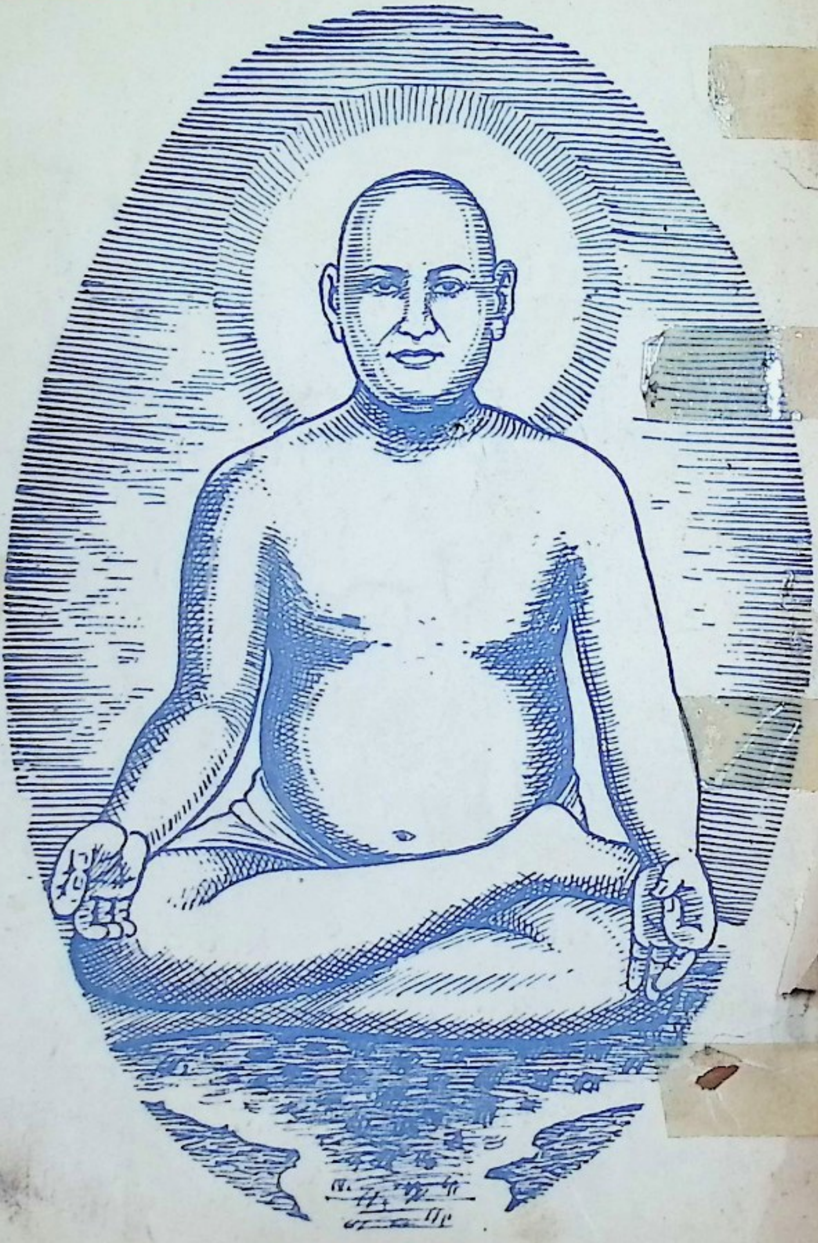

की राह पर चल का व्रत लें ।